Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

COMPILED

* ओ३म् *

* जगन्नाथकुतर्ककुठार *

शम्भुनाथकृपालु मास्टर हाई
स्कूल मुरादाबाद
कृत

जिसमें पं० जगन्नाथदास सेकिंड संस्कृत टीचर
हाईस्कूल मुरादाबाद के सत्यार्थ प्रकाशादि
ग्रन्थों पर किये आक्षेपों के युक्ति व
प्रमाण द्वारा उत्तर दिये गए हैं

CHECKED 1973
Initial

"आर्य्यमित्र यन्त्रालय" मुरादाबाद
में मुद्रित हुआ

नवम्बर सन् १९००
[प्रथमबार १०००]

2.1
63

15,39
38540

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमिका

विदित हो कि कुछकाल से पं० जगन्नाथ दास सेकिन्ड सं
ध्यापक हाई स्कूल मुरादाबादने श्री १०८ स्वामी दयानन्द स
जी महाराज कृत ग्रन्थों में प्रमाण (हवाले) आदिक की औ
मनमानी अशुद्धियां निकाल कई एक छोटे२ ट्रैक्ट छापकर प्रका
करना आरम्भ किया है । जिनको देख कोई२ महाशय जो पूर्ण
तथा उक्त स्वामीजी महराज के सिद्धान्तों से पूरा परिचय न
खते भ्रम में पड़जाते हैं । और हमारे पौराणिक भाई तो यह
लगजाते हैं कि इनका उत्तरही नहीं होसकता—उनही के भ्रम
नार्थ यह पुस्तक निर्माण कीगई है । यद्यपि इस प्रकार की कु
के उत्तर तो बहुधा शास्त्रार्थों व्याख्यानों तथा अनेक समाचार
द्वारा दिये जाचुके हैं । तथापि हम इस अपने ट्रैक्ट द्वारा भी
भाईयों के भ्रम निवारणार्थ सेवा करना उचित समझते हैं, नि
आशा करते हैं कि पाठक गण इसको आदिसे अन्ततक ध्यान
र्वक अवलोकन कर लाभउठा हमारे श्रमको सुफल करेंगे यदि
लिकने हमारे लेखका आदर किया तो हम जगन्नाथादि कृत
ट्रैक्टों के उत्तर छाप अपने-भाइयों की सेवा में धरेंगे ॥

श० न० कृ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

विश्वानि देव सवितुर्दुरितानि परासुव यद्भद्रंतन्न आसुव । ओ३म् शान्तिश्शान्तिश्शान्तिः

कुतर्क १–दयानन्दमत सूची में से

(वादी) प्रथम उत्पत्ति लिखी जीवोंकी फिर अनादि बतलाया पृ० २३२ (प्रतिवादी) यद्यपि प्रथमसत्यार्थ प्रकाश का प्रमाण …था है क्योंकि स्वामीजी महाराजने कई जगह अपने प्रतिकूल … उसको अप्रमाणिककरदिया तथापि वादी काआक्षेप उससेभी … सिद्ध होता है–हम पृष्ठ २३२ का लेख नीचे लिखते हैं–बुद्धि- … हैं, निष्पक्ष जन विचारें कि ला० जगन्नाथदास की यह सरासर …है या सच्चा आक्षेप है "जब जीवोंको ईश्वरने रचा तो विचार … सबको स्वतंत्र ही रख दिया" पृष्ठ २३२

… इसलिये शरीर में जो अधिष्ठाता कर्ता और भोक्ता है उसको … कहते हैं–जोकि एककालमें सब बुद्ध्यादिके कियेकर्मोंका अनु- …रता है चेतन स्वरूप है उसका नाम जीव है सो भिन्न पदार्थ …चारों के मिलानेसे जीवके गुण और जीव कभी उत्पन्न नहीं … इससे यह बात जो कही थी कि चारों के मिलनेसे जीवहोता … बात खण्डित होगई–" पृ० २३१

…महाशयगण ! ध्यान दीजिये पृष्ठ २३१ में साफ लिखा है कि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीव भिन्न पदार्थ है और कभी उत्पन्न नहीं होता -तो भला यह कैसे हो सकता है। कि एकही पृष्ठ के आगे जीव की उत्पत्ति लिखी हो वादीको तनिक तो विचार करना चाहिये था-बात यह है कि जीव ऐसा शब्द है जो हमारी बोलचाल में प्राणधारी और जीवात्मा दोनो के लिये आता है इसलिये पृष्ठ २३२ में जो लिखा है " कि जीवों को रचा " उसका मतलब यही है कि प्राणधारी मनुष्यादि को रचा-ऐसा बोलने का महाविरा है इसके वास्ते हम आपको प्रमाण भी देते हैं-शुकसागर के स्कन्ध ३ अ० २० में (जो भागवत का उल्था है) लिखा है कि—

" उन्होंने मैत्रेय ऋषीश्वरों से पूछा कि महाराज ब्रह्माने संसारी जीवों को किस तरह उत्पन्न किया"-"ब्रह्मा ने उत्पन्न करना जीवों का बन्द करदिया"-"जब मैं दूसरा तन धरकर सतोगुण में जीवों की उत्पत्ति करूँगा"-फिर भागवत स्कंध० ३ अ० ३१ में लिखा है " कि न जीव का जन्म होता है न मरण " बस बात यहहै कि भाषा की बोलचाल में जीवशब्द आत्मा और शरीर दोनोंकेलिये आताहै-शोक कि भाषातक आपको आती नहीं पर झूठी कुतर्कों से बाज नहीं आते-कदाचित् आप हठ किये जावैं कि जीव शब्द केवल जीवात्मा का वाचक है तो भी हमारी कोई हानि नहीं-क्योंकि फिर " जीवों को रचा " इसका यह मतलब होजायगा-कि परमेश्वर ने जीवों को शरीर में प्रवेश किया-आप कहेंगे यह मतलब कहां से निकला-हम कहते हैं कि अपनी माननीय भागवत स्कं० ३ अ० ३१ श्लोक ४५ हीको दृष्टिगोचर कीजिये-वहां जीव का जन्म मरण माना है-परन्तु उसी तरह जैसा कि स्वामीजीका अभिप्राय है अर्थात् जीव के शरीर से संयोग होने को जीव का जन्म और शरीर से वि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योग होने को जीव का मरण कहा है-वास्तव में जीव जन्म व मरण रहित है-अब रहा "उत्पत्ति" शब्द तो यह आपकी कैसी भारी भूल है कि आप इसके अर्थ पर विचार किये बिना झगड़ा करते हैं-"उत्पत्ति" के अर्थ आविर्भाव के हैं बल्कि सांख्य में यही अर्थ लियेगए हैं-ऐसा पद्मकोष में लिखा है-न्याय में जीव के विषय में एक सूत्र है कि "पुनरुत्पत्ति प्रत्यभाव:" अ० १ आ १ सूत्र १९ यहां वादीजी चौंक उठेंगे कि हैं जीवों के वास्ते उत्पत्ति शब्द आया परन्तु इसी सूत्र पर वात्सायनकृत भाष्य देखिये जहां स्पष्ट रीतिसे उत्पत्ति के अर्थ जीव के जन्म या शरीर में प्रवेश होने के माने हैं स्वामीजी महाराज भी "उत्पत्ति" व "विनाश" का अर्थ भूमिका में स्थूल व सूक्ष्म अवस्था की प्राप्ति लिखते हैं न कि अभाव से भाव और भाव से अभाव वहां का लेख यह है—"उत्पत्ति क्या कहाती है कि जो अनेक द्रव्यों के संयोग विशेष से स्थूल पदार्थ का उत्पन्न होना और जब वे पृथक् २ होके उन द्रव्यों के वियोग से जो कारण में उनकी परमाणु रूप अवस्था होती है उसको नाश कहते हैं" (देखो भूमिका पृष्ठ ४० व २०७) प्रिय महाशय-इस बात पर भी जरा ध्यान दीजियेगा कि वादी साहब ने आप ही अपनी प्रश्नोत्तरी में लिखा है "(प्रश्न) उत्पत्ति और विनाश किसको कहते हैं (उत्तर) स्थूल अवस्था में आने को उत्पत्ति कहते हैं और सूक्ष्म अवस्था की प्राप्तिका नाम नाश है किसी पदार्थ की सर्वथा उत्पत्ति व विनाश नहीं होता" जब कि आप स्थूल और सूक्ष्म अवस्थाओं की प्राप्ति को उत्पत्ति और विनाश स्वयं मानते हैं तो फिर जीवों को रचना वा उत्पत्ति कहने में दोष लगाना सर्वथा अयुक्त है इसके अतिरिक्त साधारण साधू जिन्होंने भगव-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्गीतामात्र पढ़ी है जीव को अनादि व अनंतही मानते हैं–तो क्या स्वामीजी महाराज ने कभी गीता का पाठ भी न कियाथा–हाय रे पक्षपात तेरा सत्यानाश हो !–महाशय जी यदि अब भी हमारे सदुत्तर से आपकी शान्ति न हुई हो तो हम आपको उसी सत्यार्थप्र० का ही लेख दिखाते स्वामी जी महराज का जीवात्मा को नित्य ही मानना सम्यक समझाते और आपकी झूठी कुतर्कों पर विद्वानों को हंसाते हैं "और जो आत्मा और परमाण्वादिक जिनसे कि शरीर बना है और परमेश्वर इन नित्य पदार्थों में इनकी बुद्धि कभी नहीं आती" (देखो प्रथम सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ २६८) इससे सम्यक प्रकट है कि यहां आत्मा से अभिप्राय जीवात्मा से ही है क्योंकि आत्मा दो हैं एक जीवात्मा दुसरे परमात्मा–सो परमात्मा अर्थात् परमेश्वर तो परमाणु के आगे लिखा है–अतः यहां आत्मा से अभिप्राय जीवात्मा से हुआ–इसके अतिरिक्त केवल १ वर्ष पीछे अर्थात् सन् १८७६ में छपी भूमिका के पृष्ठ ६१ व १८२ पर जीव को तृकालस्थ व नित्य माना है और सन् १८७७ के चांदापुर के मेलेपर भी जीव को नित्य कहा था (देखो Triumph of truth पृष्ठ ७६) यदि अब भी आपके मनका अन्धकार निवृत न हुआ तो हम समझ लेंगे कि आपका मन स्वाभाविक कुटिल होने से कभी भी पक्षपात रहित न होगा।

कुतर्क २ दयानन्दमत सूची में से

(बादी) कुम्भकरण की मूंछ का लम्बा योजन एक बनाया। तुलसीदास को दयानन्द ने मिथ्या दोष लगाया॥ प्रथम स० प्र० पृष्ठ ६५४।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(प्रतिवादी) स्वामीजी महाराजका काम किसी पर दोषारोपण करना न था पर यदि लोग आपही आप ऐसा समझ बैठें तो इसका क्या उपाव—वादी जी ! स्वामी जी महाराज ने मिथ्या दोष नहीं लगाया-कृपा करके बम्बई जगदीश्वर प्रेस० सं० १९१८ की छपी हरिप्रसाद भागीरथ की छपाई तुलसीकृत रामायण को दृष्टिगोचर कीजिये आप का भ्रम दूरहो जायगा—उसमें लिखा है कि—

अति अकार तनु चिनै न जाई। चौतिस योजनकी चकुलाई ॥
योजन तीन तीन के काना। बारह योजन बाहु अजाना ॥
सत्रह योजन जांघ लम्बाई। शतयोजन तनु बरणिन जाई ॥
दुइ योजन कै नाक जो बाढ़ी। योजन एक मूंछ रहै ठाढ़ी ॥
सुन्दर काण्ड पृ० ४३६ ॥

परन्तु इसमें यह उत्तम काम किया है कि क्षेपक अलग करदिये हैं-जो प्रायः रामायणों में नहीं किये गये हैं-यद्यपि यह वार्ता (कुम्भकरण के शरीर का विस्तार) इस यन्त्रालय की छपी पुस्तक में क्षेपक में है-पर इससे यह तो स्पष्ट विदित है कि और रामायणों में क्षेपक वार्ता बिलग नहीं की गई और इस दशा में यह पहचानना कब सम्भव हो सकता है कि अमुकविषय मूल में है या क्षेपक में-यदि दोष लगाने के कारण हुए तो वही महात्मा जो सैकड़ों क्षेपक मिलाकर इसकी भी रेढ़ लगाने से बाज न रहे-फिर इसके अनंतर लंकाकाण्ड में मूल के अन्दर निम्न लिखित चौपाइयों को भी देखिये-जिससे कुम्भकरण के नीचे लिखे विस्तारकी पुष्टि होती है-आपही कहिये कि इसमें तुलसीदासजी महाराज ने ही कौनसी कसर रक्खी है-भला यह कभी सत्य मानी जासकती है और पहली चौपाई से इसमें क्या न्यूनता है—

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुम्भकरण रण रंग विरोधा । सन्मुखचला काल जनुक्रोधा ॥
कोटि २ कपि धरि धरि खाई । जनु टीढ़ी गिरि गुहा समाई ॥
कोटिन गहि शरीर महँ मर्दा । कोटिन मींज मिलायेसिगर्दा ॥
मुख नासिका श्रवणकी बाटा । निकसिपरहिं भालुकपि ठाटा ॥
लंका काण्ड पृ० ५२३ ।

कुतर्क ३—दयानन्द मत सूची मेंसे

(वादी) नारायण नाम ईश्वरकाहै यहपहले छपवाया । "नारायण नमः"को फिर क्यों वेद विरुद्ध बताया॥ स०प्र०पृ० २६ (प्रतिवादी) भला चन्द्रपर धूर फेंकने से कहीं चन्द्र छिप सकता है—उलटा फेंक ने वाले कीही आंखों में पड़ेगी—महाशय जी—स्वामीजी ने यह कहां लिखाहै कि नारायणशब्द वेदविरुद्ध है—पृष्ट २६ में तो केवलयहलिखा है—कि " सीता रामाभ्यांनमः " " नारायणायनमः " " राधाकृष्णाभ्यां नमः " " गणेशाय नमः " " शिवाय नमः " " भैरवाय नमः " "हनुमतेनमः"इत्यादिसे जो मंगलाचरण करते हैं सोंपिना मंगलाचरणवेद शास्त्र विरुद्ध है वहयह कब लिखते हैं—कि नारायण नाम वेदविरुद्ध है—और आपने केवल " नारायण " परही आक्षेप क्यों किया—क्या स्वामी जी ने गणेश व शिवादि शब्दों को ईश्वर वाची सिद्ध नहीं किया है—धोखा न दीजिये स्वामी जी का अभिप्राय शिवादि नामों को वेद विरुद्ध बताने अथवा खण्डन करनेका नहीं है—किन्तु ईश्वर के स्थान में नवीन देवी देवताओं के नामसे मंगलाचरण करने के अभिप्राय से निषेध किया है अर्थात् केवल इस नवीन परिपाटीको दूषित बताया है—क्यों कि इस प्रकार का मंगलाचरण आर्ष ग्रन्थों के प्रतिकूल है—ऋष्युक्त प्राचीन ग्रन्थों में तो ओ३म् वा अथ शब्द से ही मंगलाचरण कियागया है (जैसा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि स० प्र० में स्वामी जी ने आगे बताया है) इसके अतिरिक्त यहभी विचारणीय है-यद्यपि यहठीक है कि शिवादि नाम ईश्वर वाची हैं-परन्तु आजकल मतवादी लोग प्रायः इनसे अपने अभीष्ट देवी देवोंका ग्रहण करते हैं जिनसे एक प्रकार का परस्पर विरोध फैलता है और न ऋषिप्रणीत ग्रन्थोंमें ऐसा मंगला चरण मिलता है-अतः प्राचीन वैदिक मंगला चरण की परिपाटी का त्याग नवीनपरिपाटी ग्रहण करना व्यर्थ व अनावश्यक है-और साथही इसके यह सन्देह है कि कहीं लोग इनसे ईश्वर के बदले मनमाने देवताओंका ग्रहण न कर बैठें-जिस रोग को स्वामी जी निवृत्त करना चाहते हैं वहीरोग आचिमटे-हरबात को प्रसंग देखकर लिखना योग्य है बिना विचारे लिखना अपनी मूर्खता प्रकट करना है।

कुतर्क ४—दयानन्द मत सूची मेंसे

(वादी)-"नमःशिवाय" यह वाक्य वेद में हमने तुझे दिखाया-तेरे गुरूने निन्दा से उसको क्या लाभ उठाया। स० प्र० पृष्ठ ३४६

(प्रतिवादी) झूंठे आक्षेप करके महात्माओं की निन्दा करना तो आप ने अपना कर्त्तव्य बना रक्खा है-परन्तु याद रखिये ऐसे कर्मों का परिणाम भला नहीं-धर्म से कहिये कि यहां स्वामीजी ने " नमः शिवाय " की निन्दा की है या यह लिखा है कि जैसे वाममार्गी मंत्रोपदेश करके धन हरण करते हैं वैसेही शैव भी "ओ३म् नमः शिवाय" इत्यादि मंत्रो से करते और मिट्टी व पाषाण आदि के लिङ्ग बनाकर पूजते हैं-भला कोई पूंछे कि इससे वादीजी के आक्षेप का लेश मात्र भी सम्बंध है और वादी साहबके छुद्र जिनकी बुद्धि सराहने योग्य है कोई बुद्धिमान् इससे कदापि यह समझ सकता

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि स्वामी जी महाराज ने उक्तमंत्र की निन्दा की है ? हां शैवों की तो जो अपने इन कर्मों के कारण अवश्य निन्दनीय है बुराई दिखाई है जिन्होंने रत्नों को कीचड़ में डाला अर्थात् वेद मंत्रोंसे अपने अभीष्ट देवी देवताओं का ग्रहण करते और दूषित कर्मों में उनका प्रयोग करते हैं—परन्तु इससे यह आशय निकालना कि स्वामी जी ने "नमः शिवाय" मंत्रकी निन्दा की है आक्षेप कर्ता की विद्या व बुद्धि का भली प्रकार परिचय देता है।

कुतर्क ५—दयानन्द मत सूर्चा मेंसे

(वादी) कहे त्रिकालदर्शी ईश्वर को उसको मूर्ख बताया। निजमुख मूर्खबने स्वामीजी आप वही छपवाया॥ स.प्र. पृष्ठ १९४॥

(प्रतिवादी) यहां आपने पब्लिक को खूब धोखा दिया—पर अब आपकी चालाकियों का समय आपहुंचा है—हम एक २ आक्षेप का ऐसा मुख मर्दन करेंगे कि आप भी याद करें—अब हम पृ० १९४ का लेख नीचे उद्धृत करके दिखलाते और पबलिक को वादीकी अज्ञता पर हंसाते हैं "ईश्वरको त्रिकालदर्शी कहना मूर्खताका काम है क्योंकि जो होकर न रहे वह भूतकाल और न होके होवे वह भविष्यत् काल कहाता है—क्या ईश्वर को कोई ज्ञान होके नहीं रहता अथवा न होके होता है कभी नहीं—परमेश्वर का ज्ञान सदा एकरस, अखण्डित वर्त्तमान रहता है—भूत, भविष्यत् जीवों के लिये हैं—हां जीवोंके कर्मकी अपेक्षासे त्रिकालज्ञता ईश्वर में है स्वतः नहीं'

महाशयगण विचारिये—स्वामी जी ने तो यह कहा है कि ईश्वर की अपनी अपेक्षा त्रिकाल दर्शित्व नहींहै क्योंकि वह तो सदा एकरस वर्त्तमानहै देशकाल और वस्तु इन सबसे अपरिच्छिन्नहै और सर्वकाल

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की बातें ठीक उसी प्रकार जानता है जैसे कि हमलोग किंचित् वर्तमान काल की हां जीवकी अपेक्षासे कहो तो ठीक है क्योंकि भूतादि काल जीवों के ही लिये हैं न कि ईश्वर के लिये आप बात को मर्म समझ बिना पक्षपात से न लिखा कीजिये—जिस से आप को पीछे लज्जित न होना पड़े भला कहिये तो सही स्वामी जी ने यहां ईश्वर की त्रिकालज्ञता का खण्डन किया है वा यह कूट वार्त्ता समझाई है शोक कि आपने आग्रह ग्रस्त होकर स्वामी जी पर तो आक्षेप किया—परन्तु राजर्षि भर्तृहारि जी को छोड़ दिया—जो अपने मंगला चरण में ईश्वर को देशकाल के बन्धन से पृथक् सिद्धकर रहे हैं—यथा।

देशकालाद्य वच्छिन्नानन्ता चिन्मात्र मूर्त्तये।
स्वानुभूत्यैक साराय नमः शान्ताय तैजसे॥

क्यों महात्मा जी अबभी आप अपनी आंखों से पक्षपात की पट्टी न खोलेंगे—हमारा काम मित्र भावसे आपको समझाने का है मानना न मानना आप का काम है—

कुतर्क ६ धर्म संतापमें से ।

(वादी) घूमना भूमिका जो उसने लिखा निर्मूल है जोकि हैं वेदज्ञ यह उनके हृदय में शूल है।

दूसरा सत्यार्थ प्र० ४६० देखो। सिद्धांत शिरोमणि गोलाध्याय दूसरा सत्यार्थ प्रष्ठ २२८ सिद्धांत शिरोमणि गोलाध्यायमें "भूर चला स्वभावतः" लिखा है अथर्व वेद में "ध्रुवा प्रथ्वी इत्यादि" ऐसी श्रुति है—

(प्रतिवादी) वेदज्ञों के हृदय में तो कदापि शूल नहीं क्यों कि वेद में तो स्वयं लिखता है कि:—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यागौर्वर्त्तनिं पर्य्येति निष्कृतं पयोदुहाना व्रतनीर वारतः।
सा प्रब्रुवाणा वरुणाय दाशुषे देवेभ्यो दाशद्धविषा विवस्वते ॥
ऋ० अ० ८० अ० २ व० १० मं १ ॥

हां किन्तु वेदाज्ञोंके हृदयमें शूलहो तो आश्चर्य्य नहीं और सि० शि० के टुकड़े "भूरचला स्वभावतः" का जो आपने प्रमाण दिया तो यह आपकी बुद्धिमानी है—या किसी कच्चेके मुखसे केवल इतना टुकड़ा सुन बिना विचारे कि यह किस स्थल का है और किस आशय से वहां लिखा है अपने पक्षका पोषक समझ लिखमारा—यदि आप पुस्तक में इसका प्रसंग देखलेते तो इसके प्रमाण देनेका कभी साहस न करते—अब हम उक्त स्थल के सम्पूर्ण श्लोकों को उद्धृत कर प्रसङ्ग दिखाते और वादी की अज्ञतापर बुद्धिमानों को हंसाते हैं ॥

यथोष्णतार्कानलयोश्च शीतता, विधौद्रुतिःके कठिनत्व मश्मनि।
मरुच्चलो भूरचला स्वभावतो, यतो विचित्रावत वस्तुशक्तयः ॥
आकृष्टि शक्तिश्च महीतयायत्, स्वस्थं गुरु स्वाभिमुखं स्वशक्त्या।
आकृष्यते तत्पततीवभत्पति, समे समन्तात् निपतत्वियंख ॥

भुवनकोशः पृष्ठ १० नारायण यंत्रालये कलिकाता जीवानंद प्रकाशितः

(अर्थ) जैसे सूर्य्य अग्निमें गर्मपन, चन्द्रमा में ठंडापन, जलमें पतलापन, और पत्थर में कठिनता, वायुमें चलता, पृथ्वी (मट्टी) में अचलता स्वभाव से है, सब वस्तुओंकी शक्ति भिन्न २ हैं जिससे कि पृथ्वीमें पृथ्वीपन होनेसे आकर्षण शक्तिहै इसहेतु गुरु पदार्थ को अपनी ओर लेआता है, वास्तवमें पृथ्वी, आकर्षण करती है, परन्तु

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोगोंको गिरतासा पदार्थ मालूम होता है ॥

पाठकगण ! विचारिये यहांतो केवल द्रव्योंके गुण अर्थात् अग्नि में ऊष्णता, जलमें पतलापन, पत्थर में कठिनता, वायु में चलता पृथ्वी (मट्टी) में अचलता स्वभाव से है यह दिखाकर बताया है कि इसीप्रकार भूमिमें आकर्षण शक्ति स्वभावसे है जिससे वहवस्तु ओंको अपनी ओर खैंचती है—यहां पृथ्वी और सूर्यादि की चालों अथवा घूमनेका प्रकरण तो नहीं है पृथ्वी (मट्टी) स्वभावसे (स्वयं) चलने वाली वस्तुनहीं यह हमभी मानते हैं—परन्तु इससे और पृथ्वी के गोलेके सूर्य की आकर्षण शक्ति द्वारा सूर्यके चारों ओर घूमने से सम्बन्धही क्या—रहा अथर्ववेद का "ध्रुवा पृथ्वी इत्यादि" मन्त्र इसका उत्तर "जगन्नाथभ्रम नाशक" में शंकानं०३५केउत्तरमें देदिया है यहां केवल इतना कहना इच्छित है कि जगत् शब्दका धात्वर्थ "गच्छतीति जगत्" ही चलनेवालाहैतो फिर स्थिर किस प्रकारहोसक्ता है—अब यदि पृथ्वी के सूर्यकी परिक्रमा करने का विषय देखना चाहते होतो सिद्धान्त शिरोमणि, सूर्य्य सिद्धान्त व आर्य्य भट्ट का प्रमाण ज्योतिष चंद्रिका बाबू गंगाप्रसादएम०ए०कृत में अवलोकन कर अपने मनका अंधकार दूर कीजिये—

कुतर्क ६—धर्म सन्ताप में से

(वादी) पंचविंशे श्लोक सुश्रुत के शरीर स्थान में। लिखते हैं स्वामीजी कहिये ज्ञान या अज्ञान में स० प्र० पृष्ठ ४६।

(प्रतिवादी) यह श्लोक सुश्रुत सूत्र स्थान अध्याय ३५ में उपस्थित है प्रेसमैनों की कृपा से पता अशुद्ध छप गया था—अब पञ्चम् प्रतिमें शुद्ध करदिया गया है—ऊपर लिखित पते से देखलीजे आपका

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भ्रमदूर होजायगा-कहिये महात्माजी क्या छापेकी अशुद्धियें भी आक्षेप गणना में हैं धन्य हो ! शरीर स्थान में न सही सूत्र स्थान मे सही है तो सुश्रुतही में-हमें आश्चर्य्य है कि आप ऐसे आक्षेपों से अपना और हमारा समय वृथा खोने के अतिरिक्त क्या परिणाम निकालते हैं—परन्तु जिसका स्वभावही कुतर्क करने का हो उसका क्या उपाय ?

कुतर्क ७ धर्म सन्ताप में से ।

(वादी) पाप बिन भोगे नहीं छुटता है यह कहना अशुद्ध-हैं वचन उनकेही ग्रंथों में अनेक इसके विरुद्ध स० प्र० पृष्ठ ३२२, ३७८

(प्रतिबादी) वास्तव में कर्म का फल भोगनाही पड़ता है परमेश्वर की न्याय व्यवस्थासे कोई मनुष्य पाप करके फल से बच नहीं सक्ता-यदि परमेश्वर किये पापों का दंड न दे तो प्रथम तो उसका न्याय गुण नष्ट होजावे द्वतीय पाप का दंड न मिलने के सहार लोग पाप कर्म करने मे तनिक भी भय न करें जिससे पृथ्वी पर पाप कर्म में अत्यन्त प्रवृत्ति होजावे-आप इस सिद्धान्त के प्रतिकूल होकर क्यों ईश्वर को अन्यायी बना रहे और मनुष्यों की पाप कर्म में रुचि बढ़ा रहे हैं क्या आपने नहीं सुना कि:—

"अवश्यमेवहि भोक्तव्यं कृतंकर्म शुभाशुभम्"

अर्थात् भले बुरे कर्मोंका फल अवश्यही मिलेगा और भी कहा है कि।

" अधर्मेणैधते तावत्ततो भद्राणि पश्यति ।
ततःसपत्नान् जयति समूलस्तु विनश्यति" ॥

अर्थात् जब मनुष्य धर्म को छोड़ अधर्म में प्रवृत होता है तब छल कपट और अन्याय से पर पदार्थों का हरण कर लेता है और

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनसे कुछ सुख भी भोगता है परन्तु पश्चात् जैसे मूल सहित वृक्ष उखड़कर गिर जाता है वैसेही मूल सहित उस अधर्म करने वाले पुरुष का नाश होजाता है।

फिर मनु अ० १२ श्लो० ८ में लिखा है :—

मानसं मनसैवाय मुपभुङ्क्ते शुभाशुभम्।
वाचवाचा कृतंकर्म कायनैव च कायिकम्॥

अर्थात्–मन से कहे हुए शुभाशुभ कर्म का फल यह मनही से भोग करता है वैसेही वाणी से कहे हुए का वाणी से और शरीर से किये हुए का शरीर से भोग करता है।

यह भी विचार कीजे कि जब एक छोटे से अध्यक्ष को भी अन्याय करने से संसार में निन्दा होती है तो फिर ईश्वर में यह अन्याय क्यों लगाते हो–कदाचित् आपका सिद्धान्त है कि "चाहे अपनी नाक कटे तो कटे पर पड़ोसी की बदशुगनी अवश्य हो" स्वामीजी महाराजसे विरोधकरना चाहे उनका सत्योपदेशही हो परन्तु शोक कि आपने स्वयंही अपनी "गुलजारे हिदायत" नामक चौवरकी पुस्तक में दो बोली बोली हैं जो यह हैं कि।

छूटेंगे अगर कभी नहीं पाप। किसतरह नजात पायेंगे आप॥
मुंसिफ़ जो करेगा रूरियायत। होगा उसे दोजहां में ज़िल्लत॥

अर्थात् ईश्वर यदि पाप क्षमा न करे तो मनुष्य की मुक्ति कैसे हो फिर लिखा कि यदि न्यायकर्ता तरफ़दारी करेगा तो उसकी बड़ी अप्रतिष्ठा होगी–इसी योग्यता पर स्वामी जी से विद्वान् के लेखों में त्रुटि निकालने का इरादा है–पर हम फिर कहेंगे कि "जादू वह जो सिरपे चढ़के बोले" यहां तो आपने स्वयं मान लिया कि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि ईश्वर किसी की तरफ़दारी करेगा तो उसकी निन्दा होगी तो फिर ईश्वर अपना न्यायत्याग पापोंकादंड न देगा ऐसी वृथा बकवास क्यों करते हो-यह तो ठीक है कि पश्चाताप व ईश्वर भक्ति इत्यादि से मन में पापकी वासनायें तो निवृत होजाती हैं जिससे मनुष्य भविष्यत में पापकर्म से बचजाता है परन्तु जो कुए में गिरा उसके तो हाथ पैर टूटनहीं हैं-अर्थात् जिसने दुष्कर्म किया उसे तो उसका फल भोगनाही पड़ेगा और आपने यह जो लिखा कि स्वामीजी के ग्रंथों में पाप विनाभोगे नहीं छुटता इसके विरुद्ध अनेक वचन हैं तो महात्मा जी ! आप उनका अभिप्रायही न समझे होंगे और उनका उत्तर भी हम उसही समय देंगे जब आप उनको उद्धृत करेंगे ॥

कुतर्क ८-दयानन्दमत सूची मेंसे ।

(वादी) वेदों की उत्पत्ति लिखी अच्छा नित्यत्व दृढ़ाया । ऋ० भा० भू० पृ० ९ ।

(प्रतिवादी) मिथ्या दोषा रोपण से हाथ उठाइये और झूंठी बातें न बनाइये-भूमिका में कहीं नहीं लिखा कि वेद अनित्य हैं— बरन भूमिका में तो यह स्पष्ट लिखा है कि सृष्टि की आदि में ईश्वर जीवों के निमित्त वेदों को प्रकट करता है-प्रलय में ईश्वर के ज्ञान में रहते हैं-इससे वेद नित्य हैं उनका नाश कभी नहीं होता-अब हम सर्वसाधारण के अवलोकनार्थ भूमिका का लेख उद्धृत करते और पुष्टि में सत्यार्थप्रकाश आदि के प्रमाणभी लिखते हैं-देखो वेद भाष्य भूमिका पृष्ठ ११ में लिखा है कि " जैसे मनुष्य के शरीर से श्वास बाहर को फिर भीतर को जाती है इसी प्रकार सृष्टि की आदि में ईश्वर वेदों को उत्पन्न करके संसार में प्रकाश करता है और

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रलय में वेद संसार में नहीं रहते परन्तु, उसके ज्ञान के भीतर वे बने रहते हैं-बीजांकुरवत् जैसे बीजमें अंकुर प्रथमही रहता है-वही वृक्षरूप होकर फिर भी बीज के भीतर रहता है इसी प्रकार वेद भी ईश्वरके ज्ञानमें सर्वदिन बने रहते हैं-उनका नाश कभी नहीं होता क्यों कि वह ईश्वरकी विद्या हैं इससे उनको नित्यही जानना " फिर भूमिका पृ० १५ में लिखा है " वेद तो ईश्वर की नित्य विद्या है— उसकी उत्पत्ति व अनुत्पत्ति(जिस अर्थमें तुम लोग लगातेहो)हो ही नहीं सकती-परन्तु हम जीवों के लिये ईश्वर ने वेदों का प्रकाश किया है " यही नहीं बल्कि भूमिका पृष्ठ २७ से ४१ तक वेदों के नित्यत्व पर विचार किया गया है जहां प्रबल युक्ति व प्रमाण से वेदों को नित्य सिद्ध किया है फिर सत्यार्थ प्र० पृ २१८में लिखा है " (प्रश्न) वेद नित्य हैं वा अनित्य (उत्तर) नित्यहैं क्यों कि परमेश्वर के नित्य होने से उसके ज्ञानादि गुण भी नित्य हैं " फिर उपदेश मञ्जरी के (जो स्वामीजी के पूनाके १५ व्याख्यानों का संग्रह है) पृ० ४५ में लिखा है " वेद व सृष्टि का सिर्फ आविर्भाव व तिरोभावही होता है"

अब बुद्धिमान् सज्जन निष्पक्ष होकर विचारें-कि वादीने ग्रन्थ कर्त्ताके आशय विरुद्ध अपनी चालाकी से एक झूंठी बात गढ़कर पबलिक को कैसा धोखा देनेका साहस किया-परन्तु ऐसे असत्य और निर्मूल आक्षेपों से वादीअपनी अज्ञता प्रगट करने के अतिरिक्त और क्या लाभ उठासकता है-रहा उत्पत्ति शब्दसे वेदोंका उत्पन्न होना तो"तस्मात् यज्ञात् इत्यादि (यजु०अ०३१ मंत्र)" वेद मंत्रसे ही प्रकट है-परन्तु उत्पत्ति के अर्थ आविर्भाव के हैं-सांख्य में यही अर्थ लिखेगए हैं-ऐसा पद्मकोश में लिखा है और ऐसाही अर्थ इस के पदार्थ से निकलता है-और भूमिका में तो यह दोष आही नहीं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सका क्योंकि उस में तो पृ० ४० में यही अर्थ लिखगए हैं वहां का लेख यह है " उत्पत्ति क्या कहाती है कि जो अनेक द्रव्योंके संयोग विशेषसेस्थूल पदार्थका उत्पन्न होना और जव वे पृथक्‌कर होके उन द्रव्यों के वियोग से जो कारण में उनकी परमाणु रूप अवस्था होती है उसको नाश कहते हैं"-इसपर भी यदि वादी हट दुराग्रह किये जावे तो हम वादीको वादी केही पेचपर गिराते और विचार शील पाठकों को उसके आक्षेप की असत्यता दिखलाकर उसपर संसाते हैं वादी ने स्वकृत आर्य्य प्रश्नोत्तरी में उत्पत्ति व विनाश का लक्षण यों लिखा है" (प्रश्न) उत्पत्ति व विनाश किसको कहते हैं (उत्तर) स्थूल अवस्था में आने को उत्पत्ति कहते हैं और सूक्ष्म अवस्थाकी प्राप्तिका नाम नाश है-किसी पदार्थ की सर्वथा उत्पति व विनाश नहीं होता " तो अव विचारणीय है कि जब वादी स्वमेव स्थूल व सूक्ष्म अवस्थाओं की प्राप्ति को उत्पत्ति व विनाश मानता है तो सृष्टि की आदि में वेदों के प्रकट होने को उत्पत्ति कहने में दोष लगाना वादी की वाम बुद्धि का फल है ।

कुतर्क ९ धर्म सन्ताप में से

(वादी) होम का फलवायु शुद्धि स्वामी ने तेर लिखा-सत्य है उसका कथन तो मंत्र पढ़ना है वृथा-सोच तो वलिवैश्य का ठठ्ठा उड़ाया उसने क्या-लोप सत्कर्मों का वम करना उसे स्वीकार था-द्वतीय स० प्र० पृष्ठ ४२ पृथम स० प्र० पृष्ठ ४९ ।

(प्रती वादी) मुन्शी साहव ! स्वामीजी महाराज ने यह नहीं लिखा कि हवन के फल केवल वृष्टि व अन्नादिकी वृद्धि व जलवायु की शुद्धि ही है किन्तु उन्हो ने इसके और भी अनेक उत्तम फल

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनाये हैं (देखो भूमिका पृष्ठ ५७) वृष्टि औषध्याधि की वृद्धि व जलवायु अन्नादि की शुद्धि तो प्रत्यक्ष फल हैं आपने इनके प्रति कूल होकर केवल स्वामीजी महाराज से बैर न बांधा किन्तु सम्पूर्ण ऋषि मुनियों से भी क्यों कि सम्पूर्ण ऋषि मुनियों ने एसा माना है-शथ पथ ब्रा० का० ५ अ० ३ में यह आशय है कि हवन के द्रव्य जो अग्नि में डालेजाते हैं उनसे भाफ उत्पन्न होकर आकाश में चढती और वायु के आधार से मेघ मण्डल में रहती है फिर मेघ वृष्टि द्वारा औषधि व अन्नकीवृद्धि व शुद्धिके कारण होतेहैं-क्योंकि हवनमें अधिक ऊष्णता व वायुकी पवित्रता होनेसे आकाशको भी अधिक भाफ चढ़ती है-ऐतरेय ब्रा० प० १ अ० २ में भी लिखा है कि यज्ञ मनुष्यों के समूह के सुख के लिये होता है यहीनहीं किन्तु मनु० अ० ३ श्लो० ७६ में लिखा है कि:-

अग्नौप्रास्ता हुतिःसम्य गादित्य मुप तिष्ठते
आदित्याज्जायतवृष्टि वृष्टेरन्नं ततःप्रजाः

अर्थात् अग्निमें डालीहुई आहुति सूर्य्यके समीप जातीहै सूर्य्यसे वर्षा होती है वर्षासे अन्न उत्पन्न होता है और अन्नसे प्रजा उत्पन्न होतीहै-भगवद्गीता अ०३श्लो० १४ में भी लिखा है कि:-

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्या दन्नसंभवः
यज्ञाद् भवतिपर्जन्य यज्ञः कर्म समुद्भवः

अर्थात्-अन्नसे प्राणी उत्पन्न होते हैं-मेघ से अन्न उत्पन्न होता है-यज्ञ से मेघ होता है और यज्ञकर्म से-एसाही शङ्कर स्वामी ने उक्त श्लोक की व्याख्या में माना है-और एसाही विष्णुपु० अ०६ में लिखाहै रहायज्ञमें वेदपाठ सोभीव्यर्थनहीं उसके निम्नलिखितलाभहैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१-हाथसे हवन करें मुखसे भी उत्तम कर्मवेद पाठ होता रहे।

२-वेद पाठ की प्रणाली से वेदोंकी रक्षा और साथही ईश्वरकी स्तुति प्रार्थना उपासना भी होती रहे।

३-किन्हीं २ मंत्रो में जो हवन के लाभ वर्णित हैं उन का भी स्मरण होता रहे।

४-बारम्बार पाठ करने से वेद कण्ठस्थ रहे तथा उनसे ज्ञान भी प्राप्त होता रहे।

५-ईश्वर का अस्तितत्व भी विदित होता जाय जिस से कोई नास्तिक न बने पावे-और ईश्वर की प्रार्थना पूर्वक ही सम्पूर्ण उत्तम कर्मोका आरम्भ कियाजाता है यह तो विदित ही है।

६-वेद व ऋषियों की आज्ञाका पालन भी हो-इत्यादि लाभ यज्ञ में वेद पाठ के हैं-स्वामीजी महाराज का काम सत्कर्मोका लोप करना नथा किन्तु उनके करने की प्रबल आज्ञा देतेहुए उन्होंने तर्क से भी पुष्ट किया है और अंग्रेजी शिक्षादि के प्रभाव से लोगों की ऐसे सत्कर्मों में जो अश्रद्धा व अरुचि होगईथी उनकी पुनः प्रबल युक्ति व प्रमाण से श्रद्धा व रुचि कराई आप को शुद्ध हृदय से स्वामीजी को धन्यवाद देना चाहिये जिन्हों ने डूबत धर्म को बचाया न कि "उलटा चोर कुतवाले डांड" इस कहावत को अपने पर चारितार्थ करना।

कुतर्क १० धर्म सन्ताप में से

(वादी) हो असत् मिश्रित जो सत् वह सत्य है जव विष समान्-तो तू अपने स्वाम का सब लेख अनादरणीय मान-उसके ग्रन्थों में तुझे स्वीकार है अनृत निदान-छोड़दे अब सर्वथा उनको जो है तू बुद्धिमान्-स० प्र० पृष्ठ ७१।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(प्रतिवादी) पं० जी साहब! विचार बुद्धि को हाथ से न दीजे- पूर्वापर प्रसंग देखिये पृष्ठ ७१ में तंत्र ग्रन्थ पुराणादि के लिये विष-युक्त अन्न का दृष्टान्त है न कि ऋषि प्रणीत ग्रन्थों के लिये-पुराणों में ईर्षा द्वेषसे अपने देवताकी स्तुति दूसरे की निन्दारूप विष भरा है जिससे पुराणों का सत्य विषयभी विषयुक्त अन्न तुल्य होगया है जैसे लिङ्ग पुराण में सारी कथा नृसिंहावतार की तो लिखी परन्तु द्वेष से अपने देवताका महत्व और दूसरेका क्षुद्रत्व दिखाने को अन्त में यह और लिखदिया कि जब नृसिंहने बड़ा विकाल रूप बनाया और बहुत गरजा जिससे देवतोंने भयभीत होकर शिवके पास अर्दास की तो शिवजी ने प्रथम बीरभद्र को उसे समझाने को भेजा जब नृसिंह ने बीरभद्र के कहने से वह विकाल रूप दूर न किया तो बीरभद्र ने शिव तेज लेकर नृसिंह को मारडाला—और शिवजीने नृसिंह की खाल निकलवाकर धारण की (देखो अध्याय ६) इसी प्रकार पुराणों में ईर्षा द्वेष की गन्ध एक २ शब्द से आती है-अस्तु परन्तु ऋषि प्रणीत ग्रन्थों में जो कुछ कहीं भूल भी हो वह ईर्षा द्वेषादि से नहीं किन्तु अल्पज्ञतादि से है इस वास्ते उसे विष नहीं कहसक्ते किन्तु उसे ऐसा समझना चाहिये जैसे किसी औषधि में कुछ मट्टी कंकर मिल गया हो तो उसको निकालकर औषधि मात्र ग्रहण करना योग्य होता है इसी प्रकार अल्पज्ञता या दूसरे के मिलाए हुए मट्टी कंकर रूप दोष आदि को (यदि कोई हो) निकाल कर औषधि रूप आर्ष ग्रन्थ पढ़ने चाहिये पुराणों के विष का विषय सविस्तर देखनाहो तो पं० तुलसीराम स्वामी कृत "भास्करप्रकाश" खंड १ पृष्ठ ६० व खंड ४ पृष्ठ २७ अवश्य अवलोकन कीजिये-रहे स्वामी जी महाराज के ग्रन्थ तो उनमें यदि कोई अशुद्धि निकल भी आवे

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो क्या आश्चर्य है आर्य्यसमाज उनको सर्वज्ञ परमेश्वर तो नहीं मानता और न स्वामीजी को ही यह घमंड था कि मेरे लेख में एक भी अशुद्धि का होना असम्भव है किन्तु उन्होंने तो स० प्र की भूमिका में स्वयमेव लिखा है कि यदि मेरे ग्रन्थमें भूल चूक हो अथवा प्रेस की असावधानी से कोई अशुद्धि रहगई हो वह जानने जनाने पर ठीक करदी जावेगी क्योंकि असत्य को त्याग सत्य का ग्रहण करना चाहिये वलकि आर्य्यसमाज की नियमावलि में यह एक नियम है परन्तु यदि कोई अशुद्धि इस प्रकार की निकलें तोवह प्रेस की भूल आदि कारणों से ही होगी नकि पक्षपात ईर्षा द्वेषादि से अतः स्वामीजी महराज के ग्रन्थ त्यक्तव्य नहीं होसक्ते।

कुतर्क ११ धर्म सन्ताप में से

शूद्र था जानश्रुति यह कैसा अनृत लिख दिया–है प्रकट छान्दोग्य से तेरे गुरू की अज्ञता–स० प्र० पृष्ठ ३३६।

(प्रतिवादी) छान्दोग्य उपनिषद का तनिक आंख खोलकर पाठ कीजै–वहां रैक्य मुनि ने जानश्रुति का शूद्र कहकरही संबोधन किया है–यदि जानश्रुति क्षत्रीय होता तो मुनि उसको अवश्य क्षत्रीय कहकर संबोधन करता परन्तु ऐसा नहीं किया किन्तु शूद्र कहकर ही संबोधन किया और यह भी ध्यान रहे कि ऋषि मुनि असत्य भाषण नहीं किया करते इसलिये जानश्रुति शूद्र वंशोत्पन्नही प्रतीत होता है–कदाचित् आप कहें कि वह राजा था तो इसका उत्तर यह है कि शूद्र कुलोत्पन्न भी राजा हुए हैं–यदि आप यह शंकाकरें कि प्रथम भेंट करने को धनादि थोड़ा लाया था इस कारण क्रोध करके मुनि ने ऐसा अपशब्द बोला तो महात्माजी! विचारिये कि जिन महापुरुषों ने संसार के धन व समृद्धि में लातमार ईश्वर में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्त लगाया उन्हें तुच्छ धन समृद्धि की क्या अपेक्षा रही-ऐसी शंका करना महात्माओं की निन्दा करना है-इसके अतिरिक्त दूसरी वार जब अधिक पदार्थ लाया तबभी तो इसी प्रकार संबोधन किया इससे यह निश्चय है कि जानश्रुति को शूद्र जान उसकी दृढ़ता श्रद्धा व भक्ति देखने के निमित्त प्रथम तो मुनिने टाला परन्तु जब देखा कि पूर्ण भक्ति रखता हुआ श्रद्धासे अधिक भेंट व विनयकरता है तो उसको योग्य पाकर पढ़ाया और ब्रह्म विद्या सिखाई-अब प्रथम तो जानश्रुति का शूद्र होना छान्दोग्य से प्रकट है ही है-परन्तु एसा न भी हो तो भी सिद्धान्त हानि तो नहीं होती और अन्यों का शूद्रत्व से ब्राह्मणत्व का प्राप्त होना सिद्ध है-दूर न जाइये आप ने ही स्वकृत "वर्ण व्यवस्था" पृष्ठ १८ में लिखा है कि "जावाल ऋषि वेश्या के पुत्र थे वत्स ऋषि क्षत्राय से उत्पन्न हुए पराशर तथा मातङ्ग ऋषि चंडाली के पुत्र थे वेदव्यास शूद्रा से उत्पन्न हुए नारद दासी पुत्र थे श्रवण और श्रवण के माता पिता वैश्य और शूद्र वर्ण से महर्षि हुए सूतजी प्रतिलोम से कैसे शिष्ट हुए फिर स्वकृत सत्यासत्य निर्णय में लिखा है।

"हैं जावाल और ऋषि मातंग जैसे-हुए नीच कुलमें हुए शिष्ट कैसे" वेद पढ़ने के विषय में आपको तो स्वमेव यह सम्मति है कि 'लिखा वेद में वेद सबके लिये है-इस वर्ण को कर्म ही के किये है" जिसमें शूद्र कुलोत्पन्न भी आगए तो फिर अपने लेख के प्रतिकूल अब व्यर्थ विवाद कर अपनी अज्ञता क्या प्रकट करते हो।

शूद्र था जानश्रुति यह सत्य है बिलकुल लिखा-है प्रकट छा-
न्दोग्य से तेरी मन की अज्ञता।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुतर्क १२ धर्मसन्ताप में से

(वादी) जो लिखी पृथिवी की परिधि उसमें भारी भूल है— तेरे स्वामी का कथन सिद्धान्त के प्रतिकूल है (सिद्धान्त शिरोमणि गोलाध्याय में इसके प्रतिकूल है) स० प्र० पृष्ठ ४६० ।

(प्रतिवादी) सिद्धान्त शिरोमणि गोलाध्याय भुवन कोश में लिखा है कि—

"प्रोक्तो योजन संख्यया कुपरिधि सप्तांगनंदाब्धय:"

अर्थात् पृथिवी की परिधि ४९६७ योजन या लगभग ५००० योजन है-इससे प्रतीत होता है कि ५००० योजन परिधि के स्थान में १५००० योजन परिधि ऐसा अशुद्ध छपगया है या कदाचित किसी जैनी आचार्य्य ने १५००० योजन परिधि इस पृथिवी की मानी हो जिस के वर्णन करने से स्वामी जी महाराज का यह बताने का अभिप्राय हो कि जब तुम्हारेही आचार्य्य के मतानुसार पृथिवी की केवल १५००० योजन परिधि है तो इतनी संकीर्ण भूमिपर ऐसे बड़े बड़े द्वीपादि का समाना असंभव है ।

कुतर्क १३ दयानन्दमत सूची मेंसे ।

(वादी) वेद शास्त्र में विद्वानोंको देव शब्द जो आया-विद्वज्जन ने व्यासादिक को क्यों नहीं देव लिखाया-स० प्र० पृष्ठ ५८८ ।

(प्रतिवादी) इस आक्षेप का उत्तर देने से पूर्व हम पूछना चाहते हैं कि स्वामीजी महाराज ने यह अवधारण कहांपर किया है कि केवल विद्वानों कोही देवता कहते हैं ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका पृष्ठ ५६ से ७४ तक देवत निरूपण प्रकरण में स्वामीजी देवता शब्द से इतने पदार्थों का ग्रहण करते हैं, " ईश्वर, यक्ष, इन्द्रिय, अ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वायु, सूर्यादि ३३ देवता, वेदमंत्र, वेदमंत्र से प्रतिपादित वस्तु, माता, पिता आचार्य अतिथि और विद्वान् आदि-अब विचार शील पाठक तनिक न्याय करें कि जिस व्यक्ति ने प्रमाण और विस्तार पूर्वक देवता शब्द के इतने अर्थ लिखे हों उसपर बिना विचार यह आक्षेप कर बैठना कि उसने केवल विद्वानों कोही देवता माना है कैसी भूल की बात है-अस्तु परन्तु वादी कहसक्ता है कि हमें और अर्थों से प्रयोजन नहीं-स्वामीजीने विद्वान् शब्द को देवताका वाचक भी तो मानाहै जो बिलकुल अप्रमाण है-इसके उत्तर में हम बहुतसे प्रमाणोंका संग्रह न करके केवल ३या४प्रमाण देंगे-प्रथम यहहै कि:-

"द्वयं वा इदं न तृतीय मस्ति-सत्य चैवानृतंच मत्य।
मेव देवा अनृतं मनुष्या इति" शतपथ का.१अ.१ब्रा.१

अर्थात्-गुणों के पाये जाने से मनुष्य जाति के दो भाग हैं एक देवता, दूसरे मनुष्य इन में जो सत्य बोलने सत्य मानने और सत्य करनेवाले हैं वे देव और जो झूठ बोलने, मानने और करने वाले हैं वे मनुष्य हैं।

द्वितीय यह कि :—

"मातृदेवो भव पितृदेवो भव आचार्य्य देवो।
भव अतिथिदेवो भव तैत्तरीयारण्यक"

फिर महाभाष्यकार अ० ८ पा० ३ के ७२ सूत्र पर यह पंक्ति लिखते हैं कि—"देवा एतज्ज्ञातु मर्हन्ति" जिसपर कैयट लिखते हैं कि "देवा इति पण्डिताः पर्य्युदास मन्यन्ते" फिर मनुस्मृति में निम्न लिखित श्लोक लिखे हैं।

देवत्वं सात्विकायान्ति मनुष्यत्वंच राजसाः।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तिर्य्यक्त्वं तामसा यान्ति इत्येषा त्रिविधागतिः ॥

अर्थात्-सात्विक भाववाले (मनुष्य) देवत्व को प्राप्त होते हैं राजस भाववाले मनुष्यत्व को और तामस भाववाले असुरत्व को प्राप्त होते हैं-अर्थात् सात्विक भाव से मनुष्य देवता बनजाता है इत्यादि और शतशः प्रमाण हैं जिनको हम विस्तर भय से यहां उद्धृत नहीं करसक्ते. रहा व्यास शब्द सो यह तो व्यासजी महाराज का खिताब है, वास्तविक नाम तो कृष्ण द्वैपायन है-प्रथम तो एक पदवी (खिताब) से विख्यात होते हुए दूसरे की आवश्यक्ता होही हो यह कोई बात नहीं और न इससे देवता का विद्वान् अर्थ होने में कुछ बाधा आती है परन्तु फिर भी व्यासदेव कहाजाता है और इसीतरह शुकदेव कपिलदेव इत्यादि नामोंमें देव पदवी लगाईजाती है-और निरुक्त अ० ७ खं० १५ में लिखा है कि "देवो दानाद्वा दीपनाद्वा द्योतनाद्वा द्युस्थानो भवतीति वा" अर्थात् दान देने प्रकाश करने सत्योपदेश करने से देव नाम पड़ता है अतः विद्वान की भी इन्हीं कारणों से देव संज्ञा होसक्ती है और विद्वान का अर्थ देवता तो आपने स्वयं माना है देखो सत्यासत्य निर्णय जिसमें लिखाहै कि "कहे देव विद्वानको शास्त्र माहीं-वर्ण जन्म से वह रहें शून्य नाहीं"

फिर आर्य्यप्रश्नोत्तरी में लिखा है कि—

"(प्रश्न) देवता किसको कहते हैं ?

(उत्तर) विद्वानों को देवता कहते हैं और कहीं २ देवता शब्द से ईश्वर इन्द्रिय ग्रहण होते हैं"—

ऐ पाठक वर्ग ! क्या आप वादी के मुख से इकरारी डिगरी निकलते हुए भी हमारी जय का न्याय न चुक वेंगे-हमारी जय हुई और सहस्रों में जय हुई ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुतर्क १४ दयानंद मत सूची में से

(वादी) "अंगादङ्गाद् संभवसि" चारों वेदोंमें बतलाया—एक वेदमें भी नहीं आया वृथा तुम्हें बहकाया—संस्कार विधि सं० १९३३ पृष्ठ ३८।

(प्रतिवादी) निरुक्त ३। ४ तदेतदृक् श्लोकाभ्यामुक्तम् अर्थात् यह बात ऋचा और श्लोक में कही है। इसके आगे "अङ्गादङ्गात्संभवसि" यह ऋचा लिखी है जो निरुक्त के उभय पक्ष का मंतव्य है।

कुतर्क १५ दयानंद मत सूची में से

(वादी) "मातृमान" यह वचन कहीं नहीं छान्दोग्य में आया—गप्पाष्टक ने विजया पीकर कैसा गप्प उड़ाया—संस्कार विधि सं० १९३६ पृष्ठ ७१।

(प्रतिवादी) मातृमान पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद

यह वचन शतपथ ब्राह्मण में उपस्थित है—यदि छापे की अशुद्धि अथवा ग्रंथकार ही की लेखिनी से कार्य बाहुल्य के कारण भूल से "शतपथ" के स्थान "छान्दोग्य" बन गया तो क्या सिद्धांत हानि होगई—और आपका ऐसा कटु वचन भी कि "विजिया पीकर गप्प उड़ाया" लिखना योग्य न था—भला यह गप्प है या क्या है यह तो यथार्थ बात है कि मातादि बड़ों के उत्तम होने से सन्तान विद्वान होसक्ती है क्या आप इसको नहीं मानते—हां यदि यह वचन किसी ग्रंथ में न मिलता तो गप्प बताना कुछ ठीक भी था—परन्तु एक को छोड़ दूसरे माननीय ग्रंथ में होते हुए गप्प कह बैठना पक्षपात है।

कुतर्क १६ दयानंद मत सूची में से

(वादी) दुःख और सुख भोग जीव का जब परतंत्र बताया—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्मों के करने में उसको फिर स्वतंत्र क्यों गाया–स० प्र० पृष्ठ ७१।

(प्रतिवादी) वास्तव में जीव कर्म करने में स्वतंत्र और फल भोग में जगदीश्वर की न्याय व्यवस्था के अनुसार परतंत्र हो है–अर्थात् जिस प्रकार संसार में यदि कोई मनुष्य चोरी करे तो अवश्य वह राजा से दंडनीय ठैरेगा इसी प्रकार जगदीश्वर और जीव के विषय में समझो–यदि मनुष्य कोई भी कर्म स्वतंत्रतासे न करे तो उसको फल भी न भोगना चाहिये-इस से आप मुसलमानादिक की समान स्पष्ट क्यों नहीं कहदेते कि ईश्वर न्याय रहित (जालिम) है जिस को चाहे नरक में डाले जिस को चाहे स्वर्ग में आप तो खुले शब्दों में ईश्वर को अन्याई और दूषित कर्मों का कराने वाला अथवा करने वाला बता रहे हैं इससे अधिक और क्या नास्तिकता होगी–आपने जो स्वकृत आर्य्य प्रश्नोत्तरी में तीन प्रकार के कर्म लिखे हैं–प्रथम " प्रारब्ध " अर्थात् वह कर्म जिनको हम करचुके हैं और जिन का फल हम अब भोग रहे हैं–द्वतिय " संचित " अर्थात् वह कर्म जिन को हम कर तो चुके परन्तु जो अभी जमा है और जिनका फल भोगना अभी शेषहैं,तृतीय "क्रियमाण" अर्थात् वह जो हम स्वतंत्रता से अब कररहे हैं और जिनका फल भोगना है।

अब आप बताइये किसंचय और प्रारब्ध को छोड़ यदि क्रियमाण कर्म हम स्वतंत्रतासे नहीं करते तो यह किसप्रकार होतेहैं,यह माननेको तो हम तयार हैं कि प्रारब्ध का फल भोगने के लिये जो कर्म हम करते हैं वह तो अवश्य दैवी प्रेरणासे होते हैं जैसे किसी ने किसीको दुख दिया और उसका फल दुख देनेवाले को ईश्वरकी ओरसे यह नियत हुआ कि उसको भी इसी प्रकार दुख दियाजावे

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो जो २ कर्म (पिछले कर्मों का परिणाम रूप) वह दुख भोगनेके लिये इस जन्म में करेगा, या यों कहो कि जो इस जन्म में उसको दुख देने का सामान बनेंगे वह तो अवश्य ईश्वर की ओरसे समझे जासक्ते हैं न कि सारे कर्म परन्तु साथही यह भी समझना चाहिए कि हमारे इस जन्मके भी अनेक कर्मों का फल इस जन्म ही में मिलता रहता है और बहुतसों का भविष्यत में मिलेगा जैसा कि लिखा है ॥

अत्युत्कटैः पुण्य पापैः इहैव फलमश्नते

अर्थात्—अति तीव्र पुण्य पापोंका यहांही फल भोगताहै फिर लिखाहै

इहदुश्चरितैःकेचित्केचित्पूर्वकृतैस्तथा ।

प्राप्नुवन्तिदुरात्मानोनरारूपविपर्ययम् ॥ मनु ४८-११

अर्थ—कोई यहांके दुराचरणसे और कोई पूर्वजन्मके दुराचरण से दुष्टात्मा मनुष्य पीड़ा को प्राप्त होते हैं ॥

परन्तु यह समझना कि अमुक कर्म हमने स्वतंत्रतासे किया और अमुक कर्म हमको भूतकर्मों के फल भुगानेके लिये सामग्री रूप है अति कठिन है—परन्तु जिन कर्मोंका फल हम इस जन्म में भोग रहे हैं या जो अभी जमा है जिनका फल हमको भविष्यत में भोगना है वह भी हमने अपनी स्वतंत्रताहीसेतो किए थे—अतः जीव कर्म करनेमें स्वतंत्रही है—यदि ऐसा नहो तो शास्त्रोंमें लिखा विधि निषेध सम्पूर्ण निष्फल होजावे—सारे ऋषि मुनि और विद्वानों का यही मत है कि जीव कर्म करनेमें स्वतंत्र है ।

१—यजुर्वेद में लिखा है ।

कुर्वन्नेहकर्माणिजिजीविषेच्छतꣳसमाःइत्यादि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात् इस संसार में कर्म (सत्) करता हुआही सावर्ष जीने की इच्छाकर-और पाणिनि मुनि अपने व्याकरण में यह सूत्र लिखते हैं कि "स्वतंत्रकर्ता"-अर्थात् कर्त्ता स्वतंत्र है।

(२)—श्वेताश्वतर उपनिषत् में लिखा है।

गुणान्वयायःफलकर्मकर्त्ताकृतस्यतस्यैवसचोपभोक्ता: ।

सविश्वरूपस्त्रिगुणस्त्रिवर्त्माप्राणाधिपःसंचरितस्वकर्मभिः अ.५,७

अर्थ—जो गुणोंसे मेलवाला फलों और कर्मोंका कर्त्ता है (फलों का कर्त्ता इस लिये कहा क्योंकि स्वतंत्रता से कर्म करके अपने लिये ईश्वर की न्याय व्यवस्था के आधीन तदनुसार फल प्राप्त करता है) वही उस कियेका भोगनेवालाभी है-वह अनेकरूप धारता है तीन गुणोंका धर्त्ता तीन मार्गोंवाला प्राणों का स्वामी अपनेकर्मों से (उन कर्मोंसे जो उसने स्वतंत्रतासे किए हैं) घूमता फिरता है।

(३) फिर भगवद्गीता १४-५ में लिखा है कि:—

न कर्तृत्वं नकर्माणि लोकस्य सृजति प्रभु

अर्थात्-परमेश्वर लोक के कर्मों को उत्पन्न नहीं करता।

(४) गोविंदाचार्य्य भगवद्गीता १३-४ की व्याख्या करते हुए अपने भाष्य (रामानुजाचार्यानुकूल) में इसप्रकार लिखते हैं:—

Devas, men &, are beings created by their own deeds of merit and demerit, the man himself is his author (Iam not answerable for the conditions which men briug upon themselves by their own deeds.)

अर्थात् देवता व मनुष्य योनियां अपने शुभाशुभ कर्मों से मिलती हैं-मनुष्य आपही अपना (अपनी दशा का) कर्त्ता है-(मैं उन दशा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओं का प्रति भू नहीं जो प्राणी अपने कर्मों से अपने ऊपर लाते हैं)

(५) फिर महाभारत उद्योगपर्व ९-१५८ में लिखा है कि:—

य आत्मनो दुश्चरितादशुभं प्राप्नुयान्नरः ।
न सकालं न वा दैवं वक्तु मेतादि हार्हति ॥

अर्थ—जो पुरुष अपने कुकर्मों से दुःख को प्राप्त हो वह काल वा दैव को कुछ नहीं कहसक्ता अर्थात्—मनुष्य जो कर्म स्वतंत्रता से करता है उन्हीं का फल ईश्वर से पाता है ईश्वर का दोष नहीं क्यों कि वह स्वयं तो उन कर्मों को नहीं कराता ।

फिर महाभारत अनुशासन पर्व अ० १११ श्लोक ४३ में लिखा है कि मनुष्य अपने (स्वकृत) कर्मों द्वारा नाना प्रकार के दुख भोगते हैं—यही नहीं वरन इस सारे अध्याय में यही वर्णन है कि अमुक दुष्कर्म करने से अमुक अधम योनि पाता है जिससे स्पष्ट प्रकट है कि जीव अपने ही अर्थात् स्वतंत्रता से किये कर्मों का ही भला बुरा फल भोगता है ।

(६) फिर एक महात्मा का वचन है कि :—

स्वयंकर्म करोत्यात्मा स्वयं तत्फल मश्नुते ।
स्वय विचरातिसंसारे स्वयं तस्माद्विमुच्यते ॥

अर्थ—आत्मा स्वमेव कर्मों को करता है स्वमेव उनके फलों को भोगता है स्वयंही संसार में विचरता है और स्वयंही उससे छूटजाता है ।

यही नहीं किन्तु पुराणों तक से हमारा पक्ष सिद्ध है—देखो श्रीमद्भागवत स्कंध ६ अ० ११ श्लोक २७ में लिखा है कि :—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(७) ममोत्तम श्लोक जंतषु सख्यं संसार चक्रे भ्रमतः स्वकर्मभि ।

अर्थ–मैं संसार रूप चक्र में अपने कर्मों से भ्रमण करता हूं।

(८) फिर मार्कंडेय पुराण में भी लिखा है कि :—

स्वकर्म फल पाकेन भर्तुस्तस्य महात्मनः
वियोजताहं तद्धेतुर यमासीनिशाचरः अ० ६८ श्लो०

अर्थ–अपने कर्म के फल से उस महात्मा पति से पृथक कीगई और वह निशाचर था।

(९) अब मैं एक विख्यात अँग्रेजी प्रिंसिपल की सम्मति भी आपके सामने उद्धृत करता हूं जो लिखते हैं कि :—

"योग्य या अयोग्य का करना क्या हमारे आधीन है–या हमारा कुल दारो मदार तकदीर पर है–क्या हर मनुष्य अपनी इच्छा के अनुसार काम करता है या जो कुछ वह करता है इसलिये करता है कि सृष्टि क्रम के अनुसार वह उसको अवश्य करना होगा–यदि यह कहाजाय कि अपनी इच्छा कोई वस्तु नहीं तो इस दशा में कोई मनुष्य अपने कर्म का उत्तरदाता नहीं होसक्ता–यदि एक काम का करना आवश्यक है तो वह अवश्य कियाजायगा फिर अच्छे या बुरे का क्या संबंध रहा–इस दशा में हम मनुष्य नहीं केवल कठपुतली ठैरे जिसको तकदीरकी उँगली नचाती है–ऐ मेरे मित्रो ! मैं कदापि इस बात का यकीन नहीं करता–हर मनुष्य का यही विश्वास है कि इच्छा हमारे आधीन है और वह अपने कर्मों का उत्तरदाता है– (देखो उर्दू अनुवाद " का मन थाट्स " मेकनाटन साहब प्रिंसिपेल राज कुमार कालज काठियावार कृत)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१०) पोप साहब लिखते हैं :—

Yet gave me in this dark state to see the good from ill.
And binding nature fast in fate left free the human will,

अर्थ–परन्तु इस अंधकार दशा में भी मुझे अच्छा बुरा पहिचानने की शक्ति दी और सम्पूर्ण जगत् को सृष्टि नियम में बांधते हुए मनुष्य की इच्छा को स्वतन्त्र रक्खा।

कहांतक प्रमाणों का संग्रह करें सारे विद्वानों का ऐसाही मत है–और लीजिये ! अब हम वादिकिआक्षेपका खण्डन वादीकेही मुख से कराये देते हैं–वास्तव में " जादू वह जो शिरपे चढके बोले " सचतो यह है कि मनुष्य कितनी ही बनावट बनावे सत्य किसी न किसी समय मुखसे निकलही जाता है–आप स्वकृत " गुलज़ारे हिदायत " में लिखते हैं– "सुखदुख में न हर्ष शोक कीजे–फल कर्म का अपने मान लीजे " अब बुद्धिमान विचारें कि " अपनेकर्म" और स्वतन्त्र कर्म में क्या अन्तर है।

करचुका आपमेरे दावे को तसलीम रिपु
फ़तहका मेरीनहो शोरजिहां में क्यों कर.
ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

लावनी–बहर छोटी

हम सेवक तेरे तू है नाथ हमारा। इस दुःख सिन्धू से तुही लगावे पारा ॥ तू धर्मराज है न्याय सभोंका करता। तू अभय अगोचर नहीं किसीसे डरता ॥ है आदि अन्तसे रहित तू निरभिमानी। तू करुणा सागर सुने दीनकी बानी ॥ है सविता देव वेदोंने तुझे पुकारा। इस दुःख सिन्धु से० ॥ १ ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तू अलख निरंजन दुखभंजन सुखराशी। है भूख प्याससे रहित तुहै अविनाशी ॥ है पूर्णब्रह्म तू सब का अन्तर्यामी । तुम कृपा दृष्टिसे देखो मुझपर स्वामी ॥ है तेरे बिना नहीं मेरा कहीं गुजारा। इस दुःख सिन्धु से० ॥ २ ॥

नहीं पाद तेरे पर बड़े वेग से चलता । नहीं हस्त तेरे पर है तू सर्व नियन्ता ॥ और बिना श्रोत्रके सबकी बातें सुनता । तू निराकार पर सृष्टि तन्तु को बुनता ॥ तू परम दयालू सबका तारनहारा। इस दुःख सिन्धु से० ॥ ३ ॥

तू अचल अखण्ड है तीनों कालका ज्ञाता । सबभिक्षुक तेरे है तूसब का दाता ॥ तू अद्वितीय नहिं कोई समान है तेरी । है नमस्कार तो हि बारम्बार अब मेरी ॥ कहता कृपालु सबका है तुही सहारा। इस दुःख सिन्धु से तुही लगावै पारा ॥ ४ ॥

श ० ना० मुरादाबाद

इति

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

2.4/63

पु० सं० ११

ओ३म्

विवाह-वयो-दर्पण

जिसको

पं० छुट्टनलाल स्वामी परीक्षितगढ़
ज़िला मेरठ निवासी ने
रचा और
पं० तुलसीराम स्वामी सम्पादक वेदप्रकाश
तथा सामवेदभाष्यकार ने अपने
स्वामियन्त्रालय-मेरठ में छपवाया

श्रावण सं० १९५७ ता० १५। ७। १९००
प्रथमवार १०००] [मूल्य -)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

इस पुस्तक में नीचे लिखे ग्रन्थों से अल्पावस्था में कन्याविवाह का निषेध दिखाया है।

ग्रन्थों के नाम

१–वेद–ऋक्, यजुः, अथर्व। उपवेद–सुश्रुत,

२–ब्राह्मण–गोपथ,।

३–सूत्र–आश्वलायन, आपस्तम्ब, कात्यायन, गोभिल

४–स्मृति–मनु, अत्रि, (यम अङ्गिरा काश्यप के बनावटी श्लोक) ॥

५–पुराण–श्रीमद्भागवत, स्कन्द, ब्राह्म, महाभारत गीता॥

६–वाल्मीकीय रामायण मेधातिथि मनु के टीकाकार

७–हनुमन्नाटक, मञ्जरीग्रन्थ, उद्वाहतत्व, विवाहतत्वार्णव, तथा सत्यव्रत सामश्रमी मेम्बर एसियाटिक सुसाइटी की राय और उन की खोज तथा अन्त में प्राचीन बादशाही समय का एक बाग़ का बैनामा संस्कृत का लिखा और जागदीशी के कर्त्ता श्री जगदीश शर्मा के पुत्र की जन्मकुण्डली भी इस में छपी है, जिस से सिद्ध किया है कि बालाविवाह बादशाही समय में ही चला है। सज्जन लोग भूल को क्षमा करें और मुझे सूचित करें। इति॥

छुट्टनलाल स्वामी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

विवाह-वयो-विचार

प्रिय पाठको ! बहुत दिनों से मेरा विचार था कि विवाह की कुरीति पर कुछ लेखनी उठाऊं, आज वह संकल्प निश्चित कर, कतिपय पङ्क्ति आप की सेवा में उपस्थित करता हूं। आशा है कि जो कुछ इस में त्रुटि रह जावे, उसे सुहृद्भाव से लिख कर मुझे अनुगृहीत करेंगे॥

आज कल इस घोर समय की कैसी क्रूर गति है कि जो हित की कहे वह बुरा लगता है। माता पिता पढ़ने को कहते हैं तब बालकों को बुरा भान होता है। मैंने स्वयं देखा है कि बहुत से अल्पभाग्य भारतसन्तान पाठशाला को जाते जेलखाने जाने से भी अधिक दुःख मानते हैं। एक लड़का हाथ, एक पग पकड़ता है तब बड़ी कठिनता से खींचे जाते हैं। वहां से बहुत से बहानेबाज़ी कर भाग आते हैं। कहां तक कहूं, चाहे समस्त दिन उन से अन्य कितने ही कष्ट का काम करालो परन्तु पढ़ने से बड़े ही डरते हैं॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२—यही दशा रोगियों की है। कटु औषध और पथ्य पदार्थ सेवन नहीं करते। अनेक बालक वैद्यों को गाली तक दे बैठते हैं। बड़े २ समझदार युवा पुरुष परहेज़ न करके महारोगों के वश हो प्राणों का पयान करा बैठते हैं॥

३—इस बात को भली भांति जानते हुवे भी कि ब्रह्मचर्य, वीर्य्यरक्षा से बल रूप विद्या बुद्धि वृद्धि को प्राप्त होती हैं तथापि कालके प्रवाह में बहते हुवे वीर्य्य नष्ट कर महारोगों की खानि बन अपनी हानि कर ही बैठते हैं। इसी प्रकार भली भांति शास्त्रसम्मानित विवाह की प्रथा से विमुख हो कर बालविधवाओं की वृद्धि देखते हुवे भी बड़ी अवस्थामें कन्या का विवाह नहीं करते। जहां दशवर्ष की कन्या हुई मानोयमराज का दर्शन हुवा। इस में बहुत से लोग प्रमाण भी बोलते हैं कि—

अष्टवर्षा भवेद्गौरी नववर्षा च रोहिणी।
दशवर्षा भवेत्कन्या अत ऊर्ध्वं रजस्वला ॥१॥
माता चैव पिता चैव ज्येष्ठभ्राता तथैव च। त्र-
यस्ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम् ॥२॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ—८ वर्ष की गौरी ९ वर्ष की रोहिणी १० वर्षकी कन्या, इस के पश्चात् रजस्वला होती है। रजस्वला कन्या को देख, माता, पिता, बड़ा भाई तीनों नरक को जाते हैं॥

इस में हम यह प्रश्न करते हैं कि प्रथम तो यह श्लोक किसी आर्ष ग्रन्थ का नहीं, दूसरे इस में रजस्वला के दर्शन का पाप लिखा है तो आज कल जो कन्या के पिता ३। ५। ७ वर्ष विवाह से पीछे तक घर रख कर द्विरागमन करते हैं, क्या वह उन रजस्वलाओं को नहीं देखते, यदि नहीं देखते तो इसी प्रकार कुमारी कन्या को भी रख सकते हैं॥

हमारी समझ में तो यह श्लोक किसी अन्यायी यवन बादशाह के समय से बना है। अविवाहित युवती कन्या को बलात् यवन छीन लेते थे, तब छोटी ही कन्या का विवाह करना उचित जान उसी के अनुसार यह वाक्य भी प्रचरित हुवा कि—"कन्यायाः द्विगुणो वरः"। बस तभी ८ वर्ष की कन्या १६ वर्ष का वर, ९ वर्ष की कन्या १८ का वर, १० की कन्या २० का वर, वहीं १६ की जब कन्या हुई २५ का वर हो जाता था। अब की भांति नहीं कि १० वर्ष की कन्या ८ वर्ष का वर॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे प्राचीन शास्त्र तो यह पुकारते हैं कि—

ब्रह्मचर्य्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम् । अथर्व०

अथवा—काममामरणात्तिष्ठेत् गृहे कन्यर्तुमत्यपि । न चैवैनां प्रयच्छेत्तु गुणहीनाय कर्हिचित् ॥ मनु० ॥

अर्थात्—चाहे मरण पर्यन्त रजस्वला होती हुई भी कन्या घरमें रहै परन्तु गुणहीन मूर्ख को न देवे। औरभी—

त्रीणि वर्षाण्युदीक्षेत कुमार्यृतुमती सती ।
ऊर्द्ध्वंतुकालादेतस्माद्विन्देत सदृशं पतिम्॥ मनु०

अर्थ—रजस्वला होने पर भी तीन वर्ष तक कुमारी पिता की उदीक्षा करे, इस के बाद सदृश पति को प्राप्त करले। महात्मा सुश्रुतकार कहते हैं ॥

पञ्चविंशे ततो वर्षे पुमान्नारी तु षोडशे ।
समत्वागतवीर्यौ तौ जानीयात्कुशलो भिषक् ॥

अर्थ—२५ वर्ष में पुरुष और १६ वर्ष में स्त्री समवीर्य होते हैं, यह चतुर वैद्य जाने ॥ और भी—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊनषोडशवर्षायामप्राप्तः पञ्चविंशतिम् ।
यद्याधत्ते पुमानगर्भं कुक्षिस्थः स विपद्यते। जातो वा न चिरं जीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः। तस्मादत्यन्तबालायां गर्भाधानं न कारयेत्॥

अर्थ—१६ वर्ष से कम स्त्री में २५ वर्ष से कम पुरुष यदि गर्भाधान करता है तो वह कोख में ही बिगड़ जाता है, यदि उत्पन्न होता है तो बहुत दिन जीता नहीं,जो भी सकता है तो दुर्बलेन्द्रिय रहता है । इस लिये अत्यन्त बाला में गर्भाधान न करे ।।

इस में बहुतों को यह भ्रम होगा कि धर्मशास्त्र और वैद्यक का क्या सम्बन्ध ? सो ठीक नहीं । हमारे पूर्वज सब शास्त्रोंके ज्ञाता होतेथे । और तो क्या, इसी सुश्रुतकार महर्षिने प्रथम यज्ञोपवीतकी विधि बड़े विस्तार से वर्णन की है । भला वैद्य को यज्ञोपवीत की विधि अपने ग्रन्थ में लिखने की क्या आवश्यकता थी ? सो नहीं । अपने २ ग्रन्थों में अपनी २ धर्मकार्य्य की भी संमति जता देते थे । महाभाष्यकार पतञ्जलि व्याकरणके ग्रन्थ में भक्ष्य अभक्ष्य बताते हैं । जैसाकिः—

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्षितेऽपि लशुने न शान्तो व्याधिः

अर्थ–लहसुनभी खाया,रोगभी न गया। किन्तु लशुन अ-खाद्य है। बस इसी प्रकार सुश्रुतकार भी विवाह की व्यवस्था से ध्वनि करते हैं ॥

अब हम इतिहास से इसको दर्शावेंगे कि पूर्व काल में भी युवति स्त्रियों का ही विवाह होता था।

यह तो सभी जानते हैं कि युवति स्त्री के ही कुचा उभ-रती हैं ८।९।१० वा ११ वर्ष की लड़की के नहीं उभरतीं। इतिहास पुराणों में जहां २ विवाह का वर्णन है वहीं २ " पीनोन्नतकुचस्थली " का पाठ है ॥

महाभारत वनपर्व नलोपाख्यान अ० ५३ श्लो० १६ । १७।

तस्याःसमीपे तु नलं प्रशशंसुः कुतूहलात् ।
नैषधस्य समीपेतु दमयन्तीं पुनः पुनः॥१६।
तयोरदृष्टः कामोभूत् शृण्वतोः सततं गुणान्।
अन्योन्यं प्रति कौन्तेय सव्यवर्द्धत हृच्छयः॥१७॥

अर्थ–राजा नल और दमयन्तीकी लोग बारबार प्रशंसा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते थे और निरन्तर गुणों को सुनते हुवे उन दोनों का काम देव बढ़ता था ॥ १६ । १७ ॥

महाभारत वनपर्व तीर्थयात्रा प० अ० ९६

तां यौवनस्थां राजेन्द्र शतं कन्याः स्वलंकृताः । दास्यश्शतं च कल्याणीमुपतस्थुर्वशानुगाः ॥ २६ ॥ यौवनस्थामपि च तां शीलाचारसमन्विताम् । न वव्रे पुरुषः कश्चित् भयात्तस्य महात्मनः ॥ २८ ॥ वैदर्भीन्तु तथा युक्तां युवतीं प्रेक्ष्य वै पिता । मनसा चिन्तयामास कस्मै दद्यामिमां सुताम् ॥ ३० ॥

यह लोपामुद्रा की कथा है । इस में भी उस के रूप शील की महिमा का वर्णन है २७। २९ में रूप शील का ही वर्णन है । परन्तु यहां हमें केवल युवावस्था के विवाह का ही दर्शाना इष्ट है, अतः जिन श्लोकों में युवावस्था का वर्णन था वही उद्धृत किये हैं ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीरामचन्द्र सीता के विवाह का समय
हनुमन्नाटक में–शिखरिणी

कपोले जानक्याः करिकलभदन्तद्युतिमुषि
स्मरस्मेरं गण्डोड्डमरपुलकं वक्त्रकमलम् ॥ मुहुः
पश्यन्श्रृण्वन्रजनिचरसेनाकलकलं जटाजूटग्रन्थिं
रचयति रघूणां परिवृढः ॥ १ ॥

अर्थात् जब कि जानकी जी के कपोल पर हाथी के बच्चे के दान्तों की चमक को मात करने वाली कामदेव की हंसी थोड़ी २ झलक रही थी, इत्यादि यौवन के लक्षणों को देखते हुवे रामचन्द्र जी ने धनुष उठाने को जटाजूट बांधा ॥

स्कन्द पुराणान्तर्गत ब्रह्मोत्तर खण्ड अ० १८ श्लोक ३।

अनार्तसम्भवः कश्चिन्नाम्ना वेदरथो द्विजः ।
तस्यैवं वर्त्तमानस्य ब्राह्मणस्य गृहाश्रमे ॥२॥
बभूव शारदानाम्नी कन्या कमललोचना ।
तां रूपलक्षणोपेतां बालां द्वादशहायनाम्॥३॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ययाचे पद्मनाभाख्यो मृतदारश्चरन्द्विजः ।

अर्थ—आनर्त देश में वेदरथ नामक कोई ब्राह्मण था, उस गृहस्थ ब्राह्मण के शारदा नाम की कन्या हुई। उस रूपवती कमलनेत्रा लक्षणयुक्ता १२ वर्ष की बाला को पद्मनाभ नामक विद्वीक ब्राह्मण ने मांगा। इस से सिद्ध हुआ कि १० वर्ष से उपरान्त भी कुमारी पुत्री को पूर्वज महात्मा घर में रखते थे। यदि १० वर्षोपरान्त कन्या को देख नरक में जाते तो क्यों वह पूर्व ही विवाह न करते॥

श्रीमद्भागवते दशमस्कन्धे उत्तरार्धे अ० ५३

जब श्री कृष्णचन्द्र महाराज ने रुक्मिणी के साथ विवाह किया है। तब वह किस अवस्था की थी यह भी द्रष्टव्य है। अ० ५३ श्लोक १५ से

तां देवमायामिव वीरमोहिनीं सुमध्यमां कुण्डलमण्डिताननाम्। श्यामां नितम्बार्पितरत्नमेखलां व्यञ्जत्स्तनीं कुन्तलशङ्कितेक्षणाम्॥५१॥ शुचिस्मितां बिम्बफलाधरद्युतिं शोणायमानद्विजकुन्दकुड्मलाम् । पदा चलन्तीं कलहंस-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गामिनीं सृजत्कलानूपुरधामशोभिताम् ॥५२॥

अर्थात् रुक्मिणी, देवमाया के तुल्य वीरों को मोहने वाली, पतली कमर वाली, कुण्डल पहिने हुई, १६ वर्ष की वर्ष श्यामा, उठी कुचा वाली, पवित्र, थोड़ी हंसी से युक्त, इत्यादि लक्षणों वाली थी, जो युवति में ही घट सकते हैं, बाला में नहीं ॥

इन श्लोकों से यही सिद्ध होता है कि पूर्वकाल में युवावस्था ही में कन्या का विवाह करते थे। अन्यथा राजकन्याओं का युवावस्था में विवाह क्यों होता। क्या वह धन के अभाव से कन्या बड़ी करलेते थे?

तथा च

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः। स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्त्तते। अन्यच्च—
राज्ञि धर्म्मिणि धर्मिष्ठाः पापे पापाः समे समाः।
प्रजास्तमनुवर्त्तन्ते यथा राजा तथा प्रजाः ॥२॥

अर्थ—जैसा २ श्रेष्ठ मनुष्य चलन चलते हैं वैसा २ ही

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और मनुष्य भी। बड़ा पुरुष जो प्रमाण करता है, लोक उस के पीछे वर्त्तता है ॥१॥

जब राजा धर्मात्मा होता है, प्रजा भी धर्मिष्ठ होती हैं। जब नृप, पापी, तब जनसमुदाय भी पापी और जब राजा सम होता है तब प्रजा भी सम होती है। बस जैसा राजा वैसी प्रजा ॥२॥

कन्याविवाहकाल में प्रसिद्ध पं० सत्यव्रत सामश्रमी सभासद् एसियाटिक सुसाइटी कलकत्ता अपनी उषा नाम की संस्कृतपत्रिका ज्येष्ठ शाके १८१३ में लिखते हैं किः—

अथ दृष्टरजस्कायाः कन्यायाः एव विवाहः श्रुतिस्मृतिबाधितः, प्राचीनव्यवहारानुगतश्च। न पुनरदृष्टरजस्कायाः। न काऽपि वेदे स्मृतौ वा दृष्टरजस्कायाः पाणिपीडने संप्रदाने वा दोषो विहितः, प्रत्युत वैवाहिकमन्त्रादितः सर्वसूत्रग्रन्थीयादिसम्भोगकालविधितः, स्मृतीनां साक्षाद्वचनतश्च दृष्टरजस्कायाः संप्रदाने पाणिग्रहणे च विधिःप्रतीयते स्फुटम् ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ—रजोदर्शन होने पर ही कन्या का विवाह वेद और स्मृतियों से सिद्ध होता है, और पुराने व्यवहारके देखने से भी। विना रजोवती हुवे विवाह नहीं होना चाहिये। और न कहीं रजोवती कन्या के दान वा पाणिग्रहण करने में वेदों वा स्मृतियों में दोष (पाप) ही बतलाया है। बल्कि विवाह के मन्त्रों से लेकर समस्त सूत्र ग्रन्थों के संभोग विधान और स्मृतियों के स्पष्टवचनों से भी रजोवती कन्या के दान और पाणिग्रहण की विधि स्पष्ट प्रतीत होती है॥

इस में प्रमाण—ऋ० सं० ८। ३। २७। ५॥

सोमः प्रथमो विविदे गन्धर्वो विविद उत्तरः।
तृतीयोऽग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः॥

अर्थ—हे स्त्री! प्रथम सोम=चन्द्रमा तेरा पति हुआ फिर दूसरा गन्धर्व, तीसरा अग्नि और चौथा मनुष्य तेरा पति हुआ॥ दूसरा मन्त्र वहीं ८। ३। २८। १

सोमो ददद्गन्धर्वाय गन्धर्वोददग्नये॥
रयिंच पुत्रांश्चादादग्निर्मह्यमथो इमाम्॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ—चन्द्र ने गन्धर्व को दी, गन्धर्व ने अग्नि को। अब धन और पुत्र देकर अग्नि मुझे देता है॥

अत्रिस्मृति में भी इसी को कहा है॥

पूर्वं स्त्रियः सुरैर्भुक्ताः सोमगन्धर्ववन्हिभिः।
भुञ्जते मानवाः पश्चान्न तादुष्यन्ति कर्हिचित्॥

अर्थ—पहिले स्त्रियां चन्द्र गन्धर्व और अग्नि नामक देवों ने भोगी हैं, पीछे मनुष्य भोगते हैं। वे कभी दूषित नहीं होतीं॥ १९०॥

इन मन्त्रों में सन्देह इतना ही शेष रह गया था कि कितनी २ आयु तक कौन २ देव भोगते हैं सो इस को गोभिलाचार्य्य के पुत्र ने गृह्यासंग्रह ग्रन्थ में स्पष्ट कर दिया है (३।१९)

व्यञ्जनैस्तु समुत्पन्नैः सोमो भुञ्जीत कन्यकाम्।
पयोधरैस्तु गन्धर्वा रजसाग्निः प्रकीर्त्तितः॥

(व्यञ्जन) चिन्ह उत्पन्न होने पर्यन्त कन्या को चन्द्र भोगता है, स्तन होने पर गन्धर्व और रज होने पर अग्नि॥

इस से सिद्ध हो गया कि जब मनुष्य पति अग्नि के

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पश्चात् अधिकारी हो तो रजोदर्शन के पश्चात् ही विवाह करना योग्य है क्योंकि पाणिग्रहण के मन्त्रों में यह स्पष्ट ही है कि अग्नि के पश्चात् मनुष्य के अधिकार में कन्या जाती है ॥

इसी पर मनुस्मृति का प्रमाण

देवदत्तां पतिर्भार्यां विन्दते नेच्छयात्मनः ।९।९५

इस के ऊपर प्राचीन टीकाकार मेधातिथि जी भी वेद के मन्त्र का प्रतीक लिखते हैं । जैसा कि:—

" सोमो ददादित्यादिमन्त्रार्थवादेभ्यो देवतानां दातृत्वं प्रतीयते " ।

अब विचारना चाहिये कि रजोवती कन्या का विवाह न करना कहने वालों को वेद और गृह्यसूत्र तथा मनु से क्यों न विरोध होगा ।

आश्वलायनादि गृह्यसूत्रों से भी स्पष्ट यही सिद्ध होता है कि रजोदर्शन के उपरान्त ही कन्या का विवाह होता था । जैसा कि आश्वलायन गृह्यसूत्र (३ । ८)

(१) अत ऊर्ध्वमक्षारलवणाशिनौ ब्रह्मचारि-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

णावलंकुर्वाणावधःशायिनौ स्यातां त्रिरात्रं द्वादशरात्रं संवत्सरं वा ॥

ऐसा ही आपस्तम्ब गृह्यसूत्र में

(२)अक्षारलवणाशिनौ ब्रह्मचारिणावलंकुर्वाणावधश्शायिनौ स्यातामत ऊर्ध्वं त्रिरात्रं द्वादशरात्रं संवत्सरञ्च ॥

और कात्यायन गृह्यसूत्र में

(३) "अक्षारलवणाशिनौ स्यातामधः शयीयातां संवत्सरं न मिथुनमुपेयातां द्वादशरात्रं षड्रात्रं त्रिरात्रमन्ततः"

गोभिलाचार्य्य भी कहते हैं कि:—

(४) तावुभौ तत्प्रभृतित्रिरात्रमक्षारलवणाशिनौ ब्रह्मचारिणौ भूमौ सह शयीयाताम् २।२॥

फिर वही आचार्य कहते हैं कि:—

ऊर्द्ध्वं त्रिरात्रात् सम्भव इत्येके, यदर्तुमतीभव-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्युपरतशोणिता तदा सम्भवकालः। गो० गृ० २।५

नं० १ से ४ तक सब का यही एक अर्थ है कि पाणिग्रहणोपरान्त वर और कन्या दोनों खार और नमक न खा कर ब्रह्मचर्य रखते हुवे वस्त्रादि से सुसज्जित भी तीन रात या बारह रात वा एक वर्ष तक भूमिमें सोवें। इस के बाद कोई आचार्य तीन रात्रि के बाद समागम का समय बताते हैं ।।

यदि चौथी रात्रि में स्त्री रजस्वला हो तो, जब (शोणित) रज सूख जाय वही सम्भोग का समय है। २।५ गो० गृ०। विवाह के पीछे भी ३ रात्रि तक ब्रह्मचर्य रखना सभी सूत्रकारों का मत है। ब्रह्मचर्य से यहां मैथुनाऽभाव मात्र ही आशय है जैसा कि कात्यायन ने स्पष्ट ही कह दिया है कि (न मिथुनमुपेयाताम्) इस कहने से सन्देह का लेश भी नहीं रहा। यहां यह भी विचारणीय बात है कि यदि रजस्वला होने के उपरान्त विवाह न होवे तो विवाह से तीसरे दिन ही समागम (मैथुन) कैसे हो सकता है। क्योंकि यावत् रजस्वला न हो तब तक सम्भोग (मैथुन) सब

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शास्त्रकारों ने मनह किया है जैसा कि:—

प्राग्रजोदर्शनात् पत्नीं नेयात् ॥

यह कात्यायन कहते हैं कि रजोदर्शन से पहिले पत्नी से सम्भोग न करे । और—"नाजातलोम्न्योपहासमिच्छेत् " यह गोभिलीय में लिखा है ॥

आगे सामश्रमी जी लिखते हैं कि:—

आथर्वणिकास्तु स्त्रीणां प्रथमे वयसि रेतः सेकनिषेधमेव समामनन्ति ॥

अर्थ—अथर्ववेदी ऋषि तो स्त्रियों की प्रथम अवस्था में वीर्यसेक का निषेध ही करते हैं कि सोलह वर्षसे पूर्व स्त्रीसम्भोग वेदविरुद्ध ही है।

अदृष्टरजस्कायाः सम्भोगकथा तु दूरपराहता, ऊनषोडशवर्षायाअपि सम्भोगो वेदविरुद्ध इति च गम्यते । इति सत्यव्रतः । इस में प्रमाण—

"आसां प्रथमे वयसि रेतःसिक्तं न सम्भवति गो० ब्रा० १।८ ॥

अर्थ—(आसां) स्त्रीणां (प्रथमे वयसि) बाल्ये (रेतः

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिक्तम्) यथास्यात्तथा (न सम्भवति) [लिङर्थेलेट् । पा० ३।४।७] न सम्भवेत् सम्भोगं न कुर्वीतेत्यर्थः ।

ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम् ॥ अथर्व०—११ । २४ । ३ । १८ ॥

सुश्रुत के प्रमाण हम पीछे ही लिख आये हैं कि १६ वर्ष से न्यून स्त्री और २५ वर्ष से कम पुरुष सम्भोग योग्य नहीं होते । सोलह वर्ष की कन्या का पाणिग्रहण महाभारत में भी लिखा है । " त्रिंशद्वर्षः षोडषवर्षा भार्यां विन्देतानग्निकाम् ॥

अर्थ—तीस वर्षका पुरुष सोलह वर्षकी स्त्री को प्राप्त करे॥ मेधातिथि मनुके टीकाकार लिखते हैं कि:—

प्रागृतोः कन्याया न दानम् । ऋतुदर्शनेपि न दद्यात्, यावत् गुणवान् वरो न प्राप्तः ॥

अर्थ—रजोदर्शन से पहिले कन्यादान न करे । ऋतु-दर्शन पर भी जब तक गुणवान् वर न मिले तब तक कन्यादान न करे ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाहकाल में रजोदर्शन होने पर क्या करे ? संजरी ग्रन्थ में:-

विवाहे वितते तन्त्रे होमे काले उपस्थिते ।
कन्याया ऋतुरागच्छेत्कथं कुर्वन्ति याज्ञिकाः ॥
स्नापयित्वा ततः कन्यामर्चयित्वा यथाविधि ।
अञ्जलीमाहुतिं हुत्वा ततस्तन्त्रं प्रवर्त्तते ॥
इति मञ्जरीकारः ॥

अर्थ-(प्रश्न) विवाह के ठीक समय जब कार्यारम्भ हो जावे होम का समय हो और कन्या ऋतुमती होजावे तो याज्ञिक लोग क्या करते हैं ?

(उत्तर) कन्या को स्नान कराकर और वस्त्रादि पहिना कर यथाविधि अञ्जली आहुति करा देते हैं फिर सब काम आगे क्रम से करते हैं । ओ३म् भगाय स्वाहा इदं भगाय । इदं न मम । इत्यादि अंजली आहुति हैं ।

रघुनन्दनादिकृत उद्वाहतत्त्वादि पुस्तकों के प्रमाण भी हम उद्धृत करते हैं कि जिन को लेकर लोग बालाविवाह का पक्ष करते हैं ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे लिखते हैं कि यम अङ्गिरा अत्रि काश्यप का मत है कि-

अङ्गिरा—अष्टवर्षा भवेद्गौरी नववर्षा च रोहिणी।
दशमे कन्यका प्रोक्ता अत ऊर्ध्वं रजस्वला ॥
तस्मात्संवत्सरे प्राप्ते दशमे कन्यका बुधैः ।
प्रदातव्या प्रयत्नेन न दोषः कालदोषतः ॥

अर्थ—आठ वर्ष की गौरी ९ वर्ष की रोहिणी १० की कन्या फिर रजस्वला । इस लिये १० वर्ष में यत्न-पूर्वक विवाह करदे तो समय के दोषसे कुछ दोष नहीं।

प्रथम तो सत्यव्रत सरीखों ने इसे खोजा तो वह लिखते हैं कि यह प्रमाण उन उन पुस्तकों में मिलते ही नहीं । फिर दूसरे हमने भी स्वयं पुस्तकें निकाल कर देख लिये हम को भी नहीं पाये, तीसरे इस में स्वयं वह लिखते हैं कि (न दोषः कालदोषतः) इस से स्पष्ट सिद्ध है कि मुसलमानी बादशाहों के वक़्त में यह श्लोक बने हैं तभी तो काल का दोष बतलाया है।

श्लोकलेखक को स्वयं १० वर्ष की कन्या का विवाह शुभ नहीं भान होता बल्कि काल का दोष बता कर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इशारा करता है कि यद्यपि वेदों, ब्राह्मणों और सूत्रों तथा स्मृतिओं में इस का दोष है, परन्तु कालानुसार दोष नहीं ॥

आगे रघुनन्दन लिखता है कि । यमः—

कन्या द्वादश वर्षाणि याऽप्रदत्ता गृहे वसेत् ।
ब्रह्महत्या पितुस्तस्याः सा कन्या वरयेत्स्वयम् ॥

अर्थ—विना विवाही कन्या जिस के घर १२ वर्ष वास करे, उस के पिता को ब्रह्महत्या होती है और वह कन्या स्वयंवर कर ले ॥

अत्रिकाश्यपौ—पितुर्गृहे च या कन्या रजः पश्यत्यसंस्कृता । भ्रूणहत्या पितुस्तस्याः सा कन्या वृषली स्मृता ॥

इत्यादि बनावटी श्लोक बहुत से लिखे हैं, इस से सिद्ध होता है कि उस समय में धर्मरक्षार्थ यह वाक्य प्रचलित किये गये थे, परन्तु अब इन का पता भी स्मृतियों के पुस्तकों में नहीं है । हमारे पास बम्बई और अलीगढ़ की छपी स्मृतियां मौजूद हैं, उन में इन को खोजा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो निशान भी नहीं। काश्यप ग्रन्थ तो मिलता ही नहीं यह सत्यव्रत कहते हैं। तथा इस उद्वाहतत्व से पहिले बने विवाहतत्वार्णव में यह लिखा है कि—

अथ कन्यावरवयःक्रमः—"द्वादश वर्ष-षोडशवर्षयोः कर्म्मापेक्षो व्यवस्थितो विकल्पः। सर्वत्र यवीयस्त्वमात्रेण विवाहस्य प्राशस्त्य-मित्यत्र तात्पर्य्यम्।"

तात्पर्य यही है कि १२ वर्ष की कन्या और १६ वर्ष के वर के विवाह का विकल्प भी युवावस्था के विवाह की ही प्रशस्तता, उत्तमता और शास्त्रीयता सिद्ध करता है॥

ब्रह्मपुराण में

अथ तत् द्वादशाहानि त्रिंशद्वर्षेण सर्वदा।
यदि द्वादशवर्षा स्यात् कन्या रूपगुणान्विता॥
द्वात्रिंशद्वर्षपूर्णेन यदि षोडशवार्षिकी।
लब्धा तदा तु स्थातव्यं षड्रात्रं संयतेन तु॥
विंशत्यब्दा यदा कन्या वस्तव्यं तत्र वै त्र्यहम्।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतऊर्ध्वमहोरात्रं वस्तव्यं संयतेन वै ॥

इस से सिद्ध होता है कि पुराणों के समय भी २० वर्ष से अधिक तक की कन्या का विवाह होता था ।।

वाचकवृन्द ! आज आप को यह भी दर्शाना उचित जानता हूं कि यह पुस्तक विवाहतत्त्वार्णव और उद्वाहतत्व किस समय के बने हुवे हैं। सामश्रमी लिखते हैं कि इस पुरानी पुस्तक में यह श्लोक लिखा है:—

" विवाहतत्वार्णव ,, के कर्त्ता तो श्रीकर आचार्य के पुत्र श्रीनाथ हुवे हैं। इन श्रीनाथ के शिष्य ही रघुनन्दन भट्टाचार्य थे। स्मार्त्त ग्रन्थ रघुनन्दन भट्ट को श्रीनाथ जी ने ही पढ़ाये थे। मलमासतत्व ग्रन्थ में (गुरुचरणास्तु) इस पद की व्याख्या में उन्हों ने अपने गुरु का वर्णन किया है और काशीराम वाचस्पति ने भी ऐसा ही लिखा है।

जिन ग्रन्थों के पाठ हमने ऊपर लिखे हैं वे श्री रघुनन्दन भ० के गुरु के पौत्र पण्डितवर वाणीनाथ ने शाके १४९१ में लिखे हैं जिस के अन्त में यह श्लोक लिखा है ।।

"शाके विधुनवभुवनैरब्दे रामं प्रणम्य लिपिमकरोत्।श्रीयुतवाणीनाथो विवाहतत्वार्णवस्यास्य,,॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ—शाके १४९१ में राम को प्रणाम कर वाणीनाथ ने इस विवाहतत्वार्णव को लिखा ।।

इस पुस्तक के आदि के पत्रे पर एक जन्मकुंडली लिखी है जो श्रीजगदीश शर्मा के पुत्र की है ।

न्याय के प्रसिद्ध पुस्तकों में जागदीशी की गणना है, यह इन ही जगदीश की बनाई हुई है ॥

यह जगदीश तर्कालङ्कार वाणीनाथ के भाई थे ।

"आग्रहायणस्योनविंशादिवसे शुक्रवारे शुक्लाष्टम्यां रात्रौ दण्डसप्तके तिष्ठति तुलालग्ने धनिष्ठाकुम्भराशौ चन्द्रे पञ्चनवत्युत्तरचतुर्दशशतीमितशकाब्दे श्रीजगदीशशर्म्मणः शुभकुमारो जातः ॥ मेषे० वृषे रा० ४ मिथुने बृ० ७ कर्कटे० सिंहे० कन्यायम्० तुलायां शु० १६ ल० वृश्चिके श० १८, के० १८, र० १८, बु० १८ धनुषि० मकरे० कुम्भे म० २३ च० २३ मीने०॥"

इसी पुस्तक के साथ ताड़के दो पत्रों पर एक वाटीविक्रेय लेख (बाग़ का बैनामा) मिला है जो सिद्ध करता है कि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस समय मुसलमानी राज्य था, जिस की नकल हम ज्यूं की त्यूं छापते हैं ॥

" स्वस्ति समस्तसुप्रशस्तीत्यादि-महाराजाधिराजश्रीश्रीहजरतआल्लेदेवपादानामभ्युदयिनि गौड़राज्ये ओजीरश्रीशेखफरीदमहाधिष्ठितहुसेनावाजमुल्लुकेश्रीशिखिमहापात्रमहाशयाधिकृतनवद्वीपसीके नवत्यधिकचतुर्दशशताब्दीयश्रावणे मासि श्रीरामतर्कालङ्कारभट्टाचार्याणां सदसि श्री जगन्नाथाचार्यात् शिवाङ्काधिकषण्मुद्रां मूल्यमादाय पूर्वस्यां गोविन्दशरणवाटी, दक्षिणस्यां श्रीकृष्णदासचक्रवर्त्तिवाटी, पश्चिमायां पुष्करिणी, उत्तरस्यां दिशि श्री पुरुषोत्तमाचार्यवाटी, इत्थं चतुःसीमाबद्धं वायुकोणारामान्तर्गतं वाटीखण्डं श्रीवल्लभाचार्यहरिदासपण्डिताभ्यामुपरिलिखितनाम्नि वि-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्तदातरि विक्रीतमिति। शाके १४९० ति० ४ श्रावणम् ॥

श्रीवल्लभाचार्य्यस्य। श्रीहरिदास शर्म्मणः (बालकः)। अत्रार्थे साक्षिणः—

श्रीगुरुदासशर्म्माणः श्रीव्रजनाथचक्रवर्त्तिनश्च श्रीमाधवभट्टाचार्यः श्रीपुरुषोत्तमाचार्याः श्रीजानकीनाथशर्म्माणः श्रीगुरुदासशर्म्माणः श्रीदुर्गादासशर्म्माणः श्रीदुर्गादासाचार्याः श्रीजगदानन्दसेनः श्रीनरहरियाज्ञिकः श्रीमुकुन्दशर्म्मा श्रीमाधवशर्म्मा श्रीबलभद्र—श्रीयदुनन्दनशर्म्मा। श्रीज्ञानानन्दशर्म्मा श्री रमानाथशर्म्मा श्रीजितामित्रशर्म्मा श्रीब्रह्मानन्दशर्म्माणः श्रीगौरीदासशर्म्माणः श्रीसाहामल्लिकः श्रीवल्लभदासः”

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन सब प्रमाणों से सिद्ध हो गया कि मुसलमानोंके राज्य से ही बालाविवाह की प्रथा और राजपूतों में कन्या हनन की रीति चली है। क़ुरान के "निशा" नाम के ४ थे सिपारे में विधर्मियों की कन्या लूटने की आज्ञा लिखी है "मीना बाज़ार" कन्याप्रदर्शिनी यह तो अक़बरीय इतिहास से स्पष्ट ही है ॥

जिस का विवाह हो जाय फिर उसे छीनना मुसलमानों के भी वर्जित है ॥

हमने ऊपर स्मृति, वेद, ब्राह्मण, श्रौतसूत्र, स्मृति, नाटक, महाभारत, पुराण आदि के प्रमाणों से सिद्ध किया है कि पूर्वकालमें थोड़ी अवस्था में कन्याओं का विवाह नहीं होता था, यह मुसलमानों के राज्य से ही बुरी प्रथा चली है, इस में कुछ थोड़े से और भी प्रमाण हमने संग्रह किये हैं जिन को आगे लिखते हैं। क्योंकि हमारा मुख्य अभिप्राय धर्माधर्म के निर्णयमें मनु महाराज के मन्तव्यानुकूल ही है। इस लिये–

श्रुतिःस्मृतिःसदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम् ॥१॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेद, स्मृति के प्रमाण बहुतेरे हैं। सदाचार के भी प्रमाण इस पुस्तक के पृ० ८।९ में राजा नलदमयन्ती-विवाह पृ०१० में श्री रामचन्द्र जी और सीताका विवाह पृ० ११ में श्री कृष्णचन्द्र और रुक्मिणीकी विवाह के समय युवावस्था थी, यह भी दर्शाया है। परन्तु कोई २ लोग ऐसा कहते हैं कि श्री रामचन्द्र सीता के विवाह में हनुमन्नाटक मान्य ग्रन्थ नहीं। इस लिये हम वाल्मीकीय रामायण का ही प्रमाण देते हैं॥

वाल्मीकीय रामायण अयोध्या काण्ड—

पतिसंयोगसुलभं वयो दृष्ट्वा तु मे पिता।
चिन्तामभ्यगमद्दीनो वित्तनाशादिवाऽधनः॥

सर्ग ११८ श्लोक ३४

अत्रि ऋषि की स्त्री अनसूया के प्रति सीता अपना पूर्व वृत्तान्त सुनाती है कि पतिसंयोग सुलभ मेरी आयु को देख मेरा पिता चिन्ता को प्राप्त हुवा, जैसे धननाश से निर्धन। पतिसंयोग सुलभ आयु ऋतु से पूर्व नहीं होती, यह इस पुस्तक में ही बहुत प्रमाणों से सिद्ध किया गया है॥

इस के अतिरिक्त अर्जुन द्रौपदी का भी विवाह युवावस्था में हुवा था और भीष्म जी काशिराज की कन्या

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अम्बा को जब लाये थे वह भी युवति थी। भारतके उद्योग पर्वान्तर्गत अम्बोपाख्यान पर्व में स्पष्ट लिखा है कि जब अम्बा कन्या को भीष्म जी अपने छोटे भाई विचित्रवीर्य से विवाहने लगे तब अम्बा ने कहाकि मैंने तो शाल्व राजा को वरा है। इतनी सुन भीष्म ने उसे शाल्व के भेजदी। जब वह शाल्व के पहुंची तब शाल्व ने कहा कि तू मेरे योग्य नहीं, क्योंकि परास्पृष्टा को साधुजन सर्पिणीके समान समझते हैं, वहां अम्बा का युवतीत्व भी दर्शाया है॥

पाण्डवोंसे द्रौपदी कितनी छोटी थी और द्रौपदी की विवाहमें अवस्था॥

(महाभारत आदि पर्व भारतयुद्ध की बुनियाद)

सम्भव उपपर्व अ०१४०के लग भग एक—समय द्रोणाचार्य राजा द्रुपद को अपना सहाध्यायी जान उस के नगर में एक गौ लेने गये और जाकर "मित्र!" ऐसा कहा, राजा द्रुपद को क्रोध आया कि तू बड़ा असभ्य है, जो पाठशाला के सा बर्त्ताव करता है। राजा प्रजा, मूर्ख पण्डित, धूर्त्त अधूर्त्त, धनी निर्धन की मित्रता नहीं हो सकती। यह सुन द्रोणाचार्य वहां से चले आये और परशुराम से धनुर्विद्या पढ़, पाण्डव और कौरवों को भली

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भांति विद्या पढ़ाई और गुरुदक्षिणा में यही मांगा कि राजा द्रुपद को पकड़ कर लादो। अर्जुन बान्ध कर द्रोणाचार्य के पास लाया, तब राजा द्रुपद ने कहा "मित्र द्रोण!" यह क्या कराया। इतनी सुन कहा कि बस कह दो कि राजा प्रजा की भी मित्रता हो सकती है। द्रुपद ने कह दिया। तब आधा राज्य अपनी ओर से छोड़ दिया। अर्ध राज्य पाय, राजा द्रुपद ने ऐसी सन्तान उत्पन्न करने के लिये यज्ञ किया कि जो द्रोणाचार्य को मारे, तब द्रौपदी और धृष्टद्युम्न दोनों जोड़िया हुवे। अब सोचिये कि द्रौपदी पाण्डवों से कितनी छोटी थी॥

जब अर्जुन सब विद्या पढ़ चुका तब द्रुपद को जीता, उस के अनन्तर द्रुपदने यत्न किया कि उत्तम सन्तान द्रोणाचार्य के मारने योग्य हो। फिर भी द्रौपदी उत्पन्न होकर भी युवति होगई थी क्योंकि युवति स्त्रीको ही देख कर कामदेव उत्पन्न होना सम्भव है॥ जैसा कि—

तेषां तु द्रौपदीं दृष्ट्वा सर्वेषाममितौजसाम्।
सं प्रमथ्येन्द्रियग्रामं प्रादुरासीन्मनोभवः॥

महाभारत आदि पर्वान्तर्गत स्वयंवर पर्व १९३। १३

इत्यादि अनेक प्रमाण युवति विवाह के ही पाये जाते हैं।

आपका सुहृद्—छुट्टनलाल स्वामी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ ओ३म् ॥

ट्रैक्ट नम्बर १०

षट्शास्त्रों की उत्पत्ति का क्रम

जिस को

स्वामी दर्शनानंद सरस्वती जी ने

दयानन्द ट्रैक्ट सोसाइटी के हितार्थ

महाविद्यालय मैशीन प्रेस

ज्वालापुर हरिद्वार में

छपवाया

2.1/63

—=+:❋:+=—

४००० [प्रति [मूल्य)।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

षटशास्त्रों की उत्पत्ति का क्रम ।

प्रियपाठक ! आजकल भारतवर्ष क्या प्रत्युत सारे संसार में शास्त्रों के प्रचार के न्यून होने से हमारे शास्त्रों के विरुद्ध बहुत से विषय प्रकाशित होरहे हैं - कुछ महाशय तो यह कहरहे हैं कि शास्त्रों के विषय एक दूसरे के विरुद्ध हैं कुछ लोग यह कहते हैं कि यह सांख्यसूत्र नहीं प्रत्युत यह तो विज्ञान भिक्षुका बनाया हुआ है-अनेक गौतम और कणादादि को नास्तिक और वेदविरोधी बतलाते हैं बहुत महाशय कपिल जीको अनीश्वरवादी अर्थात् नास्तिक कहते हैं-अनेक मनुष्यों को इन-दर्शनों के विषय और क्रम में भ्रम है-प्रयोजन यह कि शास्त्रों के विषय में बहुत से संशय उन लोगों ने फैलाये हैं जिनको शास्त्रों के मुख्य अभिप्राय से सर्वथा अनाभिज्ञता है और उन्होंने विषयों के क्रमको न समझकर केवल शब्दों से अपने मनमाने विचार को पुष्ट किया है-बहुत लोगों ने शास्त्रों के विषय में नवीनग्रन्थों को जो शास्त्रों के मुख्य सिद्धान्तों से अनेकस्थलोंपर दूर निकलगये उनको शास्त्र मानकर उनके विरोध से शास्त्रों में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विरोधमान लिया है-अतएव हम अपना कर्तव्य समझते हैं कि शास्त्रों के बारे में विचार आरम्भकरके मनुष्यों के चित्त से इस अयुक्त विचार को पृथक करने का प्रयत्न करें कि जिससे शास्त्रों के मुख्य सिद्धांतसंसारमें प्रचलितहोजावें जिससे मनुष्यों को इन अमूल्य रत्नों से जो मनुष्य जीवन के मुख्य उद्देश्य के जतलाने वाले हैं प्रीति होजावे और वह इससे लाभ उठावें यद्यपि हम अपने आपको इस योग्य नहीं समझते कि इस महान विषयको भली भांति विचार सकें और न यह कि सामाजिक कामों से इतना अवकाश है कि जिससे इस गंभीर विषय को पूर्णतया विचार सकें परन्तु तोभी परमात्मा का आश्रय ले जहांतक साध्यहोगा हम अपने टरेक्टों के क्रम से इस कर्तव्यको पूरा करनेका यत्न करेंगे ॥

प्यारे मित्रो ! सबसे प्रथम जबकोई मनुष्य किसी वस्तुको ग्रहण करे अथवा उसको निकृष्ट जान त्यागने का प्रयत्न करे इस बातकी आवश्यकता है कि वह उस वस्तु से भिज्ञ होजावे कि जिससे भले, बुरे सत्य और असत्यका ज्ञान होजावे जब तक मनुष्यों को इस कसौटी का ज्ञान नहीं होता तबतक उस का सब काम अधूरा रहता है और जब मनुष्य इस कसौटी को प्राप्त कर लेता है उस समय वह उन वस्तुओं को परखना आरम्भ करता हैजो उसकोसामने आतीहै और वहउनको प्रत्यके दशा में कार्य और कारण से अनुभव करता है और जिस समय उसको यथार्थ रीति से जान जाता है तो वह उनको दुःख

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुखानुसार आत्मा के अनुकूल अथवा प्रातिकूल होनेका ज्ञान करदो भागों में विभाजित करता है जब भाग होगये तो अनुकूल से मेलकरना प्रारम्भ करता है और प्रतिकूल से बचता है जब वह अनुकूल भागसे प्रीति करता है तो उस के स्वभाव से जो अनकूल भागके मेल से उत्पन्न होगई थी उसे प्रतिकूल शक्ति यों से मिलने नहीं देती अतएव उसे प्रतिकूल स्वभाव के दबाने के हेतु अनुकूल शक्तियों को पैदा करना पड़ता है जब अनुकूल स्वभाव से प्रातिकूल को दबा लेताहै तब वह अनुकूल शक्तियों की खोज आरम्भ करता है जहां २ ले वह मिलती हैं ग्रहण करता चला जाता है और उससे पूण सुख प्राप्त करता है ॥

प्यारे पाठको ! इसीसृष्टि क्रमके अनुसार बराबर हमारे ऋषिचले है और उन्होंने छः दर्शनों में इन्ही छः प्रयोजनोंको जो मनुष्यों केमुख्य उद्देश्य के निमित्तआवश्यक हैं सिद्ध करादिया है प्रथम दर्शन न्याय दर्शन है जिसको महात्मा गौतम ऋषि ने बनाया है इसमें प्रमाण वादही पर विचार किया गया है और प्रमेय के सिद्धकरने के वास्ते जो २ प्रमाण आवश्यकीय हैं और जिन साधनों से विचार करने की आवश्यकता होती है और जिनकारणों से विचारों में त्रुटि आजाती है और जिन कारणों से ज्ञात होजाता है कि विचार पूरा होगया उनकी व्याख्याकी गई है और यह भी सूचित कर दिया गयाहै कि मनुष्य जीवन

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का उसके मुख्य उद्देश्य पर पहुंचना विना इन वस्तुओं के ज्ञान के असम्भव है और इसकेनिमित्त महात्मा गौतम ने १६ पदार्थों का ज्ञान आवश्यकीय समझा है-१ प्रणाम, २ प्रमेय, ३ संशय, ४-प्रयोजन, ५ दृष्टान्त, ६—सिद्धांत, ७ अवयव, ८-तर्क, ९ निर्णय, १० वाद, ११ जल्प, १२-वितंडा, १३-हेत्वाभास, १४-छल, १५-जाति, १६-निग्रहस्थान।

पाठक गण! जब इसप्रकार सेमहात्मा गौतमजीने प्रमाणवाद को स्पष्ट करदिया तो महात्मा कणाद ज़ीने प्रमेयवस्तुओं का साधर्म्य और वैधर्म्य जतलाने के निमित्त वैशेषिक दर्शन बनाया इस दर्शन में महात्मा कणाद जीने प्रमेयको छः भागों में बांट दिया १ द्रव्य, २-गुण, ३ कर्म्म, ४ सामान्य, ५ विशेष, ६ सम्वाय। अब उन्होंनें द्रव्य में ९ पदार्थ लिये अर्थात् १ पृथ्वी २ जल, ३ तेज, ४ वायु, ५ आकाश ६ काल ७ दिशा ८ मन ९ आत्मा अर्थात् जीवात्मा व परमात्मा। इसी प्रकार २४ गुण बतलाये १ रूप २ रस, ३ गंध, ४ स्पर्श ५ सख्या ६ परिमान, ७ पृथकत्व, ८ संयोग, ९ विभाग, १० प्रत्व, ११ अप्रत्व, १२ बुद्धि, १३ सुख, १४ दुख, १५ इच्छा, १६ द्वेष, १७ प्रयत्न १८ गुरत्व, १९ द्रवत्प २० स्नेह, २१ संस्कार २२ धर्म २३ अधर्म २४ शब्द

इसी प्रकार पांच तरह के कर्म हैं। १-उतक्षेपण अर्थात् ऊपर उठना, २—अवक्षपन अर्थात् नीचे गिरना ३- आकुंचन अर्थात् सुकुडना, ४-प्रसारण अर्थात् फैलना, ५-गमन अर्थात्

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाना और सामान्य विशेषादि बतला बड़ी योग्यता से प्रमेय वाद की व्याख्या करदी। प्यारे पाठको! जब इस प्रकार महात्मा गौतम और कणादादि अपने न्यायदर्शन और वैशेशिक को लिख कर चलेगये तब महात्मा कपिल जी आये उन्होंने कहा कि प्रमाण और प्रमेय का ज्ञान तो हो गया परन्तु गम्भीर विचारों में प्रत्येक पुरुष कृतार्थ नहीं हो सकता अतः दुःख और सुख जो दो गुण हैं उन के आधार की खोज करनी चाहिये जिस से तीन प्रकार के दुःखों की निवृत्ति होजावे अब उन्होंने देखा कि संसार में दो प्रकार के पदार्थ हैं एक जड दूसरे चेतन अतएव उन्होंने प्रकृति पुरुष का पृथक २ जानना मुक्ति का कारण बतलाया कारण यह कि वैशेषिक में बतला चुके थे कि साधर्म्य से सुख और वैधर्म्य से दुःख की प्राप्ती होती है इसी कारण चेतन जीवात्मा को चेतन और अचेतनका ज्ञान आवश्यकहै उन्होंने सिद्ध किया कि जितना जगत् है उसका उपादान कारण प्रकृति है परन्तु प्रकृति जड और दुख देने वाली है अतएव उस के कार्य जगत् से जितनी प्रार्थना की जावेगी कुछ भी सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती इस लिये प्रकृति पुरुष का विवेक करने वाला सांख्य शास्त्र बतलाया और अच्छी प्रकार से अपने विषय को सिद्ध किया ॥

पाठकवृन्द जब महात्मा कपिल इस प्रकार जड और चेतन को अलग २ बतलाकर चलेगये तब महात्मा पातंजलि ऋषि आये और उन्होंने कहा कि संसार में जिस कदर दुख हैं सब चित्त की वृत्तियों के विक्षेप से अर्थात् मन के विचारों के स्थिरत्न

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने से उत्पन्न होते हैं और प्रकृति के पदार्थों को मन जानकर आगे चले देता है जिस से चित्तवृत्ति एकान्त नहीं होती और चित के एकान्त न होने से सुख की प्राप्ति नहीं होती अतएव उन्होंने कहा कि योग करके चित्त की वृत्तियों को रोकना चाहिये क्योंकि संसार के समीप पदार्थों से चित्त की वृत्तिका अनुरोध नहीं होसकता अतः अनन्त परमेश्वर के साथ अथवा चैतन्य जीव आत्मा का परमात्मा के साथ योग होना चाहिये इस के लिये उन्होंने अंग नियत किये हैं ॥

१—यम २—नियम ३—आसन ४—प्राणायाम ५—प्रत्याहार ६—धारणा ७--ध्यान ८--समाधि ॥

इस प्रकार महात्मा पातंजलि ने अविद्या को दूर करकेजड से प्रीति हटाकर चैतन्य परमात्मा से योग करकेसुख की प्राप्ती का निश्चय करादिया ॥

महाशयगण जब इस प्रकार महात्मा पातंजलि योग से चित्त की वृत्तियों के रोकनेकी आज्ञा देकर चले गये तो महात्मा जैमिनि जी महाराज आये उन्होंने कहा कि योग से चित्त के रोकने में जो बुरे कर्मों के संस्कार पैदा हुये अविद्या के संस्कार विघ्नकारक होंगे उन से कभी भी मन की वृत्तियां रुक न सकेंगी अतएव पहिले मन के मल रूपी दोष दूर करने के लिये शुभ नैमित्तिक कर्मों को करना चाहिये जिस के चित में दोष का लेष न रहे और मन का प्रवाह जो दुष्कर्म्मों की तरफ लग रहा है हट कर अच्छे कर्मों की तरफ लगजावे फिर उस मल दोष के दूर होने के बाद विक्षेप के दूर करने के

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधन उपासना योग से काम चल जायगा उन्होंने व्रतदान इत्यादि बहुत से कर्म मल दोष के दूर करने के लिये बतलाये और उन की विधि अपने मीमांसा शास्त्र में अच्छे प्रकार से प्रकाशित करदी ॥

प्रियपाठको जब महात्मा जैमिनी जी महाराज ने अपने को इस भांति पर बयान कर दिया तब महात्मा व्यास जी ने कहा कि प्रमाण का भी ज्ञान होचुका और प्रमेय भी जान लिया और जड़ चैतन्य अर्थात् प्रकृति पुरुष को भी पृथक २ समझ लिया और योग करने का विचार भी ठीक है और योग में जो विघ्न पड़ेगा उन के रोकने के लिये मीमांसा शास्त्र के कर्म भी ज्ञात होगये परन्तु जिस चेतन के साथ योग करना है अभी तक उस को तो नितान्त जाना ही नहीं अतः ब्रह्म के जानने की इच्छा करनी चाहिये अतएव उन्हों ने वेदान्त शास्त्र बनाया जिस में केवल ब्रह्म के यथार्थरूप का ज्ञान होजावे उन्होने उस को इस प्रकार अरम्भ किया ॥

अथातो ब्रह्म जिज्ञासा ।

अर्थ–प्रमाण प्रमेय, प्रकृति पुरुष और धर्मादि के पश्चात् ब्रह्म ज्ञान की इच्छा करते हैं जब उन से प्रश्न हुआ कि ब्रह्म क्या है तो उन्होंने उत्तर दिया ॥

जन्माद्यस्य यतः ।

अर्थ–जिस से इस सृष्टि की स्थिति और उत्पत्ति और नाश

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है इस कारण सम्पूर्ण शास्त्र में ब्रह्मज्ञान बतलाया ॥

प्रियपाठक आप कहेंगे कि इन शास्त्रों के यह नाम किस प्रयोजन से हुवे और तुम जो कहते हो कि शास्त्रों का यह प्रयोजन है इस में क्या प्रमाण है इस का उत्तर यह है कि शास्त्रों के नाम यौगिक हैं और वह अपने २ विषय को प्रतिपादन करते हैं ॥ (१) न्याय का लक्षण यह है-

प्रमाणैरर्थ परीक्षणमन्यायः ।

अर्थ—जिसने प्रमणों के द्वारा अर्थ अर्थात् सुख दःखके कारण की परीक्षा करना बतलाया हो उसे न्याय कहते हैं वैशेषिक जिसमें विशेष तौर पर साधर्म्य और वैधर्म्य को बत लाकर पदार्थों के यथार्थ ज्ञान को मुक्तिका सच्चा साधन बतलाया हो जिसमें संख्या की गई हो उसे सांख्य कहते हैं और योग के तो अर्थ चित्तवृत्ति के रोकने और मिलने के हैं और मीमांसा में मन के दोषों को दूर करने के लिये कर्म काण्ड है अब रहा वेदान्त इसका नाम इस प्रयोजन से रक्खा है कि वेद नाम है ज्ञान का और अन्त नाम है सीमा का अर्थात् ज्ञान की सीमा क्योंकि ज्ञान से बढ़ कर और कोइ ज्ञान नहीं इस कारण ब्रह्मज्ञान बतलाने वाले शास्त्र को वेदान्त कहा दूसरे यजुर्वेद के अन्त के अध्याय में वेदान्त का मूल है जिसे ईश उपनिषद कहते हैं शेष उकका व्याख्यान है वह ईश उपनिषद् वेद के अन्त में है इस वास्ते भी वेदान्त कहा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठक वृन्द हमारे वहुत से मित्र यह समझरहे हैं कि सब से पहला शास्त्र सांख्य है परन्तु यह कथन सर्वथा अयुक्त है क्योंकि सांख्य दर्शन में न्याय और वैशेषिक का प्रयोग किया है जैसा कि लेख है।

नवयमषटपदार्थ वादिनो वैशेषिकादिवत्।

अर्थ अविद्या वादी जो सांख्य शास्त्र में पूर्व पक्ष करता है वह कहता है हम वैशेषिककी तरह छः पदार्थों के मानने वाले नहीं और यह भी कहा है कि सोलह और छः पदार्थों के ज्ञान से मुक्ति नहीं होती इसी प्रकार सांख्य दर्शन में बहुत से ऐसे प्रमाण मिलते हैं जिससे प्रत्यक्ष विदित होजाता है कि सांख्य शास्त्र न्याय और वैशेषिक के पश्चात बना सांख्य दर्शन के आरम्भ में रखने से क्रम में सर्वथा भ्रम पड़जाता है अनेक महाशय उन शास्त्रों को विरोधी जानते हैं परन्तु यह मिथ्या है, वेद जो तत्व ज्ञान का मुख्य पुस्तक है प्रत्येक शास्त्र उस का एक अंग है जिस प्रकार प्रथम सीढ़ी के वाद दूसरी सीढ़ी तो ठीक मालूम होती है परन्तु तीसरी के वाद पहिली और दूसरी बिल्कुल वेढंग कहलाती है योरोपियन ग्रन्थ रचयताओं ने जिन को वास्तव में दर्शनों की फिलासफी का यथार्थ ज्ञान नहीं उन्होंने सांख्य दर्शन को प्रथम और कपिल को नास्तिक माना है परन्तु कपिल नास्तिक है यानहीं इस का जवाब तो हम दूसरे स्थान पर देंगे परन्तु सांख्य तीसरा शास्त्र

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है इस के लिये हम विज्ञान भिक्षुका भाष्य जो सांख्यदर्शन पर है प्रमाण में देते हैं देखो भूमिका सांख्य भाष्य पृष्ट २

तत्रश्रुतिभ्यः श्रुतेषुपुरुषार्थतद्धेतुज्ञानतद्विषयात्मस्वरूपादिषुश्रुत्यविरोधिनीरूपपत्ती षडध्यायीरूपेण विवेकशास्त्रेणकपिल-मूर्त्तिर्भगवानुपदिदेश । ननुन्यायवैशेषि-काभ्यामप्येतेष्वर्थेषुन्यायः प्रदर्शित इति ताभ्यामस्यगतार्थ त्वंसगुणनिर्गुणत्वादि विरुद्धरूपैरात्मसाधक तयातद्युक्तिभिरि-ति । मैवम् । व्यावहारिक पारमार्थिक रूपविषयभेदन गतार्थत्वविरोधयोर भावात् ॥

अर्थ-श्रुति में जो मनुष्य जीवन का उद्देश्य तीन प्रकार के दु:खों की निवृत्ति बतलाई है और उस का कारण आत्मा का

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथार्थ ज्ञान बतलाया है उस के लिये महात्मा कपिल ने छः अध्याय रूप वेदानुकूल युक्तियों की एकत्रता अपने शास्त्रों में लिखीं अब वादी शंका करता है कि यह युक्ति से तत्वज्ञान न्याय व वैशेशिक में कहा गया है इस कारण यह उस में आ-चुका है यदि किसी भाग में यह उन से विरुद्ध है तो युक्तियों के आपस में विरुद्ध होने से दोनों का ही प्रमाण मुशकिल होगा। विज्ञान भिक्षु उत्तर देता है कि ऐसा मत कहो कारण यह कि व्यावहारिक और पारमार्थिक रूप विषय का भेद है अतएव न तो सांख्य का विषय न्याय और वैशेशिक में आगया है और न उन का विरोध ही है॥

प्रिय पाठक! आपने समझ लिया होगा कि विज्ञानभिक्षु जिसने कई दर्शनों का टीका किया है और वर्तमान् काल के पंडित उस को प्रामाणिक मानते हैं वह भी इस पक्ष की पुष्टि करता है कि न्याय वैशेषिक प्रथम के हैं जैसा कि सांख्य-दर्शन के मूल में न्याय वैशेषिक का कथन किया गया है है और टीका कार विज्ञानभिक्षु भी उन को सांख्य से प्रथम का मानता है फिर कुछक महाशयों का कथन कि जो दर्शनों के मत से अनभिज्ञ है किस प्रकार प्रमाणिक हो सकता है॥

बहुधा लोग यह कहते हैं कि यह सांख्य दर्शन कपिल का बनायाहुआ नहीं प्रत्युत तमाम सांख्य सूत्र जो कि कपिल जी ने केवल तत्व की व्याख्याके निमित्त बनाये हैं वह सांख्य सूत्र है और यह विज्ञान भिक्षु के बनाये हुये हैं परन्तु उनका कहना किसी प्रकार से ठीक नहीं होसकता क्योंकि इसी सां-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख्य के सूत्रों को पेश करके वहुत से लोगों ने सांख्य को नास्तिक वा अनीश्वर वादी सिद्ध करनेका यत्न किया है अगर यह सूत्र न हो तो कपिल जी को कोई नास्तिक कहही नहीं सक्ता था केवल इन सूत्रों में इस सूत्र को देख कर लोगों को भ्रम होगया।

ईश्वरासिद्धे।

अर्थ—ईश्वर की सिद्धि नहीं होती क्योंकि ईश्वरमें प्रत्यक्ष प्रमाण तो होही नहीं सकता क्योंकि वह इन्द्रियों का विषय नहीं और प्रत्यक्ष इन्द्रिय जन्य होता है जिसका तीन काल प्रत्यक्ष नहो उसका अनुमान भी हो नहीं सकता क्योंकि अनुमान ज्ञान व्याप्ति यानी संवन्ध से होता है और जिसका तीन काल मे प्रत्यक्ष नहीं उसकी व्याप्ति होही नहीं सकती रहा शब्द सो वह आप्त के होने से प्रमाण होता है और आप्त कहते हैं जो धर्म्म से धर्म्मी का ज्ञान प्राप्त करके उपदेश करे—ईश्वर के परोक्ष न होन से उसके धर्म्म का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं होता अतएव ईश्वर में कोई प्रमाण नहीं और प्रमाण के न होन से उसकी सिद्धी सांख्य के माने हुये प्रमाणों से नहीं होसक्ती।

प्रिय पाठको अब आप समझ गये होंगे कि दर्शनों का यह क्रम है गोतम का न्याय दर्शन १— कणादि का वैशेषिक दर्शन २—कपिल का सांख्य दर्शन ३—पातंजलि का योग दर्शम ४—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैमिनि का मीमांसा दर्शन ५—व्यास का वेदान्त दर्शन ६—यह सिद्धान्त तो आज तक के विद्वानों का चला आया है ॥

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

महा विद्यालय

में गुरुकुल, अनाथालय, उपदेशक पाठशाला, साधूआश्रम, गौशाला, आर्टस्कूल; इत्यादि उपस्थित हैं ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

स्वामी दयानन्द
और
हिन्दू समाज

ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः
पुस्तक सं० 2.1/62
आगत सं० 96.22
तिथि०
गुरुकुल पुस्तकालय कांगड़ी

भद्रदत्त शर्मा पाठक

गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* ओ३म् *

स्वामी दयानन्द

और

हिन्दू समाज

लेखक तथा प्रकाशक

भद्रदत्त शर्मा पाठक 'तर्क रत्न'

मन्त्री

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा

शाखा मुरादाबाद

प्रथमबार १०००] संवत् १९९२ [मूल्य =)

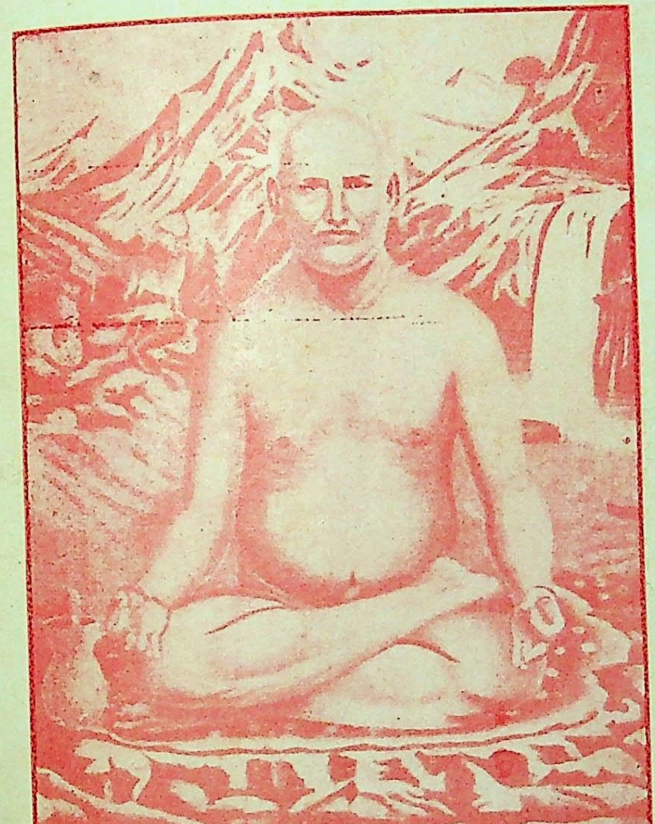
CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी दयानन्द और हिन्दू समाज



श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपहार

श्री..........................

....

की सेवा में

सादर सप्रेम समर्पित ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

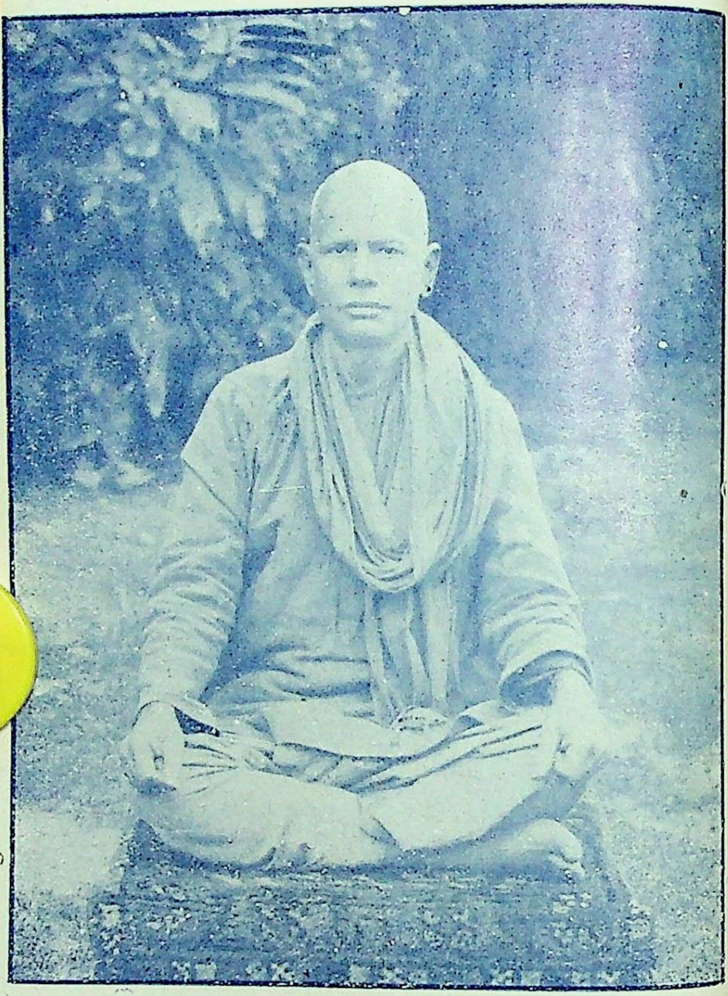
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



श्री पूज्य नारायण स्वामी जी महाराज।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समर्पण

आर्य्य समाज के प्रकाश स्तम्भ
और अन्य-तम नेता,
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
देहली
के प्रधान
वीतराग, पूज्यपाद
श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज
की सेवा में
सादर समर्पित।

अनुचर—

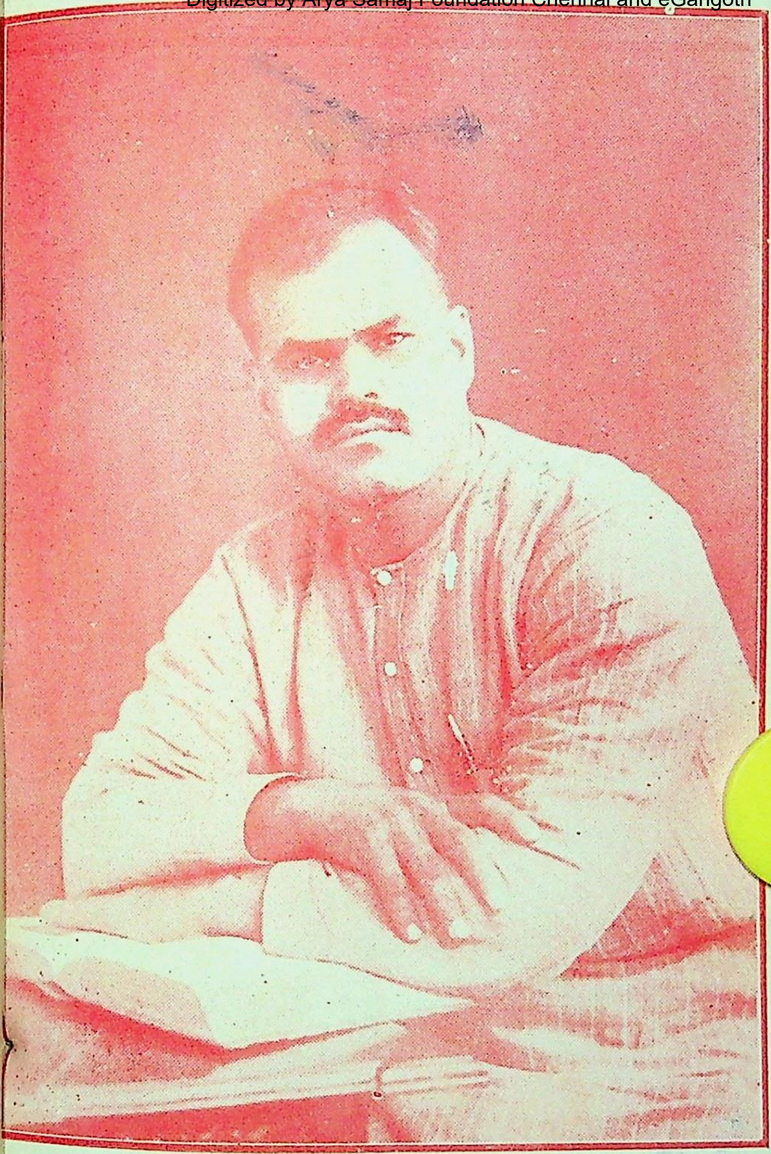
पद्मदत्त शर्मा 'पाठक'

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



प० भद्रदत्त पाठक 'तर्करत्न'

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राक्कथन

—❀—

वर्तमान हिन्दू-धर्म आर्य-धर्म का विकृत रूप है। वास्तविक हिन्दू-धर्म के स्पष्टीकरण और उसके विकृत रूप को परिष्कृत करने के लिये जिन दिव्य आत्माओं ने अपना जीवन न्यौछावर किया है उन्हीं में से ऋषि दयानन्द एक थे। ऋषि दयानन्द का स्थान उन सब में ऊँचा है, यदि ऐसा कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। ऋषि दयानन्द के समय वा इससे कुछ पूर्व के हिन्दु-धर्म का स्वरूप बड़ा ही बीभत्स था। उसमें मनुष्य की स्वार्थपरता, धूर्तता, लम्पटता अनाचार और पापाचार का बहुत ज़्यादा सम्मिश्रण देख पड़ता था। धर्म्म के नाम में अनेकों भद्दे रीति रिवाज़, रूढ़ियां, कुरीतियां और कुप्रथाएँ प्रचलित थीं। अज्ञान और अन्धविश्वास का प्रसार था। लोगों के दिमाग़ों और दिलों पर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताले लगे थे। मानसिक दासता पराकाष्ठा को पहुँच चुकी थी। उस समय का धार्मिक जीवन बड़ा निकृष्ट था। परिणामतः सामाजिक जीवन भी निकृष्ट तम था। ऋषि दयानन्द ने हिन्दूधर्म और हिन्दू समाज के विकृत रूप को देखा। उनका हृदय उन्हें देखकर रोया और उन्होंने इनके परिष्कृत करने का बीड़ा उठाया। और दोनों की कायापलट करदी। उनमें मौलिक परिवर्तन कर दिए, वे परिवर्तन जनता के सामने हैं। ऋषि दयानन्द ने हिन्दूधर्म्म के स्पष्टीकरण और उसके शुद्ध रूप की रक्षा के लिए क्या किया है, हिन्दूसमाज में क्या मौलिक परिवर्तन किया है, उनका किंचित आभास पाठकों को आगे के पृष्ठों से लगेगा।

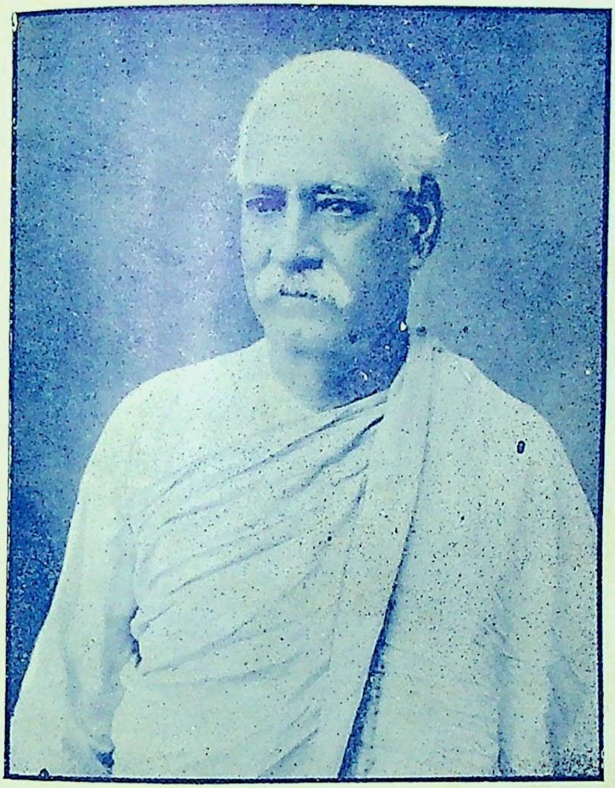
श्रीराम

भूतपूर्व मुख्याधिष्ठाता

गुरुकुल वृन्दावन।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



श्री बा० श्रीराम जी

भूतपूर्व मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल वृन्दावन ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी दयानन्द और हिन्दू-समाज

श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती का हिन्दू-समाज से वही घनिष्ठ सम्बन्ध है जैसा कि एक नदी का स्रोत से, स्रोतभ्रष्ट नदी अन्यान्य नदियों से मिल कर चाहे अपने को कितना ही विस्तृत करले किन्तु नाम और स्वरूप दोनों से सर्वदा को लुप्त हो जाती है। जान्हवी अपने स्रोत से सम्बन्धित ही प्रसिद्ध है। भागीरथी अपने साथ और अनेक नदियों से संगम करती हुई अपने गंगा नाम से ही विख्यात है।

यदि गंगा स्रोतभ्रष्ट हो जाती तो अन्यान्य

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नदियों की भांति अपने नाम से वंचित हो जाती। स्रोत से सम्बन्ध रखने ही के कारण जान्हवी को यह सौभाग्य प्राप्त है। स्वामी दयानन्द के पवित्र विचारों का स्रोत हिन्दूसमाज है। हिन्दू-समाज ही के मन्तव्य ग्रन्थों को वे अपने मन्तव्य ग्रन्थ मानते थे। अन्य मतावलम्बियों के धर्माभास ग्रंथों को इतनी मान्य की दृष्टि से अवलोकन नहीं करते थे जितनी कि हिन्दूसमाज के ग्रन्थों को। स्वामी दयानन्द को हिन्दूसमाज का संशोधक ही कहना उचित प्रतीत होता है। हिन्दूसमाज के ग्रंथ अनेक उचितानुचित विचारों से ऐसे मिश्रित होगये थे कि जैसे दुग्ध और जल मिल कर परस्पर एकांग हो जाते हैं। हिन्दूसमाज उन को पृथक् करनेमें असमर्थ था। ऐसी दशामें स्वामीजी ही ने अपनी ईश्वर प्रदत्त हंसवत् विवेक बुद्धि से हिन्दूसमाजके ग्रंथोंसे पवित्र विचारों को अपवित्र विचारों से पृथक् किया। हिन्दूसमाज के मान्य ग्रंथों में सिद्ध और असिद्ध विचारों का समावेश होगया था। उनमें से सिद्ध पक्षों को स्वामीजी ने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रहण किया और असिद्धों का परित्याग करके अन्यों को परित्याग करने की आज्ञा दी। यदि यहां यह प्रश्न हो कि सिद्ध असिद्ध पक्षों का लक्षण क्या है ? तो उत्तर यह होगा कि जिसको वादी प्रतिवादी दोनों स्वीकार करें वह सिद्ध है और जिसको एक माने और द्वितीय न माने वह असिद्ध पक्ष है। हिन्दूसमाज ने स्वामी जी के अपनाये तथा स्वामी जी से त्याज्य दोनों ही विचारों को अपनाया।

स्वामी के शुभागमन काल में हिन्दूसमाज अनेक मन्तव्यों में विभक्त था। कोई एक ग्रन्थ निश्चित रूप से नहीं माना जाता था। "मन्त्र ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्" इस वाक्य के अनुसार ब्राह्मण ही वेद के स्थान में वेद माने जाते थे। हिन्दूसमाज की इस दशा पर स्वामी ने चिरकाल विचार कर यह निश्चय किया कि हिन्दूसमाज का धर्मस्रोत बड़ा पवित्र है। हिन्दूसमाज अपने धर्मस्रोत से भ्रष्ट कहां जारहा है ? यह रत्नाधिपति वराटिकाओं से अपनेको धनिक मान बैठा है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने इस भूमि में जन्म लिया है, मेरा धर्म है कि मैं अपने भ्रष्ट वर्ग को कल्याणकारी मार्ग अवलम्बन कराऊँ। यदि मैं ऐसा नहीं करता हूँ तो उस पाप का भागी अवश्य बनूंगा जिसका कि एक नेत्रवाला चक्षु-विहीन को मार्ग में आये हुये कूप को न बतलाने वाला। इस प्रकार के विचारों तथा भारत के नाते के मोह ने उन को विवश कर दिया। जिस धन की लोलुपता ने भारत धर्म की पवित्रता को लुप्तप्राय कर रक्खा था स्वामीने उस पर पद-प्रहार किया। स्वामीजी यदि चाहते तो एक अच्छे मठाधारी बन वर्त्तमान के मठाधारियों से भी अधिक ऐश्वर्य के भागी होते किन्तु उन्होंने ऐसा करना पाप समझा। उनका विचार था कि जिस वेश को मैंने धारण किया है उसकी शोभा संसार को अन्धकार से निकालने ही में है, मैं अमृत को छोड़ विषय-भोग रूपी विषपान करना अच्छा नहीं समझता, संन्यासी को शुद्ध उपदेश ही करने की आज्ञा है। यह आज्ञा ईश्वर की है, इसका उलंघन करना [illegible]

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घोर नरक में पड़ना है। स्वामीजी यह भी जानते थे कि सम्प्रति जनता घोर सन्निपात ग्रसित रोगियों की भांति है। सन्निपात में निमग्न रोगी वैद्य के हित को न देख उलटा गाली देने लगता है। मैं भी सम्प्रति जनता की दृष्टि में अनेक लाञ्छनों द्वारा अपमान का भाजन बनूंगा। "संमानाद् ब्राह्मणो नित्यमुद्विजेत विषादिव" मेरे पूर्व पुरुषाओं की यही आज्ञा है। मानापमान आगमापाई हैं। जो वैद्य सन्निपात-ग्रसित रोगी से कुवाच्य श्रवण करता है वही उस रोगी के सावधान होने पर धन्यवाद का पात्र भी बनता है।" इत्यादि विचारों ने स्वामी को अपने विचार प्रकट करने पर विवश कर दिया। स्वामी "सत्ये नास्ति भयं क्वचित्" इस वाक्य का अवलम्बन कर और "सत्यमेव जयते नानृतम्" इस ईश्वर उपदेश को हृदय पटल पर लिख निशंक हो विद्वन्मण्डली के केन्द्र जान्हवी के तट पर सुशोभित वाराणसी में विद्वन्मण्डली को संबोधित कर कहने लगे। अय हिन्दू

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाज के स्तम्भो ! आपने साधारण जनता के धर्म की ध्वजा को अपने हाथों में लिया है। साधारण जनता के आप कर्णधार हैं. आपकी असावधानी ने जनता की धर्म ध्वजा को अधोमुखी किया और नौका को भ्रमर में डाल दिया, यह विश्वासघात है। वर्त्तमान और भविष्य में आपकी शोभा को मलिन करने वाला है। "धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः" क्या यह वाक्य आपको स्मरण नहीं ? स्वामी की इस घोषणा को श्रवण कर हिन्दू समाज का समूह अपने उन दिग्गज पण्डितों को साथ ले स्वामी के समीप पहुँच प्रश्न करता है कि आप क्या कहते हैं ?

स्वामी—मैं भारतकी जनता को धर्म विमुख देख धर्म पथ पर लाने की वांछा रखता हूं।

हिन्दूसमाज—क्या भारत की जनता धर्म-पथ से विमुख है ?

स्वामी—भारत में धर्म का लेश भी नहीं। धर्म एक है वा अनेक ? यदि एक है तो

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका स्वरूप क्या है ?

हिन्दूसमाज को यह कठिन होगया कि वह धर्म का स्वरूप प्रकाशित करे। कारण कि भारत चिरकाल से अनेक धर्मों का मंजूषा हो रहा था। हिन्दूसमाज को मौनावलम्बित देख स्वामी ने कहा कि ध्यान देकर श्रवण करो मेरा मन्तव्य यह है।

स्वामी—मैं ऋग्यजु, साम, अथर्व नाम से प्रसिद्ध मन्त्रसंहिताओं को ईश्वर-प्रणीत और स्वतः प्रमाण मानता हुआ वेद को भारत जनता के परम पवित्र धर्म का स्रोत मानता हूँ। अन्य ग्रन्थों को वेदानुकूल होने से प्रमाण और प्रतिकूल होने से अप्रमाण मानता हूँ।

हिन्दूसमाज—यह तो हमें आदि काल से ही मन्तव्य है, किन्तु ब्राह्मण भी वेद ही माने जाते हैं।

स्वामी—यह आपके विचारों की उस न्यूनता का परिणाम है जो इस बात को न विचार सके कि मन्त्र भाग और ब्राह्मण भाग में अन्तर क्या है ? मन्त्र भाग ईश्वर वाक्य है, मन्त्र भाग के

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्रों को प्रतीकों द्वारा जो व्याख्यायुक्त है वह ब्राह्मणभाग है। ब्राह्मण भाग ऋषियों के द्वारा निर्मित हुए हैं। ब्राह्मण ग्रन्थों में ऋषियों के विचार हैं अतएव ब्राह्मण गौण और मन्त्रभाग मुख्य है। "गौणमुख्ययोर्मुख्ये कार्यसंप्रत्ययः" इस वाक्यानुसार गौण की अपेक्षा मुख्य में किया कार्य ही मुख्य होता है। हिन्दूसमाज़ स्वामी के सिद्ध पक्ष वेद को तो शिर नवा कर मानता है किन्तु ब्राह्मण ग्रन्थों को वेद सिद्ध करने में हठ करता है। अन्त को स्वामी का पक्ष ग्रहण कर मौनावलम्बन करता है।

हिन्दूसमाज—जब कि आप वेदों को ईश्वर-कृत मानते हैं तब फिर आप श्राद्ध का निषेध क्यों करते हैं।

स्वामी—वेदविहित श्राद्ध का खण्डन नहीं करता लोकमें श्राद्ध की जो परिपाटी पड़ गई है उसका निषेध करता हूँ।

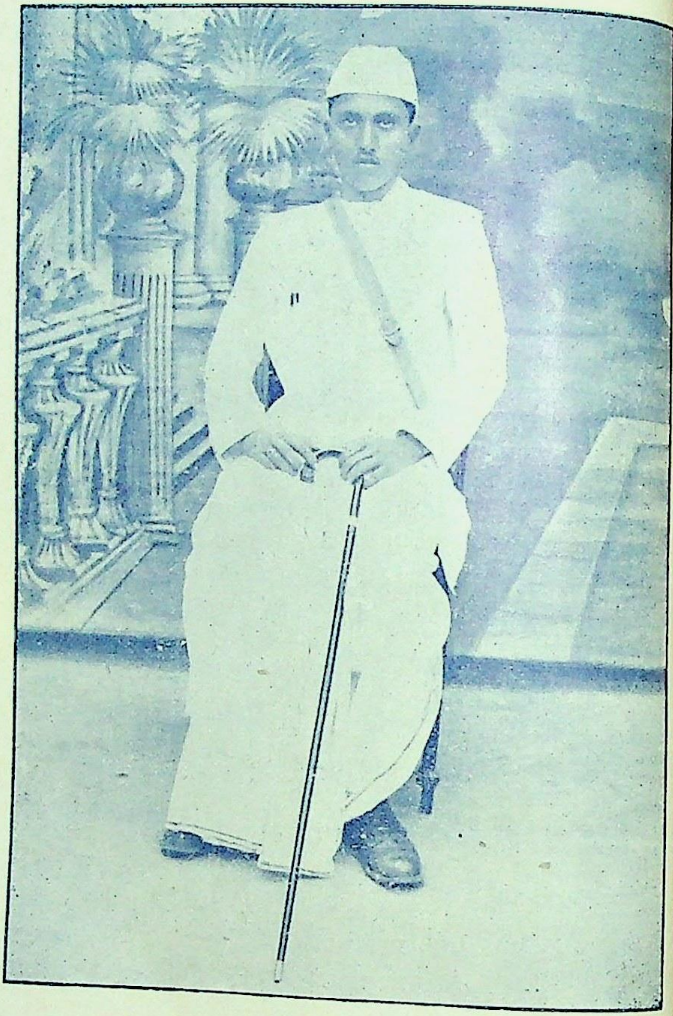
हिन्दूसमाज—क्या वेद में श्राद्ध की आज्ञा नहीं?

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



दानवीर श्री श्रीधरजी पोद्दार
(जिनके धन व्यय से प्रस्तुत पुस्तक प्रकाशित हो रही है)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी - है।

हिन्दूसमाज—तब फिर लोक और वेद के श्राद्ध में क्या भेद है ?

स्वामी—वेद में पितरों के लिये श्राद्ध करने की आज्ञा है।

हिन्दूसमाज—पितर कौन हैं ?

स्वामी—वेद में खगोल के दो भाग हैं। उत्तरीय भाग का नाम देवयान और दक्षिण भाग का नाम पितृयान है। इन दोनों भागों की रचना सृष्टि के आदि से है और अवसान तक रहेगी। मेरे मत से जितना और जो कुछ देवभाग के लिये वेद की आज्ञा से कर्त्तव्य है उतना ही पितृगण के अर्थ भी कर्त्तव्य है। जिन मृत माता पिता तथा कुटुम्बियों वा अन्य संबन्धियों को आप पितर मानकर उनकी तृप्ति के अर्थ अन्न तथा जल दान करते हैं इसको मैं इस हेतु से पितर नहीं मानता कि मृत्यु के पश्चात् जीवितों से उन का सम्बन्ध लेश भी नहीं रहता। "जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः ध्रुवं जन्म मृतस्य च" एक योगी-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राज का यह विचार अकाट्य है। जिन का मैंने प्रमाण दिया है आप के मत से तो वे साक्षात् ब्रह्म, और मेरे मत से पुरुष विशिष्ट हैं। किञ्चित् आप भी हठ को छोड़ कर ध्यान दें जो पितर संज्ञक व्यक्तियां वा शक्तियां रचना काल से ब्रह्माण्ड का आधार हैं उस भार को छीतरमल कूड़ामल, भोंदूमल, टेकचंद घसीटाराम, कैसे धारण कर सकते हैं। पितरों का कार्य्य अमावस्या और पूर्णिमा में प्रत्येक मास में कर्तव्य है। इतना ही मुझे इष्ट है क्या आप इसमें कुछ वक्तव्य की इच्छा करते हैं।

हिन्दूसमाज— यह विषय वेदोक्त और शास्त्रोक्त होने से सदा से ही मन्तव्य है। किन्तु मृतकों के अर्थ करने की प्रथा है इसी हेतु कहते हैं।

स्वामी—जिस में आप भी सहमत हैं वह मेरा सिद्धान्त है जिस का आप लोक भय से वा प्रथम से मानते हैं वह मन्तव्य नहीं।

हिंदू समाज—क्या मूर्ति-पूजन की भी वेद में आज्ञा नहीं? जो मुक्ति का साधन है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी—वेद में "ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः" ज्ञानही मुक्तिका हेतु है। अष्टांग योग और वेद तथा शुद्धि और उपदेश उसका साधन है। मूर्तिपूजन न तो वेद विहित ही है और न ज्ञान की वृद्धि का साधन है। प्रथम तो मूर्तिपूजन के स्रोत पुराण ही इस विषय में परस्पर विरोधी हैं। क्या आप उक्त कथन को नहीं मानते ?

हिंदू समाज—सो तो हमें मन्तव्य है।

स्वामी—यदि आप मूर्तिपूजन को मुक्ति का साधन मानते हैं तब फिर प्रमाण दीजिये परन्तु प्रमाण स्वतः प्रमाण वेद का देना योग्य है।

हिंदू समाज—अनेक प्रमाणों से भी यह सिद्ध करने में कि मूर्तिपूजन मुक्ति का साधन है असमर्थ रहा।

हिन्दू समाज—क्या आप तीर्थों के विषय में भी यह नहीं मानते कि तीर्थ स्थानों पर मरने वा जाने से मुक्ति का होना शास्त्रों से सिद्ध है।

स्वामी—जलाशयों तथा स्थानों की शुद्धि शरीर के स्वास्थ्य पर सम्बंध रखने वाले तो

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होना सम्भव हैं किन्तु मुक्ति मे उनका सम्बंध मानना किसी प्रकार भी बुद्धि में नहीं आता, हां इतना तो कहा जा सकता है कि किसी काल में इन स्थानों पर योगीजन रहते हों और सत्संगी मनुष्य उनके समीप रह कर योगाभ्यास का अभ्यास करने को जाते हों इस हेतु से उन स्थानों का नाम मुक्ति का स्थान पड़ गया हो। परंतु वर्त्तमान में जहां अनेक दुराचारों का अड्डा हो उनको मुक्ति का स्थान मानना नितान्त मूढ़ता है। मुक्ति के साधन वही हैं जो पूर्व कह आया हूं।

हिन्दू समाज—उन सत्य साधनों से तो नकार करना महा पाप है।

स्वामी—सज्जनो ! विचारो, विवेकी आत्माओं में हठ दुराग्रह तथा द्वेष नहीं होता स्वार्थवश अपना तथा अपनी अनुयायिनी जनता का अधःपतन कर पापके भागी मत बनो। अपने शुद्ध विचारों से इस पाण्डित्य को आत्मा का भूषण बनाओ, भार रूप मत करो। जो जैसा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

9622
20.5.2009 R. 9/03
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता है उसका फल भी वैसा ही होता है कुछ फल तो प्रत्यक्ष ही प्रतीत होता है। भारत के विद्वानों के इसी प्रकार के छिद्र भरे विचारों से वह भारत जो कि ऋषियों के काल में भूमण्डल का शिक्षक था आज शिष्य बन रहा है। जिस भारत की रीति नीति का अनुकरण करना अन्य देश निवासी अपना गौरव समझते थे आज वे ही अपने मन्तव्यों द्वारा भारत की चालढाल की निन्दा कर रहे हैं। क्या इस अपमान से आपकी आत्माओं पर कुछ भी आघात नहीं पहुँचता ? यह आश्चर्य ही नहीं शोक का स्थल है। "सम्भावितस्य चाकीर्त्तिर्मरणादतिरिच्यते" एक प्रतिष्ठित व्यक्ति का अपमान मरण दुःख से भी अधिक कहा गया है। हिन्दूसमाज के नेता इस विषय में नितान्त मौनावलम्बन कर कुछ कहने का साहस नहीं करते।

हिन्दूसमाज—स्वर्ग नरक का वर्णन यत्र तत्र पाया जाता है। क्या आप इस विषय को वैसा नहीं मानते जैसा कि शास्त्र कहते हैं ?

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी—स्वर्ग को सुख विशेष और नरक को दुःख विशेष मानता हूँ। आपके शास्त्रोंमें कहे उन स्थानों को जहां अनेक अप्सराओं को प्राप्ति तथा विना उद्योग के मनोकामनाओं का पूर्ण होना कहा गया है उस को ठीक नहीं मानता। यदि थोड़ा बुद्धि से कार्य्य लें तो आप भी उस रहस्य को जान सकते हैं जिनको आप स्वर्ग मानते हैं वे तो इसी भारत देश के स्थान विशेष हैं। धनी पुरुषोंको वे अब भी प्राप्त हैं। आपका माना हुआ स्वर्ग भारत का उत्तरीय भाग है जहां का ऐश्वर्य धनी पापी भी भोग सकता है। आपके परम माननीय पाठ्य पुस्तक अमरसिंहकृत अमरकोश ने कितनी स्पष्टता से वर्णन किया है जिसमें संदेह को अवकाश ही नहीं। आप स्वर्ग के देश और वहां के पदार्थों को न्याय की दृष्टि से अवलोकन कीजिये अद्यावधि ज्यों के त्यों विद्यमान हैं। आप कहते हैं कि स्वर्गमें देवताओं का स्थान है। "मेरुः सुमेरुः हेमाद्रिः रत्नसानुः सुरालयः" "मंदाकिनी वियद् गंगा सुरनदी सुरदीर्घिका" बद्रीनाथ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि यात्री इस सुरनदी मंदाकिनी का दर्शन करते हैं। इन्हीं स्थानों पर आपके विष्णु, शिव, इन्द्र, ब्रह्मा आदि देवता रहते थे, इसी पर्वत पर अर्जुन इन्द्र से मिले। शिव से पाशुपतास्त्र ग्रहण किया। पाण्डवों के स्वर्गारोहण पर्व से यह स्पष्ट होता है कि पाण्डव हिमालय को गये। क्या अब भी आप यह कहने का साहस कर सकते हैं कि पुराणों का स्वर्ग प्रत्यक्ष नहीं। लोकव्यवहार देखने से यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि पदाधिकारियों के नामकरण ही में भेद होता है कार्य ज्योंके त्यों रहा करते हैं। ऋषियोंकी नामकरण-शैली अवलोकन से यह पता चलता है कि "यथा नाम तथा गुणः" नामकरण करना अच्छा जानते थे। ऋषियों ने ईश्वरकृत खगोल शक्तियों के कार्य्य के अनुकूल ही देश के उच्चाधिकारियों के नामकरण अपने इस लोक में भी किए हैं। जिसको भारत के समस्त प्रबन्धों का अधिकार था उस का नाम विष्णु और सेना के अध्यक्ष का नाम रुद्र, जल विभाग के स्वामी का नाम वरुण,

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्या विभाग के स्वामी का नाम ब्रह्मा, सब के सम्राट् का नाम इन्द्र और सम्राट् के धन के रक्षक का नाम कुबेर था। यक्ष, गुह्यक आदि उनके भृत्य गण और पर्वतनिवासी अन्य जातियां थीं। इन दिव्य व्यक्तियों का नाम देव-गण इसलिये था कि जैसे खगोलस्थ देवगण अपनी ईश्वरप्रदत्त शक्तियों से जगत् की नित्य रक्षा करते हैं उसी प्रकार ये शक्तियां इस देश की रक्षक थीं। वर्त्तमान में वे शक्तियां कार्य्य तो करती हैं और विशेषता से इन व्यक्तियों के स्थान भी उत्तरीय भाग ही हैं किन्तु नाम भेद है। वाईसराय आदि विष्णु के स्थान में कहे जाते हैं। उत्तरीय भाग रमणीय और स्वच्छ होने से स्वर्गपद का अधिकारी है। आपने कभी इस ओर ध्यान ही नहीं दिया कि यह क्या बात है। आपके पूर्व पुरुष अलंकारों से संकेतमात्र से भी कुछ बता गये किन्तु आपने उन सत्य विचारों की सदा अवहेलना ही की, कभी उन का यथार्थ स्वरूप न स्वयं अवलोकन किया और न जनता

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(श्री श्रीधरजी के पूज्य पिता—)

स्वर्गीय श्री तनसुखराय जी पोद्दार ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को ही भ्रान्तिमें निकाला। निकालते क्योंकर स्वयं उसको न समझे, समझाने पर भी आपकी बुद्धि हठ के गर्त से न निकली। पुराणों में अनेक अलंकार ऐसे रूप से कहे गये हैं कि यदि उनकी संगति लगाई जाय तो वेदों के अनेक रहस्य हस्तामलकवत् हो जायँ, किन्तु आप तो उन का यथार्थ भाव जानने और जनाने को पाप समझते हैं। पुराण-कर्त्ताओं ने आपके माने हुए देवताओं के कुछ शस्त्र बताये हैं उनमें से इन्द्र का वज्र, रुद्र का शूल वा त्रिशूल, विष्णु का चक्र, वरुणका पास और कामके बाण। कभी आपने इन का दर्शन स्वयं कर औरों को भी कराया। जो मनुष्य अपने कथन की पुष्टि न कर सके यदि लोक में उसे असत्यवादी कहें तो क्या अनुचित है। आपके इन शस्त्रों का क्या आशय है ? क्या कथन करने वाले का यह प्रलाप है जिसने यह अलंकार बांधा है उसका कथन ठीक प्रतीत होता है। यहां अलंकार है, भेद इसमें इतना है यह अलंकार मानव शरीरों से संबंध रखता है। क्या

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह आपको ध्यान नहीं कि आपके पूर्व पुरुषाओंने इस शरीर को भी छोटा ब्रह्माण्ड ही माना है। इस शरीर में भी वे ही देवगण कार्य्य करते हैं जो वृहद्ब्रह्माण्ड में कार्य्याधिकारी हैं। इन शब्दों से बताया गया है कि इनके द्वारा ही संसार भर का संहार होता है। विचारिये, यहाँ विष्णु शब्द से सूर्य्य का ग्रहण है, वह अपने चक्र अर्थात् नित्य भ्रमण से संहार का कारण है। इन्द्र शब्द से विदयुत् का ग्रहण है वह प्रत्यक्ष ही संहार कारक है। रुद्र शब्द से शरीर व वायु का ग्रहण है। शरीरस्थ वायु शूल वा त्रिदोषोत्पन्न शूल से संहार का कारण है। वरुण शब्द से जल का ग्रहण है जल श्लेष्मा रूप से शरीर में कार्य्य करता है यह मत आयुर्वेदाचार्यों का है। वह श्लेष्मा कण्ठगत होने पर प्राण हनन करता है। कितनी स्पष्ट संगति है। फांसी सदैव कण्ठ ही में पड़ती है। श्लेष्मा कण्ठ ही में बोलता है। काम के बाणों की व्यथा प्रत्यक्ष ही है। इस प्रकार संगति करने पर कितना रहस्य हस्तगत होता

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है और अनेक अलंकार हैं जिनकी संगति लगाने से उनका तात्पर्य वही निकलता है जो अभिप्राय उसके रचयिता का था। इसके साथ ही यह ध्यान बना रहना योग्य है कि सार्थकों की ही संगति कर्त्तव्य है। बहुत निरर्थक भी हैं, उनको निशंक त्यागने के अभ्यासी भी बनो। मेरा तात्पर्य वैदिक धर्म्म को उसी रूप में लाने का है जैसा कि इसका स्वरूप ऋषियों ने माना है। यदि मुझे यह इष्ट न होता कि सभी अलंकार हेय नहीं हैं तो मैं अपनी ऋगादि भाष्य भूमिका में वेदों से संबंध रखनवाले अलंकारों का समर्थन क्यों करता। मेरी हार्दिक इच्छा है कि भारत के सर्व कार्य्य क्रीड़ारूप से कार्य्यरूप में परिणत हों। भारतवर्ष के नेतावर्ग न जाने इस अपवित्र हिन्दू नाम से क्यों इतने प्रसन्न हैं? अपने पुरुषाओं के आर्य्य नाम से क्यों लज्जित हैं? सम्प्रति आपको अपने अस्तित्व का किञ्चित् भी ध्यान नहीं रहा। क्या आपको यह ध्यान नहीं कि जब आपके पुरुषा इस देश में पधारे थे तब यहाँ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन २ जातियां निवास करती थीं इतिहासों से यह विदित होता है कि वे सब जातियां अनार्य्य थीं, आपके पुरुषाओं ने सब के आचार विचार अपने अनुकूल कर सबको अपने ही में पचा लिया। बड़े आश्चर्य का स्थल है कि एक अजगर को कि जो चतुष्पदों को भी पचा जाता है उसको सपोलिये निगल जायँ। आप अपने को निर्बल बनाये बैठे हैं जिसका फल यह हुआ कि आपके सहस्रों भ्रातृवर्ग जो किसी काल में वैदिक धर्म अनुचर थे। आज वैदिक धर्म के शत्रु दृष्टिगत होते हैं। आपके होते हुये संस्कृत साहित्य इतना गिर गया कि जिसकी गति देख शोक होता है। इन अपने विचारों को संकुचित रूप से निकाल विस्तृत बनाओ। मेरे विचारों के साथ आपके विचारों का अत्यन्त सांनिकट्य है। इसको अपनाओ इस सुयश के भागी बनो। सम्प्रति जिन विचारों को मैं प्रकट कर रहा हूँ भविष्य में वे सार्वभौम होंगे यह अनुमान सत्य होगा, आप इसका विरोध जैसा सम्प्रति कर रहे हैं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि आगे भी यही गति रही तो बहुत पश्चात्ताप करना पड़ेगा। सज्जनो ! मैंने जो कुछ भी अपने विचारों का प्रकाश किया है वह अपने किसी स्वार्थ के अर्थ नहीं, किन्तु संसार के अर्थ हैं। एक दिन आपको भी मानना पड़ेगा कि दयानन्द हिन्दू धर्म के वास्तविक सुधारक थे।

समाप्तम्

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुद्रक—
काव्यतीर्थ शंकरदेव पाठक शास्त्री
चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस, देहली।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

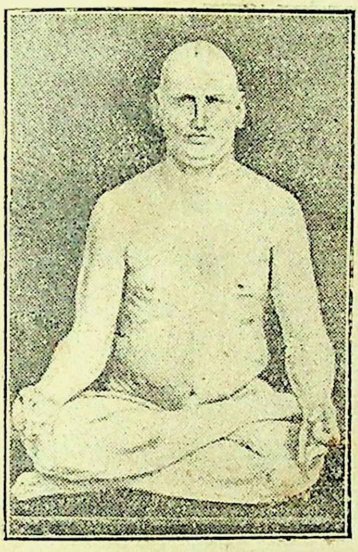
(ट्रैक्ट सं० १)

ओ३म्

1622 B

ईश्वर और उसकी पूजा

जैसे शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास जाने से शीत निवृत्त हो जाता है वैसे परमेश्वर के समीप प्राप्त होने से सब दुःख छूटकर परमेश्वर के गुण कर्म स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण कर्म स्वभाव पवित्र हो जाते हैं (सत्यार्थप्रकाश समु० ७)



स्वामी दयानन्द सरस्वती

2.9/62

प्रकाशक

गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम. ए., उपप्रधान,

आर्यसमाज चौक, प्रयाग

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ट्रैक्ट

नं० १. ईश्वर और उसकी पूजा
नं० २. हमारे बच्चों की शिक्षा
नं० ३. प्राचीन आर्य्यावर्त्त

मूल्य)॥ प्रति ट्रैक्ट या ५) सैकड़ा

प्रार्थना भजन
वैदिक सन्ध्या } वही दाम

मिलने का पताः—

गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम. ए.,
उपप्रधान, आर्यसमाज चौक,
प्रयाग

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल पुस्तकालय
पुस्तक संख्या..............
आगत सं० १६.२२.....
तिथि० १५-५-२००९
गुरुकुल कांगड़ी

ओ३म्

ईश्वर और उसकी पूजा

पाप और दुःख से बचने का एक ही उपाय है अर्थात् ईश्वर को जानो, उसका स्मरण करो और उसकी आज्ञा का पालन करो। पूजा तो सभी करते हैं परन्तु जब तक हम यह न जानें कि ईश्वर क्या है, हम उसका कैसे ध्यान करें और उसकी हमारे लिये क्या आज्ञा है, उस समय तक हमारे परिश्रम का कोई फल नहीं निकल सकता। जिस पुत्र ने पिता की आज्ञा जानने का यत्न नहीं किया, जिसे यह नहीं मालूम कि मेरा पिता कैसी बातों से प्रसन्न होता है और किस प्रकार के काम उसको भले नहीं लगते, वह अपने पिता को कैसे सन्तुष्ट करेगा। इस लिये प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि वेद-शास्त्रों में ईश्वर के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है उसपर विचार करें और सच्चिदानन्द परमेश्वर की भक्ति किया करें। यों तो सभी चाहते हैं कि हम को ईश्वर का दर्शन हो जाय, हम पापों से छूट कर मुक्ति को प्राप्त कर सकें। परन्तु सच और झूठ का ज्ञान प्राप्त करने का यत्न करनेवाले विरले ही हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्यार्थप्रकाश में लिखा है :—

"समाधिनिर्धूतमलस्य चेतसो
निवेशितस्यात्मनि यत्सुखं भवेत् ।
न शक्यते वर्णयितुं गिरा तदा
स्वयन्तदन्तःकरणेन गृह्यते ॥

यह उपनिषद् का वचन है । जिस पुरुष के समाधियोग से अविद्यादि मल नष्ट होगये हैं । आत्मस्थ होकर परमात्मा में चित्त जिसने लगाया है उसको जो परमात्मा के योग का सुख होता है वह वाणी से कहा नहीं जा सकता क्योंकि उस आनन्द को जीवात्मा अपने अन्तःकरण से ग्रहण करता है । उपासना शब्द का अर्थ समीपस्थ होना है । अष्टांग योग से परमात्मा के समीपस्थ होने और उसको सर्वव्यापी सर्वान्तर्यामीरूप से प्रत्यक्ष करने के लिये जो जो काम करना होता है वह वह सब करना चाहिये अर्थातः—

तत्राऽहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः ॥

[योगशा० साधनपादे । सू० ३० ॥

इत्यादि सूत्र पातञ्जलयोगशास्त्र के हैं । जो उपासना का आरम्भ करना चाहे उसके लिये यही आरम्भ है कि वह किसी से वैर न रक्खे, सर्वदा सब से प्रीति करे, सत्य बोले, मिथ्या कभी न बोले, चोरी न करे, सत्य व्यवहार करे, जितेन्द्रिय हो, लम्पट न

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो और निरभिमानी हो, अभिमान कभी न करे, ये पाँच प्रकार के यम मिल के उपासना योग का प्रथम अङ्ग है।

शौचसन्तोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः ॥

[योगशा० साधनपादे । सू० ३२ ॥]

राग द्वेष छोड़ भीतर और जलादि से बाहर पवित्र रहै, धर्म से पुरुषार्थ करने से लाभ में न प्रसन्नता और हानि में न अप्रसन्नता करे। प्रसन्न होकर आलस्य छोड़ सदा पुरुषार्थ किया करे, सदा सुख दुःखों का सहन और धर्म ही का अनुष्ठान करे, अधर्म का नहीं, सर्वदा सत्य शास्त्रों को पढ़े पढ़ावे, सत्पुरुषों का सङ्ग करे और "ओ३म्" इस एक परमात्मा के नाम के अर्थ विचार कर नित्यप्रति जप किया करे, अपने आत्मा को परमेश्वर की आज्ञानुकूल समर्पित कर देवे। इन पाँच प्रकार के नियमों को मिला के उपासनायोग का दूसरा अङ्ग कहाता है। इसके आगे छः अङ्ग योगशास्त्र व ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में देख लेवें। जब उपासना करना चाहैं तब एकान्त शुद्ध देश में जाकर आसन लगा प्राणायाम कर बाह्य विषयों से इन्द्रियों को रोक मनको नाभिप्रदेश में वा हृदय, कण्ठ, नेत्र, शिखा अथवा पीठ के मध्य हाड़ में किसी स्थान पर स्थिर कर अपने आत्मा और परमात्मा का विवेचन कर के परमात्मा में मग्न होजाने से संयमी होवें। जब इन साधनों को करता है तब उसका आत्मा और अन्तःकरण पवित्र होकर सत्य से पूर्ण हो

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है, नित्यप्रति ज्ञान विज्ञान बढ़ाकर मुक्ति तक पहुंच जाता है। जो आठ प्रहर में एक घड़ी भर भी इस प्रकार ध्यान करता है वह सदा उन्नति को प्राप्त हो जाता है वहाँ सर्वज्ञादि गुणों के साथ परमेश्वर की उपासना करनी सगुण और द्वेष, रूप, रस, गन्ध, स्पर्शादि गुणों से पृथक् मान अतिसूक्ष्म आत्मा के भीतर बाहर व्यापक परमेश्वर में दृढ़ स्थित होजाना निर्गुणोपासना कहाती है। इसका फल—जैसे शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास जाने से शीत निवृत्त होजाता है वैसे परमेश्वर के समीप प्राप्त होने से सब दोष दुःख छूट कर परमेश्वर के गुण कर्म स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण कर्म स्वभाव पवित्र होजाते हैं, इसलिये परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना अवश्य करनी चाहिये। इससे इसका फल पृथक् होगा परन्तु आत्मा का बल इतना बढ़ेगा कि वह पर्वत के समान दुःख प्राप्त होने पर भी न घबरावेगा और सब को सहन कर सकेगा क्या यह छोटी बात है? और जो परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना नहीं करता वह कृतघ्न और महामूर्ख भी होता है क्योंकि जिस परमात्मा ने इस जगत् के सब पदार्थ जीवों को सुख के लिये दे रक्खे हैं उसका गुण भूल जाना, ईश्वर ही को न मानना, कृतघ्नता और मूर्खता है।

(प्रश्न) जब परमेश्वर के श्रोत्र नेत्रादि इन्द्रियाँ नहीं हैं फिर वह इन्द्रियों का काम कैसे कर सकता है? (उत्तर):—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता
पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः ।
स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता
तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम् ॥
[श्वेताश्वतर उपनिषद् अ० ३ । मं० १९ ॥]

परमेश्वर के हाथ नहीं परन्तु अपनी शक्तिरूप हाथ से सब का रचन, ग्रहण करता, पग नहीं परन्तु व्यापक होने से सब से अधिक वेगवान्, चक्षु का गोलक नहीं परन्तु सब को यथावत् देखता, श्रोत्र नहीं तथापि सब की बात सुनता, अन्तःकरण नहीं परन्तु सब जगत् को जानता है और उसको अवधिसहित जाननेवाल कोई भी नहीं। उसी को सनातन सब से श्रेष्ठ सब में पूर्ण होने से पुरुष कहते हैं। वह इन्द्रियों और अन्तःकरण के विना अपने सब काम अपने सामर्थ्य से करता है।

(प्रश्न) उसको बहुतसे मनुष्य निष्क्रिय और निर्गुण कहते हैं ?
(उत्तर)

न तस्य कार्य्यं करणं च विद्यते
न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते ।
परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते
स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च ॥
[श्वेताश्वतर उपनिषद् अ० ६ । मं० ८]

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमात्मा से कोई तद्रूप कार्य्य और उसको करण अर्थात् साधकतम दूसरा अपेक्षित नहीं, न कोई उसके तुल्य और न अधिक है। सर्वोत्तमशक्ति अर्थात् जिसमें अनन्त ज्ञान, अनन्त बल और अनन्त क्रिया है वह स्वाभाविक अर्थात् सहज उसमें सुनी जाती है। जो परमेश्वर निष्क्रिय होता तो जगत् की उत्पत्ति स्थिति प्रलय न कर सकता इसलिये वह विभु तथापि चेतन होने से उसमें क्रिया भी है। (प्रश्न) जब वह क्रिया करता होगा तब अन्तवाली क्रिया होती होगी वा अनन्त? (उत्तर) जितने देश काल में क्रिया करनी उचित समझता है, उतने ही देश काल में क्रिया करता है न अधिक न न्यून क्योंकि वह विद्वान् है। (प्रश्न) परमेश्वर अपना अन्त जानता है वा नहीं? (उत्तर) परमात्मा पूर्ण ज्ञानी है क्योंकि ज्ञान उसको कहते हैं कि जिससे ज्यों का त्यों जाना जाय अर्थात् जो पदार्थ जिस प्रकार का हो उसको उसी प्रकार जानने का नाम ज्ञान है, परमेश्वर अनन्त है तो अपने को अनन्त ही जानना ज्ञान, उससे विरुद्ध अज्ञान अर्थात् अनन्त को सान्त और सान्त को अनन्त जानना भ्रम कहाता है "यथार्थदर्शन ज्ञानमिति" जिसका जैसा गुण कर्म स्वभाव हो उस पदार्थ को वैसा ही जानकर मानना ही ज्ञान और विज्ञान कहाता है इससे उलटा अज्ञान, इस लिये :—

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः॥

[योग सू० समाधिपादे। सू० २४॥]

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो अविद्यादि क्लेश, अकुशल, इष्ट, अनिष्ट और मिश्र फल-दायक कर्मों की वासना से रहित है वह सब जीवों से विशेष ईश्वर कहाता है।" ... ...

"(प्रश्न) ईश्वर अवतार लेता है वा नहीं ? (उत्तर) नहीं क्योंकि "अज एकपात्" "सपर्य्यगाच्छुक्रमकायम्" ये यजुर्वेद के वचन हैं इत्यादि वचनों से सिद्ध है कि परमेश्वर जन्म नहीं लेता। (प्रश्न):—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥
[भ० गी० अ० ४। श्लो० ७॥]

श्रीकृष्णजी कहते हैं कि जब जब धर्म का लोप होता है तब तब मैं शरीर धारण करता हूं। (उत्तर) यह बात वेदविरुद्ध होने से प्रमाण नहीं और ऐसा हो सकता है कि श्रीकृष्ण धर्मात्मा और धर्म की रक्षा करना चाहते थे कि मैं युग युग में जन्म लेके श्रेष्ठों की रक्षा और दुष्टों का नाश करूँ तो कुछ दोष नहीं क्योंकि "परोपकाराय सतां विभूतयः" परोपकार के लिये सत्पुरुषों का तन मन धन होता है तथापि इससे श्रीकृष्ण ईश्वर नहीं हो सकते। (प्रश्न) जो ऐसा है तो संसार में चौबीस ईश्वर के अवतार होते हैं और इनको अवतार क्यों मानते हैं ? (उत्तर) वेदार्थ के न जानने, सम्प्रदायी लोगों के बहकाने और अपने आप अविद्वान् होने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से भ्रमजाल में फँस के ऐसी ऐसी अप्रामाणिक बातें करते और मानते हैं (प्रश्न) जो ईश्वर अवतार न लेवे तो कंस रावणादि दुष्टों का नाश कैसे होसके ? (उत्तर) प्रथम जो जन्मा है वह अवश्य मृत्यु को प्राप्त होता है। जो ईश्वर अवतार शरीर धारण किये विना जगत् की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय करता है उसके सामने कंस रावणादि एक कीड़ी के समान भी नहीं। वह सर्वव्यापक होने से कस रावणादि के शरीरों में भी परिपूर्ण हो रहा है, जब चाहे उसी समय मर्मच्छेदन कर नाश कर सकता है। भला इस अनन्त-गुण-कर्म स्वभावयुक्त परमात्मा को एक क्षुद्र जीव के मारने के लिये जन्म मरणयुक्त कहनेवाले को मूर्खपन से अन्य कुछ विशेष उपमा मिल सकती है ? और जो कोई कहे कि भक्तजनों के उद्धार करने के लिये जन्म लेता है तो भी सत्य नहीं क्योंकि जो भक्त जन ईश्वर की आज्ञानुकूल चलते हैं उनके उद्धार करने का पूरा सामर्थ्य ईश्वर में है। क्या ईश्वर के पृथिवी, सूर्य, चन्द्रादि जगत् का बनाने धारण और प्रलय करने रूप कर्मों से कंस रावणादि का वध और गोवर्धनादि पर्वतों का उठाना बड़े कर्म हैं ? जो कोई इस सृष्टि में परमेश्वर के कर्मों का विचार करे तो "न भूतो न भविष्यति" ईश्वर के सदृश कोई न है, न होगा। और युक्ति से भी ईश्वर का जन्म सिद्ध नहीं होता जैसे कोई अनन्त आकाश को कहे कि गर्भ में आया वा मूठी में धर लिया, ऐसा कहना कभी सच नहीं हो सकता क्योंकि आकाश अनन्त और सब में व्यापक है इससे न

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकाश बाहर आता और न भीतर जाता, वैसे ही अनन्त सर्वव्यापक परमात्मा के होने से उसका आना जाना कभी सिद्ध नहीं हो सकता। जाना वा आना वहाँ हो सकता है जहाँ न हो। क्या परमेश्वर गर्भ में व्यापक नहीं था जो कहीं से आया? और बाहर नहीं था जो भीतर से निकला? ऐसा ईश्वर के विषय में कहना और मानना विद्याहीनों के सिवाय कौन कह और मान सकेगा। इसलिये परमेश्वर का जाना आना जन्म मरण कभी सिद्ध नहीं हो सकता इसलिये "ईसा" आदि भी ईश्वर के अवतार नहीं ऐसा समझ लेना क्योंकि राग, द्वेष, क्षुधा, तृषा, भय, शोक, दुःख, सुख, जन्म, मरण आदि गुणयुक्त होने से मनुष्य थे। (प्रश्न) ईश्वर अपने भक्तों के पाप क्षमा करता है वा नहीं? (उत्तर) नहीं, क्योंकि जो पाप क्षमा करे तो उसका न्याय नष्ट होजाय और सब मनुष्य महापापी होजायँ क्योंकि क्षमा की बात सुन ही के उनको पाप करने में निर्भयता और उत्साह होजाय जैसे राजा अपराध को क्षमा करदे तो वे उत्साहपूर्वक अधिक अधिक बड़े बड़े पाप करें क्योंकि राजा अपराध क्षमा करदेगा और उनको भी भरोसा होजाय कि राजा से हम हाथ जोड़ने आदि चेष्टाकर अपने अपराध छुड़ा लेंगे और जो अपराध नहीं करते वे भी अपराध करने से न डरकर पाप करने में प्रवृत्त हो जायंगे इसलिये सब कर्मों का फल यथावत् देना ही ईश्वर का काम है, क्षमा करना नहीं। (प्रश्न) जीव स्वतन्त्र है वा परतन्त्र? (उत्तर) अपने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्त्तव्य कर्मों में स्वतन्त्र और ईश्वर की व्यवस्था में परतन्त्र है "स्वतन्त्रःकर्त्ता" यह पाणिनीय व्याकरण का सूत्र है जो स्वतन्त्र अर्थात् स्वाधीन है वही कर्त्ता है। (प्रश्न) स्वतन्त्र किसको कहते हैं ? (उत्तर) जिसके आधीन शरीर प्राण इन्द्रिय और अन्तःकरणादि हों जो स्वतन्त्र न हो तो उसको पाप पुण्य का फल प्राप्त कभी नहीं होसकता क्योंकि जैसे भृत्य स्वामी और सेना सेनाध्यक्ष की आज्ञा अथवा प्रेरणा से युद्ध में अनेक पुरुषों को मार के अपराधी नहीं होते वैसे परमेश्वर की प्रेरणा और आधीनता से काम सिद्ध हों तो जीव को पाप वा पुण्य न लगे, उस फल का भी प्रेरक परमेश्वर होवे, नरक स्वर्ग अर्थात् दुःख सुख की प्राप्ति भी परमेश्वर को होवे। जैसे किसी मनुष्य ने शस्त्र विशेष से किसी को मारडाला तो वही मारनेवाला पकड़ा जाता है और वही दण्ड पाता है शस्त्र नहीं। वैसे ही पराधीन जीव पाप पुण्य का भागी नहीं हो सकता। इसलिये अपने सामर्थ्यानुकूल कर्म करने में जीव स्वतन्त्र परन्तु जब वह पाप कर चुकता है तब ईश्वर की व्यवस्था में पराधीन होकर पाप के फल भोगता है इसलिये कर्म करने में जीव स्वतन्त्र और पाप दुःखरूप फल भोगने में परतन्त्र होता है। (प्रश्न) जो परमेश्वर जीव को न बनाता और सामर्थ्य न देता तो जीव कुछ भी न कर सकता इसलिये परमेश्वर की प्रेरणा ही से जीव कर्म करता है। (उत्तर) जीव उत्पन्न कभी न हुआ, अनादि है, जैसे ईश्वर और जगत् का उपादान कारण निमित्त है और जीव

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का शरीर तथा इन्द्रियों के गोलक परमेश्वर के बनाये हुए हैं परन्तु वे सब जीव के आधीन हैं। जो कोई मन कर्म वचन से पाप पुण्य करता है वही भोगता है ईश्वर नहीं, जैसे किसी ने पहाड़ से लोहा निकाला, उस लोहे को किसी व्यापारी ने लिया, उसकी दुकान से लोहार ने ले तलवार बनाई, उससे किसी सिपाही ने तलवार लेली, फिर उससे किसी को मार डाला। अब यहाँ जैसे वह लोहे को उत्पन्न करने, उससे लेने, तलवार बनानेवाले और तलवार को पकड़ कर राजा दण्ड नहीं देता किन्तु जिसने तलवार से मारा वही दण्ड पाता है। इसी प्रकार शरीरादि की उत्पत्ति करनेवाला परमेश्वर उसके कर्मों का भोक्ता नहीं होता किन्तु जीव को भुगानेवाला होता है। जो परमेश्वर कर्म करता तो कोई जीव पाप नहीं करता क्योंकि परमेश्वर पवित्र और धार्मिक होने से किसी जीव को पाप करने में प्रेरणा नहीं करता। इसलिये जीव अपने काम करने में स्वतन्त्र है, जैसे जीव अपने कामों के करने में स्वतन्त्र है वैसे ही परमेश्वर भी अपने कामों के करने में स्वतन्त्र है। (प्रश्न) जीव और ईश्वर का स्वरूप, गुण, कर्म और स्वभाव कैसा है? (उत्तर) दोनों चेतनस्वरूप हैं। स्वभाव दोनों का पवित्र अविनाशी और धार्मिकता आदि है, परन्तु परमेश्वर के सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय, सब को नियम में रखना, जीवों को पाप-पुण्यों के फल देना आदि धर्मयुक्त कर्म हैं। और जीव के सन्तानोत्पत्ति, उनका पालन, शिल्प विद्यादि अच्छे बुरे कर्म हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर के नित्यज्ञान आनन्द अनन्त बल आदि गुण हैं और जीव के:—

इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानान्यात्मनो लिङ्गमिति॥
[न्यायद० अ० १। आ० १। सू० १०॥]

प्राणापाननिमेषोन्मेषमनोगतीन्द्रियान्तरविकाराः सुखदुःखेच्छाद्वेषौ प्रयत्नाश्चात्मनो लिङ्गानि॥
[वैशेषिक द० अ० ३। आ० २। सू० ४॥]

(इच्छा) पदार्थों की प्राप्ति की अभिलाषा (द्वेष) दुःखादि की अनिच्छा वैर (प्रयत्न) पुरुषार्थ बल (सुख) आनन्द (दुःख) विलाप अप्रसन्नता (ज्ञान) विवेक पहिचानना ये तुल्य हैं परन्तु वैशेषिक में (प्राण) प्राण को बाहर से भीतर को लेना (अपान) प्राणवायु को बाहर निकालना (निमेष) आँख को मीचना (उन्मेष) आँख को खोलना (मन) निश्चय स्मरण और अहङ्कार करना (गति) चलना (इन्द्रिय) सब इन्द्रियों का चलाना (अन्तरविकार) भिन्न भिन्न क्षुधा, तृषा, हर्ष, शोकादियुक्त होना ये जीवात्मा के गुण परमात्मा से भिन्न हैं। इन्हीं से आत्मा की प्रतीति करनी, क्योंकि वह स्थूल नहीं है, जबतक आत्मा देह में होता है तभी तक ये गुण प्रकाशित रहते हैं और जब शरीर छोड़ चला जाता है तब ये गुण शरीर में नहीं रहते

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसके होने से जो हों और न होने से न हों वे गुण उसी के होते हैं। जैसे दीप और सूर्यादि के न होने से प्रकाशादि का नहोना और होने से होना है वैसे ही जीव और परमात्मा का विज्ञान गुणद्वारा होता है।"... ... ...

"(प्रश्न) परमेश्वर सगुण है वा निर्गुण? (उत्तर) दोनों प्रकार है (प्रश्न) भला एक घर में दो तलवार कभी रह सकती हैं। एक पदार्थ में सगुणता और निर्गुणता कैसे रह सकती हैं। (उत्तर) जैसे जड़के रूपादि गुण हैं और चेतन के ज्ञानादि गुण जड़ में नहीं हैं वैसे चेतन में इच्छादि गुण हैं और रूपादि जड़ के गुण नहीं हैं इसलिये "यद्गुणैस्सह वर्त्तमानं तत्सगुणम्" "गुणेभ्यो यन्निर्गतं पृथग्भूतं तन्निर्गुणम्" जो गुणों से सहित वह सगुण और जो गुणों से रहित वह निर्गुण कहाता है। अपने अपने स्वाभाविक गुणों से सहित और दूसरे विरोधी के गुणों से रहित होने से सब पदार्थ सगुण और निर्गुण हैं। कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं है कि जिसमें केवल निर्गुणता वा केवल सगुणता हो, किन्तु एक ही में सगुणता और निर्गुणता सदा रहती है वैसे ही परमेश्वर अपने अनन्त ज्ञान बलादि गुणों से सहित होने से सगुण और रूपादि जड के तथा द्वेषादि जीव के गुणों से पृथक् होने से निर्गुण कहाता है (प्रश्न) संसार में निराकार को निर्गुण और साकार को सगुण कहते हैं अर्थात् जब परमेश्वर जन्म नहीं लेता तब निर्गुण और जब अवतार लेता है तब सगुण कहाता है? (उत्तर) यह कल्पना केवल अज्ञानी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अविद्वानों की है। जिसको विद्या नहीं होती वे पशु के समान यथा तथा बड़ाया करते हैं जैसे सन्निपात ज्वरयुक्त मनुष्य अण्डवण्ड बकता है वैसे ही अविद्वानों के कहे वा लेख को व्यर्थ समझना चाहिये (प्रश्न) परमेश्वर रागी है वा विरक्त ? (उत्तर) दोनों में नहीं क्योंकि राग अपने से भिन्न उत्तम पदार्थों में होता है सो परमेश्वर से कोई पदार्थ पृथक् वा उत्तम नहीं इसलिये उसमें राग का सम्भव नहीं और जो प्राप्त को छोड़ देवे उसको विरक्त कहते हैं। ईश्वर व्यापक होने से किसी पदार्थ को छोड़ ही नहीं सकता इसलिये विरक्त भी नहीं। (प्रश्न) ईश्वर में इच्छा है वा नहीं? (उत्तर) वैसी इच्छा नहीं क्योंकि इच्छा भी अप्राप्त उत्तम और जिसकी प्राप्ति से सुख विशेष होवे उसकी होती है तो ईश्वर में इच्छा हो सके, न उससे कोई अप्राप्त पदार्थ, न कोई उससे उत्तम और पूर्ण सुखयुक्त होने से सुख की अभिलाषा भी नहीं है इसलिये ईश्वर में इच्छा का तो सम्भव नहीं किन्तु ईक्षण अर्थात् सब प्रकार की विद्या का दर्शन और सब सृष्टि का करना कहाता है वह ईक्षण है।"... ... ...

(सत्यार्थप्रकाश, समुल्लास ७)

—:o:—

पं० रामजीलाल शर्म्मा के प्रबन्ध से हिन्दी प्रेस, प्रयाग में छपा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

16228

ओ३म् ॥

सद्विचारनिर्णय ॥

महाराजा वेङ्कटगिरि जी ने वेदादि-
शास्त्रों के विषयों पर कई प्रश्न किये
थे उन के उत्तर आर्यसिद्धान्त
में दिये गये थे

उन को पृथक् संग्रह कर और कुछ शोध
बढ़ा के सब के हितार्थ
देशोपकारक यन्त्रालय में भीमसेन
शर्मा ने मुद्रित कराया ॥

प्रयाग

संवत् १९४७ सन् १८९१ ई०

प्रथमवार १००० मूल्य ≶)

डाकव्यय ।)॥

2.1
63

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः
पुस्तक सं०..............
आगत सं० 9622.....
तिथि०..15.5.2007.
गुरुकुल ग्रन्थालय काँगड़ी.

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीमान् महाराजा वेङ्कटगिरिकृत प्रश्नों के उत्तर ॥

(१) प्रश्न—स्वामीदयानन्द जी ने ऐसा लिखा है कि वेद में मन्त्रभाग ईश्वरप्रणीत है क्योंकि ? ब्राह्मणभाग और उपनिषद् भाग ऋषियों का किया है। इस बात में मुझ को सन्देह है कि, मन्त्रभाग में अग्निष्टोमादि यज्ञों का विषय, और शत्रुसंहार करने के लिये अग्न्यस्त्र ब्रह्मास्त्रादि विषय बहुत हैं। इस लिये पशुहिंसा मनुष्यहिंसा ईश्वर को प्रसन्न होना चाहिये। उन मन्त्रों का हिंसा व्यतिरिक्त अर्थ मैं करता हूं करके कोई पण्डित संस्कृत भाषा अतिगहन एक शब्द का नानार्थ होने से, और धात्वर्थ से, अर्थभेद कर के अपने विद्या बल से अन्यार्थ कर सकेगा परन्तु यह मैं नहीं मानता क्योंकि पुरातन देवर्षि बृहस्पति वा शुक्राचार्य और महर्षि अगस्ति, वशिष्ठ प्रभृति ने मन्त्रभाग का यज्ञादि कार्य में हिंसा पर अर्थ कर के अश्वालंभ गवालंभादि यज्ञ किये और कराये भी हैं तब से अब तक बड़े २ पण्डित विद्वान् लोग उसी रीती से अग्निष्टोमादि यज्ञ करते हैं और कराते भी हैं और वेदभाष्य करने वाले विद्यारण्य स्वामी भी उन मन्त्रों का हिंसा परक अर्थ लिखते हैं ऐसा अर्थ करने से और ऐसा आचार करने से कोई आक्षेप ले, कि वे लोग मांसाहार करने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिये, ऐसा अर्थ कर के यह आचार करते थे परन्तु उस काल में मांसाहार करते ही थे इस लिये वह आक्षेप लेना जरूर नहीं और दूसरा कोई कहे कि पहिले ऋषि लोगों को अर्थ करने में कुछ गलती होगई होगी, तो मैं यह कहता हूं कि जो पहिले ऋषि लोग योगदृष्टि ज्ञानदृष्टि संपन्न थे, वे गलती कैसे लिखेंगे ? वे आर्य लोग सत्यमार्ग से चलने वाले थे इसी लिये आप की समाज का नाम "आर्यसमाज" रक्खा है और ब्राह्मण, षडंग, षडुपांग, चार उपवेद, एक सहस्र एक सौ सत्तावीस शाखा, ये ऋष्युक्त वेद व्याख्या हैं ऐसा श्री दयानन्द स्वामी लिखते हैं, इन की ऐसी लिखी हुई बात ख्याल में लावें तो ऋषि लोगों ने मन्त्रों का अर्थ हिंसा पर किया, या या गलितार्थ किया, यह बात कैसी हो सक्ती है एक ही आदमी एक ही काल में भला और बुरा कैसा लिखेगा ? और कर सकेगा ? और स्वामी लिखते हैं कि, पक्षपात रहित न्यायाचरण और सत्यभाषण जो है, सोई ईश्वराज्ञा, जो वेदविरुद्ध नहीं होता है, वह धर्म है और जो वेदविरुद्ध होता है सो अधर्म है इस से मालूम होता है कि वेद ईश्वर प्रोक्त नहीं इस लिये जैसे ईश्वर सत्य है वैसा वेद का मंत्रभाग भी सत्य होना चाहिये और वेद कहने से तो मन्त्र, ब्राह्मण, उपनिषद्, यह तीनों भाग का वेद में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समावेश होता है इस लिये ये तीनों ईश्वरप्रणीत या ऋषिप्रणीत होने चाहिये ऐसा है तो इन में से मन्त्रभाग ईश्वरप्रणीत है और दूसरे दो भाग ऋषिप्रणीत हैं, यह बात स्वामी दयानन्द को कैसी मालूम हुई ?। जैसे मुसल्मानों के पैगम्बर को खुदा आप ही खबर भेजता था, मालूम होता है कि, ऐसा ही ईश्वर ने स्वामी को, एक भाग वेद का ईश्वरप्रणीत है और दूसरे दो भाग ऋषिप्रणीत हैं ऐसी खबर भेजी होगी ?।

उत्तर—मन्त्रभाग और ब्राह्मण उपनिषद् तीनों क्यों नहीं वेद माने जाते ? मन्त्रभाग के ही वेद मानने में क्या प्रमाण है ? क्या दयानन्द स्वामी के पास ईश्वर की ओर से कोई आयत उतरी थी कि मन्त्रभाग ही मेरा बनाया है ब्राह्मण उपनिषद् ऋषिकृत हैं। इस का उत्तर विशेष कर महामोहविद्रावण के उत्तरों में (जो आर्यसिद्धान्त में आरम्भ से छपे हैं) विस्तार पूर्वक मिले गा वहां आदि से देखना चाहिये। तथापि आयत उतरने के विषय में सुनिये ! ईश्वर को कुछ आवश्यकता नहीं है कि वह किसी को बतावे कि अमुक पुस्तक मेरा बनाया है अमुक नहीं क्योंकि ईश्वर ने परीक्षा करने के साधन मनुष्य को दे दिये हैं जिन से वह परीक्षा कर सकता है कि यह ईश्वरीय वचन है यह नहीं है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि ईश्वर साधन देकर भी बताने को आवे वा खबर भेजे तो साधन देना व्यर्थ हो जावे और फिर सभी बातें ईश्वर सब को बतावे करावे तो बुरे काम भी ईश्वर की ओर से हो जावें। राजा साहब से कोई पूछे कि जिन पुस्तकों को मनुष्यों के बनाये आप मानते हो उन के मनुष्यकृत होने में क्या ईश्वर ने आप के पास सन्देशा भेजा? कि वे मेरे बनाये नहीं हैं किन्तु मनुष्य के बनाये हैं। क्योंकि जैसे आप ब्राह्मणभागों को ईश्वरकृत कह सकते हैं वैसे कोई अन्य ऋषिकृत पुस्तकों को भी ईश्वरकृत कह सकता है उसके लिये साबूती क्या देंगे?। यदि कहें कि अन्य ऋषिकृत पुस्तकों के ईश्वरकृत न होने में अनेक प्रमाण उन्हीं पुस्तकों में हैं तो हम भी यही उत्तर दे सकते हैं कि ब्राह्मणउपनिषदों में भी ऐसे अनेक प्रमाण मिलते हैं जिन से वे ईश्वरीय अनादि वेद नहीं हो सकते यदि कहो कि जैसी बातें ब्राह्मणों में हैं वैसी ही वेदों में हैं तो उत्तर यह है कि बहुतसी बातें वेदों के समान ही धर्मशास्त्रों और इतिहासों में भी हैं तो वे भी वेद हो जावें? वस्तुतः जिन बातों के होने से ब्राह्मणादि पुस्तक ईश्वरकृत अनादि मूल वेद नहीं ठहरते वैसी बातें मन्त्रभागरूप मूल वेदों में नहीं हैं इस लिये वे ईश्वरकृत अनादि वेद ठहरते हैं।

अग्निष्टोमादि यज्ञोंके करनेकी आज्ञा वेदोंमें वस्तुतः है इससे वेदका महत्त्व बढ़ता है किन्तु किसी प्रकार का दोष नहीं आता॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अग्निष्टोमादि यज्ञों में पशु आदि की हिंसा वस्तुतः नहीं है। क्योंकि जिन शास्त्रकारों ने वेदों का पठनपाठन और प्रचार किया वेदोक्त धर्म चलाये अपने आप वेदानुकूल आचरण किये तथा वेदों के आशयों को लेकर अच्छे२ शास्त्र सुगम रीति से बनाये उन्होंने मांस खाने और किसी प्राणी को मारने में बड़ा पाप माना है देखो मनुस्मृति अ० ५ में

वर्षे वर्षेऽश्वमेधेन यो यजेत शतं समाः।
मांसानि न खादेद्यस्तयोः पुण्यफलं समम्॥

इस का अर्थ यह है कि जो सौ वर्ष में सौ अश्वमेधयज्ञ करे और जो कभी मांस न खावे उन दोनों का पुण्य बराबर है। जब मांसखाने में इतना पाप है तो अश्वमेध का अर्थ घोड़ा काटना यज्ञ में चढ़ाना और शेष मांस खाने में समझा जाय तो वहां भी पाप हुआ फिर मांस न खाने वाले को बराबर पुण्य कहना नहीं बनता तथा और भी देखिये महाभारतशान्तिपर्व अ० २७२ में लिखा है कि—

तस्य तेनानुभावेन मृगहिंसात्मनस्तदा।
तपो महत्समुच्छिन्नं तस्माद्धिंसा न यज्ञिया॥
अहिंसा सकलो धर्मो हिंसाऽधर्मस्तथाविधः।
सत्यन्तेऽहं प्रवक्ष्यामि यो धर्मः सत्यवादिनाम्॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहां पूर्व से प्रकरण यह है कि राजा युधिष्ठिर जी ने भीष्मपितामह जी से प्रश्न किया है कि धर्मार्थ और सुखार्थ यज्ञ कैसा होता है इस के उत्तर में एक तपस्वी ब्राह्मण और ब्राह्मणी का इतिहास भीष्म जी ने दृष्टान्त में दिया है कि वे दोनों तप करते २ जब यज्ञ करने को उद्यत हुए और अपने सुने जाने के अनुसार चाहना की कि यज्ञ में चढ़ाने के लिये मृग को मारें इस कारण उन का बड़ा तप खण्डित होगया क्योंकि हिंसा यज्ञ में नहीं करनी चाहिये ऐसा वेद का सिद्धान्त है अर्थात् अहिंसा ही सम्पूर्ण धर्मों का मूल और हिंसा सबअधर्मों का आचरण करनारूप है। हे युधिष्ठर ! यह मैं तुम से सत्य ही कहता हूं क्योंकि सत्यवादियों का परमधर्म हिंसा न करना ही है इस से स्पष्ट सिद्ध है कि पूर्वकाल में आर्य लोग हिंसा करना अच्छा नहीं समझते थे और न अब समझते हैं। ऐसे सैकड़ों प्रमाण अच्छे ग्रन्थों में मिलते हैं यदि यज्ञ में हिंसा करने के प्रमाण भी मिलते हैं ऐसा कोई कहे तो इस के लिये भी महाभारत के शान्तिपर्व मोक्षधर्म के उत्तरार्द्ध अ० ८२ में लि० है कि

सुरा मत्स्याः पशोर्मांसं द्विजातीनां बलिस्तथा।
धूर्त्तैः प्रवर्त्तितं यज्ञे नैतद्वेदेषु कथ्यते॥

मद्य मच्छली और पशुओं का मांस तथा ब्राह्मणादि का

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बलिदान धूर्त्तों हिंसक दुष्ट राक्षसों ने यज्ञ में चलाया है किन्तु यह वेदों में नहीं कहा गया उन्हीं धूर्त्तों ने अच्छे ग्रन्थों में जहां तहां मिला दिया क्योंकि अच्छे पूर्ण धर्मात्मा लोग सदा कम होते हैं। तब अधिक संख्या वाले धूर्त्तों की चढ़ बनती है।

और यह बात तो सत्य है कि एक मन्त्र का अर्थ कोई विद्यावल से अन्य प्रकार कर सकता है परन्तु परीक्षा कर देखने से और दो तीन प्रकार का अर्थ मिलाने से निश्चित कर सकते हैं कि इन में यह बनावटी है सो यदि राजा साहब ने किसी मन्त्र का अर्थ ऋषियों का किया जैसा देखा हो और उसी को खैंच कर श्रीस्वामीदयानन्दसरस्वती जी ने अन्यथा लगाया देखा हो तो उस को कृपा कर मेरे पास लिख भेजें मैं उत्तर दूंगा और तभी उत्तर देना ठीक बनेगा हमारा सिद्धान्त यह नहीं है कि अगस्ति वशिष्ठ आदि महर्षियों ने हिंसा विषय में वेद का अर्थ किया है सो ठीक नहीं किन्तु हमारा सिद्धान्त है कि महर्षि लोगों ने हिंसा परक वेद का अर्थ किया ही नहीं यदि किसी महाशय ने ऋषिकृत हिंसा परक वेदार्थ देखा हो तो सूचित करें। हम लोग ऋषियों पर कभी आक्षेप आने देना नहीं चाहते हां यह हो सकता है कि ऋषियों के नाम से कोई स्वार्थी वा स्वमत प्रचार चाहने वाला वचन बना लेवे कि ऋषियों के नाम से सब कोई

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मान लेंगे जैसे दिल्ली की मिठाई के नाम से ऊंट की लेंड़ी भी किसी ने खा ली थी। इस की हम लोग अनेक रीतियों से परीक्षा कर सकते हैं। धर्मशास्त्रों के वक्ता सब महर्षियों का यह परम सिद्धान्त है कि (अहिंसा परमो धर्मः) अहिंसा परम धर्म है तब वे लोग कैसे दोनों नाव पर पग धर सकते थे कि इधर हिंसापरक वेद का अर्थ करते इधर अहिंसा को परम धर्म ठहराते इस से निश्चित है कि ऋषियों का सिद्धान्त अहिंसा सर्वोत्तम मानने का ही है जैसा पूर्व महाभारतादि के प्रमाण सहित लिखा गया॥

(३) हां यह बात तो अवश्य है कि जो ऋषि लोग तप करने के लिये वन में रहते थे उन की तथा प्रजा की रक्षा के लिये आर्य राजा महाराजा लोग वन के दुष्ट जन्तुओं को मृगया (शिकार) द्वारा मारते थे उन जन्तुओं की हिंसा धर्म रक्षा के लिये थी इस से वह अहिंसा है क्योंकि वे दुष्ट जीवधारी ऋषि आदि के धर्म कृत्यों में महाविघ्नकारक होते हैं उन वन्य पशुओं का मांस यदि राज पुरुष खावें तो कोई विशेष दोष नहीं केवल इतना भय हो सकता है कि उन राजपुरुषों का मांसाहारी स्वभाव हो जावे तो ग्राम के उपकारी पशुओं को भी मार खाने का सम्भव है परन्तु पूर्वज आर्य लोग धर्म अधर्म उपकार अपकार को अच्छे प्रकार

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचार के धर्मविरुद्ध कदापि नहीं चलते थे इस से उन का स्वभाव मांसाहारी होना सम्भव नहीं था इसी लिये वे लोग उक्त प्रयोजनार्थ मारे हुए वन्य पशुओं का मांस अन्नादि के अभाव में प्राण रक्षार्थ भक्षण करते थे श्री स्वामीदयानन्दसरस्वती जी महाराज ने भी सत्यार्थप्रकाशादि में यही लिखा है कि हानिकारक वन के दुष्ट पशुओं को राजपुरुष विघ्न शान्त्यर्थ मारें तो उन के मांस खाने में अन्य हानि तो नहीं है परन्तु मांसाहारी स्वभाव पड़ जाने से उपकारी पशुओं को मार खाने का भय है। सो भी यह बात इतिहासों से सम्बन्ध रखती है किन्तु वैदिकी हिंसा से तात्पर्य्य नहीं है अर्थात् यह विधि नहीं है कि मांस खाना चाहिये वा मांस खाना तथा पशुओं का मारना अच्छा काम है। और न मेरा अभिप्राय है कि मांस खाना चाहिये किन्तु मांस खाना और खाने के लिये पशुआदि को मारना वास्तव में पाप ही है॥

वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति। हिंसा चैवाविधानतः॥

इत्यादि वचन जो धर्मशास्त्रों में मिलते हैं कि वेद रीति से जो हिंसा है वह हिंसा नहीं कहाती और वेदविधि से भिन्न हिंसा करना अधर्म है किन्तु जिस स्थल में वेद की आज्ञा हिंसा के लिये मिलती हो वह हिंसा अधर्म नहीं किन्तु धर्म ही है इस से यज्ञादि में हिंसा आ सकती हो सो नहीं किन्तु इस का तात्पर्य्य यह है कि राजा का दुष्ट प्राणियों को मार

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के श्रेष्ठों की रक्षा करना मुख्यकर्त्तव्य है जैसे मनुस्मृति के राजधर्म में लिखा है कि—

पुमांसं दाहयेत्पापं शयने तप्त आयसे।

महापापी जन को तपी हुई लोहे की खाट में पड़ा के जला देवे। और भी देखो!

गुरुं वा बालवृद्धौ वा ब्राह्मणं वा बहुश्रुतम्।
आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन्॥१॥

गुरु हो वा बालक, वृद्ध वा बहुश्रुत पं० ब्राह्मण हो यदि आततायी हो जावे (सर्वथा विचार रहित उन्मत्त के तुल्य सज्जन निरपराधियों को पीड़ा देवे वा मारडालने को उद्यत हो कर आवे वह आततायी कहाता है) तो राजा को उचित है कि विना विचारे मरवाडाले क्योंकि आततायी के मारने से हिंसारूप दोष मारने वाले को नहीं लगता। इस का अभिप्राय यह है कि—

मन्युस्तन्मन्युमृच्छति

क्रोध क्रोध को मारता है कोई मनुष्य किसी को नहीं मारता जो किसी को हिंसा का दोष लगे। ऐसे ही अन्य दुष्ट वन के सिंहादि प्राणियों के मारने में हिंसा दोष नहीं है इसी को वैदिकी हिंसा वा विहितहिंसा कहते हैं। यद्यपि दुष्ट प्राणियों के मारने में भी उन को प्राणवियोग का दारुणदुःख

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहुंचना यह भी हिंसा ही है और हिंसाजन्यपाप भी हिंसक राजादि को अवश्य होता है परन्तु उपकार और पुण्य की अपेक्षा पाप बहुत न्यून होता है इस लिये वह अहिंसा ही कहाती है जैसे एक हिंसक सिंह को मार डाला कि जो अपने जन्म भर में सैकड़ों उस से भी अधिक उपकारी देहधारियों को मारखाता तो एक को मार कर सौ को बचाना सौगुना उपकार वा पुण्य और एक गुणा पाप हुआ ऐसे कार्य्यों को धर्म ही कहते हैं इस लिये वेदविहित हिंसा को अहिंसा कहते हैं। अब रक्षा शत्रुसंहार और ब्रह्मास्त्रादि का वर्णन सो यह क्षत्रियों के प्रधान धर्मयुद्ध विषय की वार्त्ता है ईश्वर की तो आज्ञा वेदद्वारा यही है कि धर्मात्मा राजादि लोग ब्रह्मास्त्रादि से अधर्मी डाकू वा प्रतिपक्षी अधर्मात्मा राजादि को मारें धर्मात्माओं का विजय अधर्मियों का पराजय होना ईश्वर को सर्वदा अभीष्ट है इसी लिये वेद में स्पष्ट लिखा है कि—

युष्माकमस्तु तविषी पनीयसी मा-
मर्त्यस्य मायिनः ॥

हे धर्मात्मानो मननशीला मनुष्या युष्माकं तविषी सेना पनीयसी बलवती दुष्टराक्षसान् हन्तुं सम

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

र्थी भवतु परन्तु मायिनोऽधर्मात्मनश्छलकपटादियुक्तस्य मनुष्यस्य निर्बला सेना भवतु ॥

अर्थात् परमेश्वर आज्ञा देता है तुम धर्मात्मा लोगों की सेना बलवान् शत्रुओं को मारने वाली हो और छली कपटी की सेना बलवान् न होवे।

यही ईश्वर का न्याय है इसी न्याय प्रवृत्ति के अर्थ ब्रह्मास्त्रादि का विषय वेदद्वारा उपदेश किया है इस से ईश्वर पर हिंसा चाहने का दोष नहीं आसकता। यदि ब्रह्मास्त्रादि से कोई अन्यथा ईश्वर के अभिप्राय से विपरीत कार्य करे तो वह उस कर्त्ता का दोष है ईश्वर का नहीं जैसे लेखनी बनाने के शस्त्र से हाथ काट लेना चाकू बनाने वाले का दोष नहीं।

और कोई पं० विद्याबल से वेद का अर्थ अपने पक्ष में लगा सकता है यह तो ठीक है परन्तु श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने जहां ऐसा किया हो उस को आप दिखाइये और अन्य जिस अर्थ को ठीक समझते हों उस को भी लिखिये तब उत्तर ठीक २ दिया जाय। पूर्व से लेकर अब तक यह सब आर्य्यों का सिद्धान्त है कि वेद सब धर्मसम्बन्धी कर्त्तव्य कार्यों और विद्याओं का मूल है तो स्वामी जी ने किस स्थल में अधर्म वा अविद्या की बात वेद से निकाली है? उस को प्रकाशित करना चाहिये। यदि कहीं अन्य ऋषि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदि लोगों ने कोई अन्य धर्मसम्बन्धी विषय निकाला हो और स्वामी जी महाराज ने अन्य उपयोगी अर्थ किया हो तो यह विरोध नहीं कहा जा सकता क्योंकि वे सब बातें वेद से निकल सकती हैं जैसे ज्योतिष और वैद्यक परस्पर विरुद्ध नहीं कहे जाते। ऐसे अनेक विषय होते हैं जो परस्पर विरुद्ध नहीं होते, परस्पर विरुद्ध ये हैं जैसे सुख दुःख, दिन रात धर्म अधर्म इत्यादि ये दो २ विषय इकट्ठे नहीं रह सकते! स्वामी जी महाराज ने जो वेद का अर्थ किया है उस से विशेष कोई पण्डित विद्या और धर्म विषय में अर्थ करे तो इस से स्वामी जी का किया अर्थ खण्डित नहीं हो सकता क्योंकि उन्हों ने यह इयत्ता (हद) नहीं कर दी है कि हमने जो अर्थ कर दिया है इस से अधिक अर्थ नहीं है। जब ऐसा नहीं है तो विरोध कहां मिल सकता है। और यह राजा साहब से निवेदन है कि वशिष्ठऋषि आदि ने मन्त्रभाग का हिंसा पर अर्थ किस पुस्तक में किया है और अश्वालम्भ गवालम्भ किस इतिहास में ऋषियों के किये लिखे हैं? उन के पते और वे वचन प्रमाण देने चाहिये। "राष्ट्रं वा अश्वमेधः" यह शतपथ ब्राह्मण का वचन है। राज्य ही अश्वमेध है इस का तात्पर्य यह है कि राज्य में अश्वमेध हो सकता है अश्वमेध करना राजा का ही काम है प्रजा का नहीं। अश्व—घोड़े को मेध नाम सङ्गत करना

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात् जिस कर्म विशेष में घोड़े की सम्यक् गति गमन करना हो वह अश्वमेध कहाता है। यह बात प्रसिद्ध इतिहासों में लिखी है कि जिन २ चक्रवर्त्ति आर्य महाराजों ने अश्वमेध किया है उन्होंने अच्छा नामी घोड़ा छोड़ के निश्चय किया है कि यदि हमारा सामना कोई कर सकता हो तो घोड़े को बांध लेवे यदि कोई बांध लेताथा तो उस के साथ युद्ध ठन जाता था।

"अश्वमेध" यज्ञ चक्रवर्त्ति होने की एक निशानी है घोड़ा छोड़ने के सम्बन्ध से अश्वमेध कहाता है कुछ घोड़े के मारने से तात्पर्य नहीं है "मेधृ सङ्गमे च" मेधृ धातु सङ्गम, मेधा और हिंसन अर्थों में है इन में से किसी स्वार्थी वा वेदविरोधी ने हिंसन अर्थ लेकर हिंसा ठहरा के वेद को निन्दित किया और बहुतों से ऐसे कर्म कराये भी होंगे क्योंकि घोड़े को मारने की चर्चा अनेक ग्रन्थों में मिला दी है और ऋषियों के नाम भी रख दिये हैं परन्तु मूल वेद में किसी ने नहीं मिलाया। यही कुशल रही। मेधृ धातु का हिंसार्थ यज्ञ के साथही लिया जावे इस में कोई विशेष प्रमाण नहीं मिल सकता। जो २ आर्यराजा लोग चक्रवर्त्ति होते आये हैं उन सब ने अश्वमेध किया परन्तु राणियों से घोड़े का समागम भी महाघृणित और लज्जा का स्थान है। राजा दशरथ जी ने अश्वमेध किया है सो वाल्मीकीय रामायण में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखा है घोड़े से समागम आदि नहीं लिखा है अश्वमेध का शतपथब्राह्मण के अनुसार द्वितीयार्थ यह भी है कि

"अश्वो वा ईश्वरः, आज्यं मेधः,, अश्वाय मेधोऽश्वमेधः ॥

अशूङ्व्याप्तौ। धातु से अश्व शब्द बना है व्याप्त ईश्वर की आज्ञापालन के लिये जो घी की आहुति देना है सो अश्वमेध है इस से यौगिक हुआ परन्तु इस में विधि विशेष है उस से योगरूढ़ मानना चाहिये। यद्यपि अश्वमेध का मुख्य तात्पर्य चक्रवर्त्ती होने का नमूना है तथापि आर्यों के सब शुभ कर्मों के साथ ईश्वर की प्रार्थनोपासना हवनादि मङ्गल कार्य लगे चले आते हैं छोटा बड़ा जैसा कार्य हो उस में वैसा ही होम दान पुण्य आदि करते आये हैं अश्वमेध एक बड़ा कर्म है इस लिये उस में यज्ञादि का बृहत् विधान है। इसी प्रकार अन्य यज्ञों में भी हिंसा नहीं है। विद्यारण्य स्वामी जी ने जो हिंसा परक वेदार्थ किया है इस का उत्तर यही है कि जब उन से पहिले जो कोई वेदार्थ वक्ता हुए उन्हों ने भी ऐसा किया तो एक दूसरे के सहारे भेड़ चाल पर चलते आये कुछ विचार विशेष नहीं किया यही उन लोगों की न्यूनता रही। विशेष विचार करने वाले सब मनुष्य नहीं होते लाखों में कोई कभी हो जाता है जो बहुत दिन से निर्मूल

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चली हुई बातों का मूल खोज लेता है। ऐसे ही विद्यारण्य स्वामी जी आदि ने खोज न किया और श्रीस्वामीदयानन्द सरस्वती जी ने ऐसी २ बातों का मूल अच्छे प्रकार खोजा। यज्ञ शब्द से भी किसी प्रकार हिंसा नहीं पायी जाती देव पूजा आदि यज्ञार्थ के अभिप्राय से हिंसा एक विपरीत कर्म प्रतीत होता है। अब उपसंहार में फिर भी यही लिखा जाता है कि ऋषियों के बनाये ग्रन्थ न तो परस्पर विरुद्ध हैं और न ऋषि लोगों ने हिंसापरक वेद का अर्थ किया है यदि कहीं हो तो किसी का मिला देना सम्भव है। ऋषियों का तो यही सिद्धान्त है कि अहिंसा परम धर्म है। और मन्त्रभागरूप मूल वेद यथार्थ सत्य हैं उनमें कोई दोष वा मिथ्या बात नहीं है॥ यदि किसी को किसी मन्त्र पर अन्यथा होने की शङ्का होतो लिखे कि अमुक मन्त्र में अमुक बात अन्यथा प्रतीत होती है तो यथावत् समाधान दिया जायगा॥

२—(प्रश्न) जीव का और ईश्वर का पिता पुत्र सम्बन्ध है, ऐसा स्वामी जी लिखते हैं० और दूसरे जगह में ईश्वर, जीव और प्रकृति यह तीनों अनादि हैं, ऐसा लिखते हैं० परन्तु इन दो बातों का परस्पर विरोध है, क्योंकि ? पिता से पुत्रोत्पत्ति होती है० इस लिये पुत्र (जीव) अनादि हुआ, तो पिता पुत्र संबध कैसा होगा ?।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२—(उत्तर) स्वामी जी महाराज ने जो जीव ईश्वर का पिता पुत्र सम्बन्ध लिखा और ईश्वर के साथ जीव को अनादि लिखा इस में परस्पर कुछ भी विरोध नहीं आता क्योंकि राजा प्रजा में भी पिता पुत्र वा स्वस्वामि सम्बन्ध माना जाता है तो क्या इतने कर के राजा प्रजा का उत्पन्न करनेवाला है ?। और पिता भी शरीर को उत्पन्न करने वाला साधारण निमित्त कारण है कुछ आत्मा को उत्पन्न नहीं करता। अर्थात् आत्मा की उत्पत्ति से पिता नहीं कहाता परन्तु सब के जन्म मरण का मुख्यनिमित्त कारण ईश्वर ही है क्योंकि ईश्वर की व्यवस्था के बिना जन्म मरण किसी का कभी नहीं होता तथा सृष्टि के आरम्भ में भी सब का जन्मदाता परमेश्वर ही है इस लिये वह सब का पिता है और पिता शब्द का अर्थ उत्पत्ति करनामात्र नहीं है। क्योंकि—

[उत्पादकब्रह्मदात्रोर्गरीयान् ब्रह्मदः पिता] मनु०

उत्पत्ति कर्त्ता और वेद का दाता इन दोनों पिताओं में वेद का दाता पिता अतिश्रेष्ठ है। व्याकरण की रीति से पिता शब्द का अर्थ पालन करने वाला है। इस को अन्य लोगों ने पांच स्थानों में योगरूढ़ किया है तद्यथा—

जनकश्चोपनेता च यश्च विद्यां प्रयच्छति ।
अन्नदाता भयत्राता पञ्चैते पितरः स्मृताः ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्पन्न करने वाला, यज्ञोपवीत कराने वाला, विद्या देने वाला, अन्नदाता और भय से बचाने वाला, पांच ये प्रकार के पिता कहाते हैं। ये सब अर्थ मुख्य कर पालन से तात्पर्य्य रखते हैं अर्थात् उत्पन्न कर जन्म से पालना, यज्ञोपवीत करा के उत्तम शिक्षा करना, विद्या पढ़ा के अविद्या से बचाना, अन्न देकर अन्नाभाव के दुःख से बचाना और भय सम्बन्धी दुःख से बचाना ये सब अर्थ मुख्य कर परमेश्वर में भी घटते हैं क्योंकि परमेश्वर उत्पादकों का भी उत्पादक आदि है। और गौणभाव से उन २ उपयोग के कर्त्ता मनुष्यों में भी घटते हैं। जब पितृ शब्द पालनार्थ से मुख्य सम्बन्ध रखता है तो लेशमात्र भी विरोध ईश्वर जीव के पिता पुत्र सम्बन्ध में नहीं आता और यही अर्थ राजा प्रजा के पिता पुत्र सम्बन्ध में घटता है। द्वितीय एक विचार यह भी है कि "जीव प्राणधारणे," जीव शब्द प्राणों को धारण करने अर्थ में वर्त्तमान जीव धातु से बना है तो प्राणधारणकर्त्ता अर्थात् शरीरधारी को जीव कहेंगे उस के शरीर धारण का मुख्य निमित्त ईश्वर है इस लिये परमेश्वर सब का पिता और शरीरधारी सब पुत्र हैं। और शरीर रहित आत्मा को जीव नहीं कह सकते किन्तु आत्मा वा जीवआत्मा कहते हैं तो वहां पालन अर्थमात्र से जीवात्मा का पिता परमेश्वर कहा जावे गा। इत्यादि कारण से ईश्वर जीव के अनादि पितापुत्र सम्बन्ध में कोई दोष नहीं आता॥ इति।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) प्रश्न—ईश्वर, जीव, प्रकृति, यह तीनों जगत्कारण हैं, इन तीनों में इन का पृथक् पृथक् स्वभाव भी नित्य है, वह स्वभाव से और द्रव्य गुण कर्म सम्बन्ध से पदार्थोत्पत्ति होती है वह सम्बन्ध जब नष्ट होता है, तब वह पदार्थ भी नष्ट, हो जाता है, यह स्वभाव जिस से प्रथम संयोग होता है वह सामर्थ्य उस में अनादि से है, इस लिये—वियोगानन्तर फिर संयोग होता है, ऐसा होते से प्रवाह को अनादि कह कर स्वामी जी ने लिखा है; इस लिये ईश्वर, जीव प्रकृति, वह तीनों भी द्रव्य गुण कर्म सम्बन्ध से उत्पन्न हो के, फिर क्या नष्ट हो जाते हैं ?। तो ईश्वर भी द्रव्य गुण सम्बन्ध का तावेदार होता है, इस कारण से जो लोग स्वभाववादी हैं, सो नास्तिक मत के अनुगामी होते हैं,

३—(उत्तर) यह तृतीय प्रश्न वस्तुतः ठीक नहीं, जान पड़ता क्योंकि ईश्वर, जीव और प्रकृति इन से द्रव्य, गुण कर्म कोई भिन्न पदार्थ नहीं हैं। आत्मा और पञ्चभूतात्मक प्रकृति स्वयं द्रव्य स्वरूप हैं। गुण और कर्म यथासम्भव इन्हीं उक्त द्रव्यों में रहते हैं तो फिर यह कल्पना कैसे बन सकता है कि द्रव्य गुण कर्म के सम्बन्ध से ईश्वर, जीव और प्रकृति उत्पन्न हो के फिर क्या नष्ट हो जाते हैं ?। स्वामी जी महाराज ने भी अपने किसी पुस्तक में ऐसा नहीं लिखा। हां अन्य कुछ बात लिखी हो और उस को प्रश्न कर्त्ता उलटा समझ गये हों

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह सम्भव है। यदि प्रश्न लिखने में न बना हो और प्रश्नकर्त्ता का यह अभिप्राय हो कि "जब प्रकृति में तत्तत्पदार्थरूप बनने का सामर्थ्य स्वाभाविक है तो उस से विरुद्ध परमेश्वर कुछ नहीं कर सकता इस लिये ईश्वर प्रकृति के आधीन हो गया" तो इस का उत्तर यह है कि प्रकृति में तत्तत्पदार्थस्वरूप बनने का सामर्थ्य तो वस्तुतः स्वाभाविक है जैसे जिस मृत्तिका में घटरूप बनने का सामर्थ्य है उसी से कुम्हार घड़ा बना सकता है किन्तु बालू से घड़ा नहीं बना सकता परन्तु जैसे चिकनी मट्टी से भी कुम्हार आदि के विना घड़ा नहीं बन सकता और न कुम्हार आदि उस मट्टी के आधीन गिने जाते हैं क्योंकि मट्टी में घड़ा बनने का सामर्थ्य रहते भी जड़ होने से कुम्हार आदि पर आज्ञा नहीं चला सकती कि अवश्य घड़ा बनाना ही पड़े। कुलाल आदि घड़ादि के बनाने में स्वाधीन हैं तथापि अपने स्वभाव के आधीन हैं। ऐसे ही प्रकृति में तत्तत्पदार्थरूप बनने का सामर्थ्य रहते भी ईश्वर उस के साथ बद्ध नहीं होता किन्तु अपने कर्त्तव्य में स्वाधीन रहता है परन्तु ईश्वर भी अपने स्वभाव के आधीन है क्योंकि ईश्वर के ज्ञान, बल और क्रिया स्वाभाविक हैं किन्तु किसी निमित्त से नहीं हैं॥

स्वाभाविकी ज्ञान बल क्रिया च।

स्वाभाविक कार्य नियमपूर्वक ज्यों के त्यों हुआ करते हैं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे सूर्य के उदय अस्त अग्नि का दाहगुण इत्यादि। ऐसे ही नियत २ समय पर सृष्टि की उत्पत्ति स्थिति और प्रलय करना ईश्वर के स्वाभाविक कर्म हैं कभी नियम से विरुद्ध एक रोम भर भी नहीं करता न होता यही उस की ईश्वरता का पूर्ण लक्षण है। मनुष्य के काम कैसे ही नियम बद्ध हों तथापि कभी न कभी नियम विरुद्ध हो ही जाते हैं।

बहुधा लोग नियम बद्ध होने और कुम्हार के तुल्य प्रकृति से ही सृष्टि रच सकने से ईश्वर को कुम्हार के तुल्य तुच्छ मानते हैं कि ऐसा है तो ईश्वर तुच्छ है॥

इस का उत्तर यह है कि यदि उस काम को अन्य कुम्हार कर सकता हो वा उस एक ईश्वर से भिन्न सृष्टि भर में अन्य कोई भी कर सकता तो ईश्वर की न्यूनता कह सकें जब कोई भी उस काम को नहीं कर सकता तो ईश्वर का महत्व सर्वोपरि उस के काम से ही सिद्ध हो गया। यदि थोड़े साधर्म्य के होने से तुच्छता हो तो मनुष्य और चीटी दोनों पगों से चलते हैं तो क्या मनुष्य चीटी के तुल्य तुच्छ हो जायगा और जगत् रचने में कुलाल की तुल्यता ईश्वर को सभी मानते हैं। इस से कुछ भी तुच्छता नहीं आती। नैयायिकों ने स्पष्ट लिखा है कि-

साकर्तृकमिदं जगदिति प्रतिज्ञा। कार्यत्वादिति हेतुः। घटादिवदित्युदाहरणम्। यथा घटादिकार्य

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलालादिकर्त्तारमन्तरेण नोत्पत्तुमर्हति तथेदं जगदप्यीत्युपनयः। तस्मात्कार्यत्वात्सर्वशक्तिमदीश्वरकर्तृकं जगदिति निगमनम् ॥

यह पंचावयव वाक्य न्यायानुकूल है अभिप्राय यही है कि इस जगत् का बनाने वाला कोई अवश्य है क्योंकि इस के बनावटी होने से घड़ा आदि के तुल्य जैसे घट आदि बनावटी वस्तु कुम्हार आदि कर्त्ता के विना उत्पन्न नहीं होसकता जहां २ ज्ञान पूर्वक बनावट हो और उसका बनाने वाला न देखा होतो भी जैसे घट आदि का कर्त्ता कुम्हार आदि मानने पड़ता है किन्तु यह कोई नहीं मान लेता कि अमुक घटादि कुम्हार आदि के विना बनगया वैसे ज्ञान पूर्वक बनावट देख कर इस जगत् का कर्त्ता अवश्य मानना चाहिये और वह सर्वज्ञ हो सकता है। इस से सिद्ध हुआ कि बनावटी होने से इस जगत् का कर्त्ता सर्व शक्तिमान् ईश्वर है। और कर्म के साथ ईश्वर जीव सभी सम्बन्ध रखते हैं भेद केवल यह है कि ईश्वर के स्वाभाविक विना परिश्रम के निर्निमित्त महत् कर्म हैं और जीव के परिश्रम साध्य नैमित्तिक अल्प कर्म हैं और कर्म ही से महत्व अल्पत्व लगा है जिस के जैसे कर्म हैं वह वैसा ही है ईश्वर के उत्पत्ति आदि कर्म अनन्यकर्त्तृक हैं इस लिये ईश्वर सब से बड़ा है। इति ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४—(प्रश्न) स्वामी लिखते हैं मुक्ति वह है कि जो सर्व दुःख से छूट के किसी प्रकार का बन्धन में न पड़े सर्वव्याप्त होके ईश्वर में और सृष्टि में घूमना यह मुक्ति है, ऐसा मोक्षानुभव पर्यन्त आनन्द भोग के फिर संसार में प्रविष्ट होता है इस पद से मुझे मालूम होता है कि मुक्ति का शब्दार्थ हेतु स्वामी जी के ध्यान में बराबर नहीं आया, क्योंकि मुक्ति शब्द का अर्थ सर्वबन्ध विमोचन है, ऐसा हो के भी थोड़ा काल मुक्त्यानन्द पाके फिर जन्मादिक संसार में आना यह मुक्ति कौन जाति की है ? और मुक्ति पुरुष ईश्वर में और ईश्वर सृष्टि में घूमना यह बात से ईश्वर को अपूर्णता भी आती है, यह बड़ी शोच की बात है कि आप लिखे हुये बात का पूर्वोत्तर विरोध स्वामी जी के ख्याल में भी नहीं आया॥

४—(उत्तर) आप लिखते हैं कि स्वामी जी के लेख से मुझे मालूम होता है कि (मुक्ति का शब्दार्थ हेतु स्वामी जी के ध्यान में बराबर नहीं आया क्योंकि मुक्ति शब्द का अर्थ सर्वबन्ध विमोचन है) हम लोग तब तो मान लेते कि स्वामी जी मुक्ति के शब्दार्थ को नहीं समझे जो आप उन से विशेष हम को समझा देते । और उन के लेख का सर्वथा खंडन कर देते सो तो कुछ हुआ नहीं । अब आप लिखते हैं कि सर्वबन्धन विमोचन मुक्ति का अर्थ है तो शब्दार्थ में व्याकरण तथा कोष से ही प्रमाण दिया जाता है आप ने कोई प्रमाण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं दिया कि जिस से उक्तार्थ पुष्ट होजाता। और वे सब बन्धन कौन हैं? जिन से विमुक्त होना मुक्ति है। बन्धन शब्द एक प्रकार के नियम(कानून) अर्थ में विद्यमान है वह नियम शास्त्रीय माना जाता है कि जिस को वर्णाश्रम धर्मव्यवस्था कहते हैं उस को पूर्णरीति से साङ्गोपाङ्ग कर चुकना अर्थात् बन्धनरूप कर्म को कर लेना उस के करने से मुक्त होना ही मुक्ति है।

अत्र प्रमाणम्। ऋणानि त्रीण्यपाकृत्य मनो मोक्षे निवेशयेत्।
अनपाकृत्य मोक्षन्तु सेवमानो व्रजत्यधः॥१॥
अधीत्य विधिवद्वेदान् पुत्रांश्चोत्पाद्य धर्मतः।
इष्ट्वा च शक्तितो यज्ञैर्मनो मोक्षे निवेशयेत्॥२॥
मनुः अ० ६॥

बन्धन रूप तीन ऋणों को चुका के ही मुक्ति में मन लगावे क्योंकि ऋणों के विना चुकाये यदि मोक्ष चाहे तो प्राप्त नहीं हो सकता उलटा नीचगति को पाता है इस से सिद्ध हुआ कि जिस के न कर लेने से मुक्ति नहीं हो सकती उस का कर लेना ही मुक्ति है। विधिपूर्वक वेदों को पढ़ना यह ब्रह्मचर्याश्रम नियम निर्वाहरूप एक ऋण। गृहाश्रम के धर्म कर्म के नियम निर्वाहरूप धर्म से पुत्रों को उत्पन्न करना अर्थात् शास्त्रानुसार गृहाश्रम को निवाहना द्वितीय ऋण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और यथाशक्ति वेद की आज्ञानुसार अग्निहोत्रादि यज्ञ करना यह तृतीय ऋण चुकाना है इन सब को यथाविधि कर के ही मोक्ष में मन लगावें॥

ऋणान्येव बन्धनरूपाणयत्र न्यायसूत्र भाष्ये वात्स्यायनो महर्षिराह—ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यो यज्ञेन देवेभ्यः प्रजया पितृभ्य इति ऋणानि तेषामनुबन्धः स्वकर्मभिः सम्बन्धः। कर्म लोपे ऋणीव ऋणादाना-न्निन्द्यते कर्मानुष्ठाने च ऋणीव ऋणादानात्प्रशस्यते॥

यथाविधि ब्रह्मचर्य सेवन से ऋषिऋण धर्म से पुत्रोत्पत्ति अर्थात् गृहाश्रम के यथावत् अनुष्ठान से पितृऋण और वान-प्रस्थ के यथावत् यज्ञादि कर लेने से देव ऋण चुक जाता है इन ऋणों का कर्मानुष्ठान के साथ जो सम्बन्ध है वही बन्धन है जैसे धनादिरूप ऋण का न देने वाला निन्दित होता और चुका देने वाला प्रशस्त कहाता है वैसे ही तीन आश्रम कृत्य को पूर्ण कर लेना भी ऋण का चुका देना है यद्यपि इस में कहीं २ प्रकारान्तर यह भी है कि केवल एक वा दो पहिले आश्रम का सेवन करने से भी मुक्त्यधिकारी हो सकता है तथापि कहीं देश काल वस्तु भेद से क्रम ऋण के चुकाने से ही पूर्ण चुका मान लिया इस से उस प्रधान पक्ष में बाधा नहीं आ सकती। यदि आप शरीरहूर को बन्धन समझते

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हों तो जीवन्मुक्त में मुक्त शब्द का अर्थ नहीं घटे गा। इस लिये शास्त्र का सिद्धान्त यह है कि अग्निहोत्रादि वैदिक कर्म से अन्तःकरण की शुद्धिरूप ज्ञान से मुक्ति होती है तात्पर्य्य वही है कि शुभ कर्मानुष्ठान के विना कर्मकाण्ड की निन्दा करने वालों की मुक्ति नहीं हो सकती किन्तु कर्म करके ही मुक्ति हो सकती है। यही सिद्धान्त स्वामी जी महाराज ने दृढ़ किया है कि शुभ कर्म किये विना मुक्ति नहीं हो सकती॥

अब मुक्ति शब्द के अर्थ पर विचार करें तो यही सिद्ध होता है कि छूटना, इस में अपेक्षा हुई कि किस से छूटना तो उत्तर यही है कि जिस से छूटना चाहते हैं और छूटना सब कोई दुःख से चाहते हैं यदि विशेष विचार न किया जावे तो शीतोष्ण क्षुधा तृषा आदि सम्बन्धी दुःख नित्यप्रति छूटते लगते हैं तो नित्य मुक्ति हुआ करे जो थोड़े २ काल में बार २ आवे जावे उस को छूटना नहीं कह सकते किन्तु जो ऐसा छूटे कि जिस से अधिक छूटना ही न बने वही मुक्ति है॥

अब विचार का स्थल है कि महाराजा साहब ने स्वामी जी महाराज का अनुवाद किया कि जो सर्व दुःख से छूट के किसी प्रकार के बन्धन में न पड़े सर्वव्याप्त ईश्वर में और उस की सृष्टि में घूमे यह मुक्ति है। और राजा साहब कहते हैं कि सार्व बन्धविमोचन मुक्ति शब्द का अर्थ है इन दोनों

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथनों में क्या भेद है?इन,में कुछ भेद प्रतीत नहीं होता राजा साहब का लेख गोल २ है और स्वामी जी महाराज का प्रसिद्ध है। कदाचित् कहो कि सर्वव्याप्त ईश्वर और उस की सृष्टि में घूमना कैसे जाना तो आप कैसा मानते हैं? क्या एक स्थान विशेष वा देश विशेष में बद्ध रहता है? तब मुक्ति क्या हुई। तो यही कह सकते हैं कि निर्बन्ध स्वाधीन है यथेष्ट विचरता है पञ्चभूतादि की रुकावट में भी नहीं आता। लोक लोकान्तर में यथेष्ट अव्याहतगति विचारता है यही मुक्ति है द्वितीय विचार भेद यह है कि अन्य लोग मुक्ति से पुनरावृत्ति नहीं मानते और स्वामी जी मानते थे इस में स्वामी जी महाराज का कथन यह था कि जब सर्व तन्त्रसिद्धान्त से सब जीव अपने स्वरूप से अनादि हैं तो अन्त वाले नहीं हो सकते यदि मान्त हों तो अनित्य होंगे। और अनादि अनन्त मानने पर भी यदि मुक्ति से पुनरावृत्ति नहो तो एक, जन्म कैदके समान मुक्ति होगी यदि मुक्तावस्था में ब्रह्म में मिल जाना मानें तो भी जीव अनित्य हो जावें गे यदि नाशवान् मानें तो उत्पत्ति धर्मक अवश्य मानना पड़ेगा स्वामी जी के अपने लिखे में पूर्वापर विरोध नहीं है किन्तु आप की समझ में भेद है पुनः विचारिये॥

५-वेद भगवत्प्रणीत ठहरा तो भगवत् को मुख से कहना पड़ा होगा, तब ईश्वर को एक परिछिन्नरूप ठहराया है,

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी स्वामी जी आशङ्का कर के शङ्का परिहार करने में कहते हैं कि, ईश्वर आप के मुख से वेद बोला नहीं, परन्तु महर्षि के हृदय में प्रेरणा करके, उन के, मुख द्वारा प्रकट किये हैं, और चारो वेद फलाना फलाना बोला है, ऐसा शतपथब्राह्मण में लिखा है, ऐसा स्वामी जी लिखते हैं, इस कारण से वेद अनादि नहीं, ऐसा स्वामी जी के लेख पर से ज्ञात होता है, ईश्वर प्रेरणा से ऋषियों ने वेद को प्रकट किया, इस से वेद ईश्वरप्रणीत हैं, ऐसा कहैं तो अन्य मत वाले भी अपने धर्म ग्रन्थों को ईश्वरप्रणीत कह सक्ते हैं क्योंकि ? उनके शास्त्र ग्रन्थ ईश्वर ने उनके आचार्यों के द्वारा प्रकट किये हैं, ऐसा वे कहते हैं, और अपना वेद सत्य, हो है, और ईश्वरप्रणीत करने चाहते भी हैं, और वे कहते हैं कि ईश्वर ने भेजा है, इस का दृष्टान्त क्रिस्तियन लोगों ने अपने बैबल को "सत्य वेद„ कर के नाम भी रक्खा है, ऐसा दयानन्द स्वामी ने भी अपने ग्रन्थ का (सत्यार्थप्रकाश) नाम दिया है, इसहेतु से कोई वेद ईश्वरप्रणीत नहीं है, ऐसा ज्ञात होता है॥

५-(उत्तर) ईश्वर ने ऋषियों के द्वारा वेद प्रकट किये तो अनादि नहीं ऐसा स्वामी के लेख से ज्ञात होता है यह बात ठीक नहीं क्योंकि ऋषियों के द्वारा प्रगट होने से वेद अनित्य नहीं हो सकते हैं ऐसा हो तब तो जब न्यून प्रवृत्ति हो जाती है कालवश से वेद लुप्त प्राय हो जाते हैं तब जो२

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्मा प्रचारक हों जिन के द्वारा वेद का प्रचार हो उन्हीं महात्माओं को उस का कर्त्ता मान लिया जाया करे तो प्रतिदिन वेद बना करें इस प्रकार विशेष से वे कर्त्ता नहीं हो सकते ऐसे ही ऋषि लोग भी वेद के द्रष्टा प्रवक्ता प्रचार कर्त्ता कहाते हैं किन्तु निर्माता नहीं कहाते तो उनके देखने पढ़ाने और प्रचार करने से पहिले भी वेद का होना सिद्ध हो गया और प्रलयावस्था में वेद ईश्वर के ज्ञान में रहते हैं इसी से अनादि हैं ॥

ईश्वर प्रेरणा से ऋषियों ने वेद प्रगट किया इस से वेद ईश्वरप्रणीत हैं ऐसा कहैं तो अन्य मत वाले भी अपने ग्रन्थों को ईश्वरप्रणीत कह सकते हैं क्योंकि उन के ग्रन्थ ईश्वर ने उन २ के आचार्यों के द्वारा प्रगट किये हैं । इत्यादिः—

इस का उत्तर यह है कि जब किसी बात में सन्देह पड़ जाता है तब उस सन्देह की निवृत्ति के जो २ साधन होते हैं उन से सन्देह छुड़ाये जाते हैं ऐसा कोई सन्देह नहीं कि जिस की निवृत्ति का कोई उपाय न हो । जैसे सब रोगों की औषधि है पर असाध्य की नहीं ऐसे ही असाध्य अज्ञान जो पश्वादि में है उस की तो औषधि होना कठिन है पर मनुष्य के सन्देह तो निवृत्त होसकते हैं । ईश्वरप्रणीत पुस्तक कई हो सकतेक हैं इस में वस्तुतः कौन ईश्वरप्रणीत है ? । इस के साधन चार प्रमाण विशेष कर हैं प्रथम प्रत्यक्ष

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से सब को मिला कर देखना चाहिये कि कौन पुस्तक किस का बनाया हो सकता है किस में निष्पक्ष और ईश्वर के गुण कर्म स्वभावानुकूल लेख है और किस में विरुद्ध है। कौन पुस्तक कितने दिनों का बना है सृष्टि के साथ का बना कौन है ? दो हजार तीन हजार वा १३ तेरहसौ वर्ष से जो पुस्तक बने हैं वे ईश्वर की ओर से कैसे हो सकते हैं ? भूगर्भ विद्या वाले सृष्टि को लाखों वर्ष की हुई सिद्ध करते हैं तो २ वा ३ हजार वर्षों से पहिले मनुष्यों के लिये कोई कानून नहीं था ? । पुनः ईश्वरीय पुस्तक में संसारी मनुष्यों के इतिहास क्यों कर हो सकते हैं क्या जिन का इतिहास लिखा उन का ईश्वर पक्षपाती था ? और यदि पहिला पिछला दोनों पुस्तक ईश्वरकृत अनादि मानो तो क्या ईश्वर अङ्गरेजों के तुल्य थोड़े काल में अपना कानून बदला करता है ? बदला करता है तो पहिले कानून में भूल रह जाना सिद्ध हो गया जिस के काम में भूल रह गई वह सर्वशक्तिमान् सर्वज्ञ ईश्वर कदापि नहीं कहा जा सकता। मुहम्मदी लोग कुरानों के बाईबल को मंसूख हुआ कहते हैं ईश्वर का काम ऐसा क्यों कर हो सकता है ? । ऐसे तो ईसाई आदि के तुल्य सभी कूंजड़ी अपने २ बेरों को मीठा बतलाती हैं पाठकों को परीक्षा करनी चाहिये जो वस्तुतः ठीक हो उस को ग्रहण करें। हम लोग वेद को उन २ आचार्यों के द्वारा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रगट होने मात्र से ईश्वरकृत नहीं मानते अर्थात् ईश्वर प्रेरणा से ऋषियों ने वेद को प्रगट किया इसी प्रमाण से ईश्वर की विद्या वेद है ऐसा हम सिद्ध नहीं करते। किन्तु वेद किस के द्वारा और कैसे प्रगट हुये इस बात को निकाल देने से केवल इतना प्रश्न रह जाता है कि वेद किस की ओर से हैं इस प्रश्न का उत्तर जब ईश्वर के गुण कर्म स्वभावानुकूल वेद के होने मनुष्य की रचना से व्यतिरिक्त होने तथा अतिप्राचीन परम्परा की साक्षिता सृष्टिक्रम की अनुकूलता आदि से वेद ईश्वर की अनादि विद्या सिद्ध हुई तो यह अपेक्षा हुई कि संसार में वेद प्रकट कैसे हुए? तो अति प्राचीन परम्परा से सिद्ध हुआ कि ऋषियों के द्वारा प्रगट हुए। हम लोग जब अनेक कारणों से सिद्ध कर सकते हैं कि वेद ईश्वर की अनादि अपौरुषेय विद्या है तब किस के द्वारा और कैसे प्रगट हुए इस बात पर अधिक बल देने की कुछ आवश्यकता नहीं क्योंकि ईश्वर की विद्या सिद्ध हो जाने मात्र से यह सिद्ध हो जायगा कि संसार में भी किसी प्रकार अवश्य आया। जैसे कि श्रीमती विकटोरिया महाराणी का चिन्हरूप कोई वस्तु आर्यावर्त्त में मिले और सिद्ध हो जावे कि यह वस्तु अमुक की है तो किसी प्रकार यहां आना न्याय से सिद्ध है फिर इस पर झगड़ा खड़ा करना कि यहां कैसे आया यह बुद्धिमानों का काम नहीं। वेद ईश्वर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की अनादि विद्या है इस की सिद्धि के लिये जैसे हमारे पास बहुत सामग्री है वैसे ईसाई मूसाइयों के पास सामान नहीं है॥

ब्राह्म समाज के मानने वाले महाशयगण अपने शुद्धान्तःकरण में जो अच्छा विषय भासित होता है उसी को ईश्वरीय वेद मानते हैं इस पर हमारा प्रश्न यह है कि शुद्धान्तःकरण कि जिन के हृदय में किसी प्रकार का कल्मष न हो ऐसे मनुष्य बहुत हो सकते हैं वा अल्प ?। तो यही कहना पड़ेगा कि ऐसे जन बहुत कम होंगे। तब यह प्रश्न है कि ऋषि महर्षि तपस्वि लोग पहिले हो गये उनके हृदय शुद्ध थे वा नहीं उनके विचारों से अपना विचार प्रबल मानते हो वा सम वा न्यून यदि ऋषियों को शुद्धान्तःकरण न होना कहो तो आप के शुद्धान्तःकरण होने में क्या प्रमाण है ?। यदि शुद्धान्तःकरण आप वे दोनों हुए तो उन के और आप के बतलाये वेद में क्या भेद है ?। और अन्य मत के मनुष्यों में कोई शुद्धान्तःकरण नहीं ब्राह्म लोग ही हैं इस में क्या प्रमाण है ?। यदि अन्य भी हैं तो वैष्णवाचार्य्यादि के अनुभव से लिखे गये पुस्तक वेद क्यों नहीं ?। यदि आप को और ऋषियों को ईश्वर ने एक सा उपदेश किया तो वार२ पिष्टपेषण हुआ इस लिये यदि धर्म सम्बन्धी नियत उपदेश

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का पुस्तक बना देवै तो निर्बुद्धि के समान बार २ वही काम न करना पड़े ! और ऋषियों को तथा आप लोगों को पृथक् २ उपदेश किया तो क्या जो विषय ऋषियों को उपदेश किया था उस से भिन्न आप को उपदेश किया वा वही धर्मविषय कहा यदि ऋषियों से भिन्न उपदेश किया तो पहिले उपदेश से आप वञ्चित रहे। और अब के उपदेश से ऋषि लोग रहित हुए। यदि समयोपयोगी मानो तो समय के साथ धर्म का परिवर्त्तन नहीं होता किन्तु लोक व्यवहार बदल जाता है यदि ऋषियों और आप को एक ही उपदेश रहा तो ईश्वर की भूल है पूर्ववत्। कोई धर्मसम्बन्धी विषय जो ब्रह्मसमाजी के हृदय में भासित हो हमलोग प्रतिज्ञा करते हैं कि हम वेद से उस का मूल निकाल देवेंगे परन्तु वेद को मान लेने की प्रतिज्ञा ब्राह्म लोग भी करें और अपने बनावटी वेद को मानना छोड़ें॥ इति

(प्रश्न)–६ ईश्वर को दयालु, और न्यायकारी, कहते हैं सो यह दोनो परस्पर विरुद्ध है, क्योंकि ? दंड से छुड़ावे तो दयालु होता है, परन्तु न्यायकारी होता नहीं, ऐसी स्वामी ने आशङ्का करके इन दोनों का सम्मेलन करने के लिये लिखा है कि जो कोई पाप करता है, उस को दंड करना यही दया है तात्पर्य्य एक वार दंड भया, तो फिर दुष्कर्म करने को मनुष्य डरता है, यही उस पर दया है इस पर मेरी आशङ्का

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि पूर्वजन्म में पाप किया और प्रस्तुत जन्म में उस मनुष्य को ईश्वर दंड करे, तो उस को पूर्वजन्म की स्मृति भगवान् दे, तो उस के ऊपर भगवत् ने दंड कर के दया प्रकट किई ऐसा होगा, परन्तु उस को पूर्वजन्म का ज्ञान न होने से वह दण्ड दया हो सकता नहीं क्योंकि अपराध करने वाला एक और दण्ड पाया सो ए कैसा होता है इस लिये भगवान् पूर्ण अन्यायकारी है ऐसा दीख पड़ता है भगवान् क्षमा करने वाला नहीं होता तो उस की स्तुति प्रार्थना करने में क्या फायदा है ? ॥

उत्तर—दया शब्द का अभिप्राय यह है कि चित्त में दूसरों का शुभ चिन्तक रहना दूसरों के दुःख मेंटने के उपाय सोचना और करना कभी किसी को दुःख देने की इच्छा न करना अन्य के दुःख में सहायक होना इत्यादि प्रकार के आन्तर्य्य विचार का नाम दया है। और जो जैसा कर्म करे उ० को वैसा ही फल देना यह न्याय कहाता है इस से न्याय और दया में परस्पर विरोध नहीं कहा जा सकता क्योंकि इन का विषय अलग २ है ॥

अब जन्मान्तर में जो फलभोगने को मिलते हैं उन पूर्व जन्म के किये कर्मों का स्मरण नहीं रहता इस से दया न रही यह कहना ठीक नहीं क्योंकि पूर्व जन्मकृत कर्मों का स्मरण नहीं रहता इस में तो कुछ आश्चर्य्य नहीं क्योंकि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर और भौतिक इन्द्रिय भी बदल जाते हैं। इस एक ही जन्म में उसी शरीर और इन्द्रियों से किये कर्मों का स्मरण इसी शरीर में नहीं रहता इस का क्या कारण है ?। तो यही कहना पड़ता है कि अन्तःकरण की शुद्धिरूप ज्ञान का न्यून होना इन्द्रियों की चञ्चलता के साथ चित्त का स्थिर न रहना यही स्मरण शक्ति का प्रतिबन्धक विशेष कर है। सो इस प्रतिबन्ध को जब योगाभ्यास से निर्बल करते हैं तब पूर्वजन्म की जाति और कर्मों का ज्ञान हो ही जाता है॥

संस्कारसाक्षात्करणात्पूर्वजातिज्ञानम्।

संस्कारों के साक्षात् करने से पूर्वजन्मसंबन्धी जाति और कर्मों का ज्ञान हो जाता है इस में ईश्वर का कोई दोष नहीं है क्योंकि ईश्वर ने उपदेश कर दिया है कि ऐसा करने से ऐसा होता है जो जैसा करेगा वैसा फल पावेगा। दण्ड देने को हम लोग दया नहीं कहते किन्तु यथायोग्य कर्मफल भुगाने को न्याय कहते हैं परन्तु वह न्यायदया का विरोधी नहीं किन्तु उस न्याय के साथ भी यही दया है कि वह दण्ड दाता यही मानता हो कि इस को दण्ड दिया जायगा तो दण्ड भय से फिर वैसा न करे गा। यही अभिप्राय स्वामी जी महराज का है। जैसे पिता वा गुरु अपने पुत्र वा शिष्यों को अन्तःकरण से सुखी रखना चाहता है। पर उन

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के सुखी रहने में खोटे चालचलनरूप जो बाधा देखता है उस के छुड़ाने के लिये ताड़ना करता है यहां न्याय और दया दोनों प्रकट हैं वैसे ही ईश्वर सब का भला चाहता है और बुराई छुड़ाने के लिये यथायोग्य ताड़ना भी देता है इस कारण ईश्वर का कोई दोष नहीं है। और पूर्वजन्मकृत वा इस जन्म के किये कर्मों का स्मरण न रहने से किसी को यह विश्वास नहीं हो सकता कि हम को विना कर्म किये यह दुःखभोगने को मिल गया। यदि कदाचित् कोई कहे कि अज्ञानियों को ऐसा विश्वास रहता है तो यह ठीक है क्योंकि उन का अज्ञानही ऐसे विश्वास का कारण है। इस से कोई दोष नहीं आता क्योंकि अज्ञानियों को ऐसे बहुत अज्ञान होते हैं तो क्या ज्ञानी लोगों को भी ऐसा होना चाहिये?। ज्ञानी लोग न्यायदृष्टि से (विद्यारूप नेत्र से) देख लेते हैं कि विना कारण के कोई कार्य जगत् में होता नहीं अर्थात् जैसे धातुओं के वैषम्यरूप कुपथ्य के विना कोई रोग नहीं होता कुपथ्य भी एक बुरा काम है उस का फल भी दुःखरूप रोग है। वैसे जो २ शुभाशुभ फल भोग दीख पड़ते हैं उन का कारण अवश्य है। जो कोई कहे कि कारण के विना है उस को उचित है कि अपने पक्ष की सिद्धि के लिये कारण के विना हुये किसी कार्य का दृष्टान्त जगत् में देवे। जब दृष्टान्त न मिले गा तो वह पक्ष अवश्य त्याज्य है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इत्यादि प्रकार से विद्वानों को निश्चय हो सकता है कि हम जो फल भोग रहे वा अन्य प्राणी जो २ फल भोगते हैं वह अपने २ पूर्वकृत का है। यदि पूर्वकृत कर्मों का ज्ञान ईश्वर की कृपा से सब प्राणियों को होता तो और भी महाक्लेश रहता। क्योंकि इस जन्म में जब कोई अति बुरा कर्म बन पड़ता है और उस का जब २ स्मरण आता है तब २ महाभय उत्पन्न होता है कि जाने इस का क्या फल होगा। यदि ऐसे जन्मजन्मान्तरों के किये कर्मों का स्मरण रहे तो सब प्राणी इसी शोच विचार में पड़ २ मर जावें किसी को कुछ भी उत्साह न रहे इस लिये ईश्वर ने अच्छी दया करी कि हमलोगों को पहिले जन्मों के कर्मों का स्मरण नहीं रक्खा। और यदि पूर्वजन्म के कर्मों का ज्ञान सब प्राणियों को एकसा रहे तो विद्वान् और अविद्वान् का भेद न रहना चाहिये क्योंकि पूर्वजन्मकृत का ज्ञान है तो इस जन्म के कर्मों का स्मरण अवश्य ही रहे गा फिर अज्ञानी कौन कहावें गे! जब अज्ञानी कोई न हो तो ज्ञानी भी कोई न रहे गा। क्यों कि ये दोनों सापेक्ष हैं॥

परमेश्वर क्षमा करने वाला नहीं अर्थात् विना भुगायें नहीं छोड़ता। अर्थात् कर्मों के यथायोग्य फल देता है इसी लोभ से स्तुति प्रार्थना करनी चाहिये क्योंकि कर्म तीन प्रकार के हैं मानस, वाचिक, कायिक, स्तुति प्रार्थना भी मानस

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा वाचिककर्म है इस का भी यथासम्भव फल अवश्य देगा क्योंकि कर्मों का यथायोग्य फल देता है। पर जिस पदार्थ की प्रार्थना करे उस को चित्त से चाहता भी हो और चाहनानुकूल उस के मिलने का अन्यउपाय भी करता हो। यदि कहो कि उपाय करने से शारीरक कर्म का फल होगा तो प्रार्थना करना व्यर्थ रहा तो यह विचारना चाहिये कि शारीरिक कर्म का फल हो और मानस, वाचिक, का न हो इस में क्या प्रमाण है? यदि अलग २ फल चाहो कि उपाय और प्रार्थना का पृथक् २ फल हो तो यह ठीक नहीं क्यों कि जैसे लोक में अनेक क्रियाओं का एकफल होता है कि एक घर बनाने लगो तो अनेक क्रिया करने पड़ती हैं पर फल वही एक मकान निर्माणरूप होता है। यदि कहो कि उपाय से ही वह फल हो जायगा प्रार्थना निष्प्रयोजन है? तो उत्तर यह है कि क्या प्रार्थना उपाय नहीं है लोक में क्या बहुतेरे काम मांगकर नहीं सिद्ध होते हैं? और एक प्रार्थना का बड़ा फल यह है कि अभिमान अहङ्कार को न्यून कर हृदय में कोमलता उत्पन्न करना। लोक में जब कोई पदार्थ किसी से मांगने की इच्छामात्र करता है उसी समय अभिमान छूट जाता है तो ईश्वर के सामने अवश्य अभिमान छोड़ने का यत्न करना चाहिये। अहङ्कारी पुरुष में श्रद्धा भी नहीं रहती और प्रार्थना के विना अहङ्कार का टूटना

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत ही दुस्तर है और प्रार्थना से जब श्रद्धा उत्पन्न होगी तभी सत्यधर्म और ईश्वर को प्राप्त हो सकता है अन्यथा नहीं इसी लिये यजुर्वेद में कहा है कि ॥

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाऽऽप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ॥

इत्यादि प्रकार प्रार्थना के अनेक प्रयोजन हैं इस लिये ईश्वर की स्तुति प्रार्थना सब को अवश्य करनी चाहिये ॥

(प्रश्न)—७ उपासना से जीव परब्रह्म से मेल न हो कर और साक्षात्कार भी होता है ऐसे स्वामी लिखते हैं इस पर मेरी शङ्का है कि मेल कहैं तो जीव और ईश्वर यह दोनों पानी में पानी मिलता है उस प्रकार से मिल जाना साक्षात्कार कहैं तो जीव और ईश्वर फिर जुदा न पड़े ऐसा एक हो जाना ऐसी मोक्ष प्राप्ति भई पीछे जीव ईश्वर से जुदा हो के फिर जन्म लेता है ऐसा एक जगह पर स्वामी लिखते हैं यह कैसी बात है ? ॥

उत्तर—७ उपासना विषय में जो शङ्का आप ने की है वह यथार्थ नहीं क्योंकि मुक्ति अवस्था में जीव ईश्वर का मेल जैसे पानी में पानी मिल जाता है वैसे नहीं बनता क्योंकि जिन पदार्थों में संयोगरूप मेल और वियोगरूप पृथक्भाव होता है वे सब पदार्थ परिच्छिन्न भौतिक माने जाते हैं इसी से उनकी लम्बाई चौड़ाई आदि भी माननी पड़ती है ईश्वर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई भौतिक पदार्थ नहीं है किन्तु सर्वव्यापक आकाश में तुल्यविभु है तो यह कहना नहीं बन सकता कि अमुक वस्तु आकाश में मिल गया वा उस से अलग होगया इसी प्रकार ईश्वर के साथ किसी पदार्थ का मिल जाना वा पृथक् हो जाना नहीं बन सकता। साक्षात्कार का तात्पर्य यह है कि उस पदार्थ के वास्तविक स्वरूप को पहचान लेना इसी को ज्ञान भी कहते हैं इस का यह भी अभिप्राय कदापि नहीं हो सकता कि जिस को साक्षात् कर लेवें उस से पृथक् कभी न हो सकें। क्योंकि लोक में भी हम लोग अनेक विषयों वा सुखों का प्रतिदिन साक्षात् अनुभव करते हैं तो क्या उन से मिल जाते हैं ? वा फिर कभी अलग नहीं होते ? किन्तु जिन को साक्षात् करते हैं प्रतिदिन अलग होना प्रत्यक्ष सिद्ध है तो ईश्वर को साक्षात् जान के फिर जन्म लेना क्या असम्भव है ?। इस से यह सिद्ध हुआ कि उपासना कर्त्ता जीव मुक्ति अवस्था में ईश्वर से मिलता नहीं किन्तु पृथक् बना रहता है और साक्षात् करके भी पीछे जन्म लेता है और समाधिद्वारा जीवन में भी जीव ईश्वर को साक्षात् करता है तब क्या एक हो जाता है। जब शरीर धारण अवस्था में भी साक्षात् करता है तो वहां पृथक् है फिर मुक्ति अवस्था में साक्षात् करने में क्यों कर मिल जावे गा। इस लिये जीव ईश्वर से सदा मिला और सदा पृथक् है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(प्रश्न)—८ अपना गुण कर्म को शुद्ध कर के ईश्वरस्तुति करे तो प्रयोजन है ऐसी शुद्धि नहीं कर के स्तोत्र करे तो प्रयोजन नहीं ऐसा स्वामी लिखते हैं इस पर मेरा प्रश्न है कि, अपना गुण कर्मों की शुद्धि करने को, किसी मनुष्य को भी साध्य नहीं होगा, तो प्रार्थना करने की क्या जरूर है ? ॥

उत्तर ८—यद्यपि इस प्रश्न का उत्तर विशेष कर आ चुका है तथापि पुनः दिया जाता है। अपने गुण कर्म को सुधारना और ईश्वर की स्तुति प्रार्थना करना दोनों ही मनुष्य को करना चाहिये क्योंकि यदि कदाचित् अपने गुण कर्म न सुधारे अर्थात् दुराचरण करता रहे और ईश्वर की प्रार्थनामात्र से अच्छे फलों को प्राप्त हो जावे तो जो कोई अपने आचरण सुधार के ईश्वर की स्तुति करे उस को भी वही फल मिले तो शुभाचरणकर्त्ता का परिश्रम व्यर्थ गया। प्रथम तो यही सिद्ध हो सकना कठिन होगा कि दुराचरण छूटे विना कोई शुभ फल को प्राप्त हो सके ?। यदि कहो कि शुभाचरण नहीं कर सकता और ईश्वर की भक्ति करता है तो उस को क्या शुभ फल न प्राप्त होगा ?। तो उत्तर यह है कि अधर्मी मनुष्य ईश्वरभक्त कभी नहीं हो सकता। भक्ति एक चित्त का धर्म है चित्त की शुद्धि होना ही धर्मात्मा का लक्षण और उस की मलीनता अधर्मी का लक्षण है और चित्त की शुद्धि और मलीनता संस्कारों के आधीन है जैसे

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कार होते हैं वैसा ही चित्त रहता है और संस्कार पदार्थों के सम्बन्ध से होते हैं इसी को सांसर्गिक गुण दोष कहते हैं अर्थात् इन्द्रियों द्वारा जैसे विषय के साथ चित्त का संबन्ध होता है वैसे ही संस्कार होते हैं। यह बात लोक में प्रसिद्ध है कि जो अच्छे महात्मा पुरुषों का थोड़ा भी संग करे उस का चित्त और संस्कार शुद्ध होते हैं तो अनन्त तेजोमय ज्ञानस्वरूप सर्वनियन्ता जगदीश्वर की ओर जिस का चित्त झुकेगा फिर भी क्या उस में अशुद्धि रह सकती है ?। सभी पदार्थों में संग से गुण दोष लगते हैं यह सर्वतन्त्रसिद्धान्त की वार्त्ता है जैसे कवि ने कहा है:—

संतप्तायसि संस्थितस्य पयसो नामापि न ज्ञायते,।
मुक्ताकारतया तदेव नलिनीपत्रस्थितं राजते॥
स्वात्यां सागरशुक्तिमध्यपतितं तन्मौक्तिकं जायते,।
प्रायेणाधममध्यमोत्तमगुणः संसर्गतो जायते॥
भर्तृहरिः।

अच्छे प्रकार तपे हुए लोहे पर गिरे जल का नाम निशान भी नहीं रहता, वही जल कमल के पत्ते में पड़ने से मोती के तुल्य शोभित होता है। तथा वही जब स्वाति नक्षत्र * में

* स्वाति नक्षत्र ज्योतिःशास्त्र के अनुसार वर्षा ऋतु की

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्षा द्वारा समुद्र की सीपी में पड़ने से सच्चा मोती बन जाता है इस प्रकार उत्तम, मध्यम, और अधम गुण सब पदार्थों में प्रायः संग से ही होते हैं। इसी प्रकार जब ईश्वर नित्य शुद्ध-बुद्धमुक्तस्वभाव है तो उस के संग करने वाले में वैसे गुण आना न्याय से सिद्ध है। यदि कोई कहे कि जिन पदार्थों को चाहता है उन की प्राप्तिके लिये ईश्वर की स्तुति प्रार्थना ही किया करे अन्य उपाय न करे तो यह सम्भव नहीं कि जिस पदार्थ को मनुष्य चित्त से चाहे उस के लिये उपाय न करे। चित्त से चाहने से तात्पर्य्य यह है कि जिस विषय के उपार्जन में मनुष्य लगा होता है उस में अधिक प्रीति होने से उस को दिन रात नहीं भूलता। जिस विषय का दिन रात विचार रहेगा उसी के प्राप्त होने के लिये स्वयमेव वैसे उपाय करेगा क्योंकि बाह्य कर्म चित्त के विचारानुसार होते हैं सो इसी से सिद्ध है कि जब मनुष्य का चित्त किसी अन्य विषय में लगा होता है तब नेत्रादि इन्द्रियों के होते समय जागने में भी कुछ नहीं देखता सुनता और जब कुछ देखता

समाप्ति में आता है उस समय वर्षा जल के अत्यन्त निर्मल हो जाने से सीपी और सामयिक वर्षा जल के संयोग से मोती का उत्पन्न होना सम्भव है यह समय और पदार्थों के संयोग का प्रभाव है अर्थात् पदार्थ विद्या है॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनता है तब वैसा विचार भीतर से होता है वैसा ही देखता सुनता है। (यादृशी भावना यस्य बुद्धिर्भवति तादृशी। तथा अन्यत्र उपनिषद् में भी कहा है कि:—

यन्मनसा मनुते तद्वाचा वदति यद्वाचा वदति तत्कर्मणा करोति यत्कर्मणा करोति तदभिसंपद्यते॥

जो मन से विचारता वही वाणी से कहता जो वाणी से कहता वैसा कर्म करता और जैसा कर्म करता है वैसा ही मनुष्य को फल होता है इस से यह सिद्ध हुआ कि जिस पदार्थ को मन से चाहेगा उसी को स्तुति प्रार्थना द्वारा कहेगा और उस के लिये शरीर से भी अवश्य उपाय करेगा और गुणकर्म का शुद्ध होना ही उस काम का सफल होना है क्योंकि सब सुखों का मूल चित्त की शुद्धि और प्रसन्नता है और सुख का प्राप्त होना ही सब शुभ कर्मों का मुख्य फल है इस से यह सिद्ध हुआ कि जो जिस पदार्थ के लिये स्तुति प्रार्थना करेगा उसके लिये उपाय भी अवश्य करेगा यदि चित्त से न चाहे और ऊपर से नाममात्र स्तुति प्रार्थना करेगा तो फल प्राप्त होना दुस्तर है। इस लिये गुण कर्मों का सुधार और स्तुति प्रार्थना दोनों ही करने चाहिये॥

(प्रश्न)—९ सगुण निर्गुण प्रार्थना का विवरण करने में स्वामी लिखते हैं कि, हे भगवान् हम को मृत्युरूपी रोग से अलग कर के, मोक्षरूपी अमृत को दिया करो इस पर मेरा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहना है कि, मृत्यु से छुट जाना यदि मोक्ष शब्द का अर्थ है, ऐसी मोक्ष प्राप्त हुई पीछे उस का परिमित काल तक आनन्द पा के फिर जन्म ले के मृत्यु प्राप्त उस को होती है, यह बात क्या सम्भवित है ? ॥

उत्तर—९—स्वामी जी महाराज ने महाकल्प के पश्चात् मुक्ति से पुनरागमन माना अन्य लोग बहुधा पुनरावृत्ति नहीं मानते हैं जैसे व्यास जी का सूत्र है:—

अनावृत्तिः शब्दादनावृत्तिः शब्दात्। न च पुनरावर्त्तते न च पुनरावर्त्तते।

यह छान्दोग्य का वचन मिलता है इसी प्रकार अनेक वचन हैं मुक्ति से पुनरावृत्ति न मानने वालों का तो कहना आप के ही सदृश है जब बन्धनरूप जन्म मरण से छूटनारूप मुक्ति हो जावे गी तब उस के संसार में फिर आने के लिये क्या हेतु है ? । इत्यादि । इस विषय में स्वामी जी महाराज का पक्ष यह है कि कोई पदार्थ अनादि सान्त नहीं हो सकता पुनरावृत्ति न मानने वाले जन्म मरण को अनादि सान्त मानते हैं जैसे कि इस जीव का जन्म मरण अनादि काल से चला आता है पर मुक्ति होने पश्चात् न रहे गा । इस में स्वामी जी का पक्ष है कि जब अनादि है तो सान्त नहीं हो सकता जो अनादि है उस को अनन्त मानना चाहिये

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि जो पदार्थ अन्त वाले हैं वे सब सादि अर्थात् कभी से आरम्भ हुए हैं इस लिये ऐसा कोई दृष्टान्त नहीं मिल सकता कि जो अनादि नित्य है वह अन्त वाला नाशवान् हो जावे। यदि जन्म मरण प्रबन्ध को सादि मानो तो पहिला जन्मकर्मों के न होने से किस कारण हुआ ? क्योंकि विना कारण के कोई कार्य होता नहीं। यदि कहो कि मुक्ति दशा में जीव ईश्वर में मिल जाता है तो उसी से निकलना भी स्वयमेव सिद्ध होगया अर्थात् जो जिस में मिलेगा वह उस का सजातीय होगा और जो पदार्थ जिस में मिला तो उस में उस से पृथक् होने की शक्ति अवश्य है क्योंकि उस से पृथक् नहीं हो तो मिलना कैसे कह सकें? जो पृथक् २ पदार्थ हैं उन्हीं का मिलना कह सकते हैं और उन का जल के तुल्य सजातीय सम्बन्ध भी मानना पड़ेगा कि जैसे दो स्थलों का जल इकट्ठा हो गया यही कहना बन सकता है और यह नहीं बन सकता कि जल और लकड़ी एक होगई। इस प्रकार यदि जीव ईश्वर का चेतन सजातीय सम्बन्ध मानें तो एक अंशांशिभाव का बड़ा झगड़ा पड़ता है जब ईश्वर को अखण्डैकरस सर्वगत मानते हैं तो उस में मिल जाना वा पृथक् हो जाना कैसा कह सकते हैं?। क्या आकाश जो विभु पदार्थ है वह भी किसी से मिल सकता वा पृथक् हो सकता है ?। जब मिलना वा पृथक् होना जीव का ईश्वर के साथ नहीं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन सकता तो जीव एक स्वतन्त्र पदार्थ है जो अपने कर्मों के अनुसार संसार में भ्रमता है। और यह भी मानना पड़ता है कि जीव कभी नया नहीं बनता किन्तु अनादि है सो यदि मुक्ति से पुनरावृत्ति न हो तो कल्प कल्पान्त सृष्टि में से बीच २ मुक्ति होती जावे गी और नवीन उत्पत्ति होगी नहीं तो कभी न कभी सब जीवों की मुक्ति हो जाना सम्भव है फिर जीवों के बिना संसार की उत्पत्ति भी न हो सकेगी। वेदान्तिलोग कार्यकारणरूप जगत् को माया कहते हैं उस का स्वरूप ऐसा वर्णन करते हैं कि:-

नासद्रूपा न सद्रूपा माया नैवोभयात्मिका।
सदसद्भ्यामनिर्वाच्या मिथ्याभूता सनातनी॥

माया को न तो यह कह सकें कि यह कोई वस्तु है न वस्तु का निषेध कर सकें तथा न सत् असत् दोनों रूप कह सकें किन्तु सत् असत् से विलक्षण मिथ्या स्वरूप और सनातन है। इस में परस्पर बहुत विरोध आता है। संसार में सत् असत् से भिन्न तृतीय पदार्थ कोई है ही नहीं तो माया क्या वस्तु है ?। यदि मिथ्या कहैं तो सनातन कहना नहीं बन सकता क्योंकि जो वस्तुतः मिथ्या है वह सनातन क्या होगा ?। पहिले तो असत् का भी निषेध किया पर मिथ्या कहने से भी असत् आगया तो असत् का पदार्थ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निषेध करना व्यर्थ हुआ यदि सनातन कहा तो सत् हो गई इत्यादि परस्पर विरोध है। तात्पर्य्य यह है कि संसाररूप माया को मिथ्या सनातन मानते हैं सो सब जीवों के मुक्ति हो जाने से सनातनत्व न रहे गा। और जीव की मुक्ति से पुनरावृत्ति मानने में उक्त दोष नहीं आता इस लिये स्वामी जी महाराज ने पुनरावृत्ति मानी है। जो पदार्थ पहिले जिस दशा में रहा है उस को वही दशा फिर होना न्याय से सिद्ध है क्योंकि जब मुक्ति होने से पहिले बद्ध रहा तो बद्ध दशा में मुक्ति का अभाव मानना अवश्य है यदि बद्ध दशा में मुक्ति का अभाव न मानो गी तो बद्ध दशा में भी मुक्ति होने से बद्ध दशा के अभाव से मुक्त दशा भी न रहे गी। क्योंकि दोनों सापेक्ष सिद्ध हैं। जब बद्ध दशा में मुक्ति नहीं है तभी मुक्ति होना कह सकते हैं यदि पहिले भी है तो फिर होना क्या ?। इस से बद्धदशा में जब मुक्ति का अभाव हुआ तो मुक्ति नित्य न रही। तो उस की साथी बद्ध दशा भी नित्य नहीं हो सकती तो बद्ध से मुक्त और मुक्त से बद्ध, सुख के पश्चात् दुःख, दुःख के पश्चात् सुख होता ही रहता है जो पदार्थ पहिले जिस दशा में रहे गा वह अवस्थान्तर में जा कर भी फिर उसी अवस्था में आ सकता है यह न्याय से सिद्ध है इस न्यायानुसार जन्ममरण से छूट के फिर जन्म मरण में आना असम्भव नहीं है। क्योंकि जो

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पदार्थ एक रस है उसी की अवस्था एक रस रहती है अन्य को नहीं जब मनुष्य की बद्ध दशा बदल के मुक्त दशा हुई तो अवस्थान्तर हो गया फिर एकरस न रहा इस पर नवीन वेदान्ति लोग कहते हैं कि:—

न निरोधो न चोत्पत्ति र्न बद्धो न च साधकः।
न मुमुक्षु र्नवै मुमुक्त इत्येषा परमार्थता ॥

उक्त दोष की निवृत्ति के लिये कि यदि बद्ध मानेंगे तो बन्ध से मुक्त हो कर फिर बद्ध होगा। इस लिये बद्ध, मुक्त, आदि भी सब मिथ्या है। जो यदि सब मिथ्या कहने के साथ सब कर के "बद्ध मुक्त मिथ्या कहना„ रूप वाक्य भी मिथ्या हो जावे तो बन्ध मोक्ष दोनों सत्य हैं। यदि वाक्य सत्य है तो सब मिथ्या न हुआ॥

यह विषय अनेक शाखाओं वाला है यदि इस पर व्याख्या बढ़ाई जावे तो बहुत कुछ बढ़ सकती है पर अब विराम करता हूं॥

(प्रश्न)—१०-उपासना तथा समाधी से अपने मैल को निवारण कर के, आत्मा में स्थिर हो के, परमात्मा के ऊपर चित्त को धरते हैं, उन को परमात्मा के सम्बन्ध से होता सब सुख से कहना नहीं हो सकता यह सुख अपने अन्तः-करण से जानना चाहिये ऐसा स्वामी ने लिखा है इस पर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी आकांक्षा है कि वह सुख परम सुख हो तो दयानन्द-स्वामी वह समाधी में बहुत काल रह के परमानन्दानुभव करते रहते परन्तु वे ऐसा नहीं करते थे और बहुत काल लौकिकानन्द में ही रहते थे आप ऐसा रह के समाधी में प्राप्त होने वाला सुख अनिर्वाच्य है ऐसा लिखा है सो ग्रन्थ प्रतारण के वास्ते है मेरे ख्याल में आता है ॥

(उत्तर)—१०—इस में कुछ भी सन्देह नहीं कि समाधि और उपासना से जो सुख होता है उस को वही उपासक यथावत् जान सकता है और उस सुख के तुल्य संसार में कोई सुख नहीं जिस का दृष्टान्त (मिसाल) कोई दे सके उस के समझने का एक दृष्टान्त है:—अर्थात् सब प्राणिमात्र को निद्रा (सुषुप्ति) का कुछ २ अनुभव रहता ही है। यद्यपि निद्रा का कारण तमोगुण है तद्यथा ॥

निद्राहेतुस्तमः प्रोक्तं जागरणे सत्त्वमुच्यते इतिसुश्रुते।

निद्रा का हेतु तमो गुण और जागने का कारण सत्वगुण है जिस निद्रा में तमोगुणरूप राजा का मन्त्री सत्वगुण रहता है तब वह मनुष्य निद्रा से उठ कर कहता है कि—

सुखमहमस्वाप्सं प्रसन्नं मे मनः प्रज्ञां मे विशारदीकरोति। इति योगशास्त्रे व्यासभाष्यम् ॥

मैं आज अत्यन्त सुखपूर्वक सोया मेरा मन अतीव प्रसन्न

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है भी बुद्धि को ऐसा सोना निर्मल करता है परन्तु वह होने वाला यह नहीं जानता कि वह सुख निन्द्रा में किस कारण से किस प्रकार और किस पदार्थ के मिलने से हुआ था ? किन्तु विचारशील पुरुष जानते हैं कि वही आत्मसम्बन्धी सुख है कि जो समाधि और उपासना द्वारा मनुष्य के अनुभव में आता है सो यह केवल तमोगुण राजा का मन्त्री सत्वगुण होने से होता है और जहां (समाधि में) सत्वगुण स्वयं स्वतन्त्र राजा रहता है वहां का सुख जितना होना चाहिये उस का अनुमान निद्रा सुख से ही कर लीजिये। समाधि सुख की उत्तमता युक्ति से ही सिद्ध हो सो नहीं किन्तु शास्त्रकारों ने भी इस की बहुत ही उत्तमता कही है तद्यथाः—

समाधिनिर्धूतमलस्य चेतसो निवेशितस्यात्मनि यत्सुखं भवेत्। न शक्यते वर्णयितुं तदा गिरा स्वयं तदन्तःकरणेन गृह्यते ॥

समाधिरूप नदी में गोता लगाने से जिस का मल धोया गया ऐसा चित्त जब आत्मा में लगाया जाता है तब जो सुख होता है उस का वर्णन वाणी से नहीं हो सकता किन्तु उस का स्वयमेव अन्तःकरण से ग्रहण होता है और भगवद्गीता में श्रीकृष्णचन्द्र जी ने भी कहा है:—

गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्।
वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः॥

समाधि अवस्था का जो अत्यन्त सुख है उस का इन्द्रियों से ग्रहण नहीं होता किन्तु उसी उपासक की (इन्द्रिय द्वारा पहुंचने वाली विषयों की चञ्चलता से रहित अर्थात् वायुरूप विषयों से उठने वाली वृत्तिरूप जल तरङ्गों से रहित) अवि-कारिणी सूक्ष्म बुद्धि से ही ग्राह्य है। उस समाधि अवस्था में न तो कुछ बाह्यविषय जानता और न विषयादि के साथ अपने स्वरूप को कदापि डिगाता है इत्यादि प्रमाण और युक्तियों से ठीक २ सिद्ध है कि समाधि और उपासना से होने वाला सुख सर्वोपरि है वह केवल अन्तःकरण से जाना जाता है। और उस के स्वाद को वे ही योगी जन जानते हैं कि जिन ने संसारी सुख छोड़ के उसी सुख में अपने कर्त्तव्य को सफल समझ लिया हो किन्तु अन्य नहीं जान सकते अब इस में केवल इतना विचार शेष रहा कि श्री स्वामीदया-नन्दसरस्वती जी भी इस समाधि सुख को पूर्वोक्त प्रकार से ही समझते थे फिर स्वयं उसी सुख में क्यों न रहे? संसारी कामों में अधिक क्यों न रहते थे?। इस का उत्तर यह है कि यदि एक विषय को कोई मनुष्य यथार्थ स्वरूप से समझता हो और समयानुसार उस उपकार की अपेक्षा संसार का

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्धार करना सर्वोपरि समझना हो क्योंकि उस समाधि से केवल अपना ही उपकार देखे और अपने एक के उपकार से सब का उपकार करना अत्यन्त उत्तम है ऐसा मान कर करता हो तो क्या वह समाधि सुख का दोष कोई कह सकता है ?। अथवा एक विषय को किसी ने यथावत् जान के भी किसी कारण न करपाया वा न किया तो वह विषय ही झूठा समझ लिया जावे यह कोई बुद्धिमान् मान लेगा ?। श्रीमान् स्वामी-शङ्कराचार्य्य जी ने भी स्वयं एकान्त में सेवने योग्य सर्वोत्तम समाधि सुख को छोड़ के जैनादि नास्तिकरूप पाखण्डहीत वैदिकधर्म को बचाया और वैदिक धर्म रूप सूर्य पर धूलि डालने वालों के दुष्ट कर्म को ध्वस्त कर कुम्हिलाये हुए वैदिकधर्मानुयायियों को प्रफुल्लित किया। ऐसे ही जो २ महात्मा ऋषि महर्षि होते आये उन्हों ने जब २ वैदिकधर्म की हानि देखी तब २ अपने सुख को छोड़ कर भी लोक का उद्धार किया जैसे श्रीकृष्णचन्द्र जी ने दुष्ट कंसादि अधर्मियों को मार कर धर्मात्मा और धर्म की रक्षा की क्योंकि सत्पुरुषों का जन्म ही धर्म की रक्षा और अधर्म की हानि करने के लिये होता है। तथा चाह भर्त्तृहरिः—

एते सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थं परित्यज्य ये,
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वार्थाविरोधेन ये ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेऽमी मानुषराक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये।
ये निघ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे॥

अर्थः—जो लोग अपने स्वार्थ को छोड़ के (स्वार्थ भले ही बिगड़े परन्तु परोपकार अवश्य करें ऐसी बुद्धि से) परोपकार करते हैं वे ही सत्पुरुष कहाते हैं और स्वार्थ को न छोड़ के जो परोपकार करते हैं वे सामान्य पुरुष हैं। और मनुष्यों में राक्षस वे हैं जो अपने प्रयोजन के लिये संसार की हानि करते हैं क्योंकि मनुष्यों में राक्षस सब से नीच हैं और जो अपना कुछ प्रयोजन वा स्वार्थ सिद्धि न होने पर भी दूसरों की हानि करते हैं उन का राक्षसों से भी नीचे क्या नाम रक्खा जावे ?। यह हम नहीं जानते। इस से यह सिद्ध हुआ कि सत्पुरुषों का सत्पुरुषपन यही है कि वे अपने स्वार्थ को छोड़ कर भी परार्थ करते हैं स्वार्थ परार्थ दोनों काम यथावत् चल भी नहीं सकते किन्तु एक ही काम ठीक २ होता है इसी लिये दोनों करने वाले सामान्य कहाते हैं। इसी विचारानुसार सत्पुरुषों के कर्त्तव्य को श्रीस्वामी दयानन्दसरस्वती जी ने भी पालन किया। और यह कथन ठीक २ विचार पूर्वक प्रतीत नहीं होता कि (वे अधिक कर लौकिकानन्द में ही रहते थे) स्वा० द० जी लौकिकानन्द में कुछ भी नहीं रहते थे। यह किसी को छिपा नहीं है

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि वे कैसे बाबालवड्ड पूर्णब्रह्मचर्य्य से युक्त रहे यदि लौकि-कानन्द में लिप्त होते तो अखण्डब्रह्मचर्य्य का निर्वाह करना अत्यन्त दुर्लभ था। जिन मतवादी लोगों की ढोंगलीला स्वामी जी ने खोलदी उन्हों ने सब प्रकार की बुराइयां कीं पर यह अब तक किसी ने प्रसिद्ध नहीं किया कि उन का ब्रह्मचर्य्य अमुक स्थल में खण्डित हुआ और यह भी नहीं कोई कह सकता कि उन्हों ने दृष्टोपकार करते समय ईश्वरोपासना सर्वथा छोड़ दी होवे किन्तु इस बात को सैकड़ों नहीं तो हजारों लोग जानते हैं कि वे यथावकाश नित्य नियम से ईश्वरोपासना भी करते थे। इस से उन को समाधि और उपासना से होने वाले सुख का अनुभव अवश्य था इसी लिये उन्हों ने सत्यार्थप्रकाश में समाधि सुख को अनिर्वाच्य लिखा है शिष्यों को ठगने के लिये नहीं लिखा है। शिष्यों को प्रतारण के लिये जो लोग कुछ विषय प्रकट करते हैं उन का कुछ स्वार्थ भी उस कर्त्तव्य से झलकता है परन्तु स्वामि दया० जी का स्वार्थ किसी आचरण से सिद्ध नहीं हो सकता॥

११—(प्र०) उपासना शब्द का अर्थ लिखने में ईश्वर के सन्निधौ में रहना, याने अष्टाङ्ग योग से परमात्मा को जीव समीपस्थ होता ऐसा स्वामी ने लिखा है इस पर मेरा प्रश्न है कि ऐसा लिखने से परमात्मा दूरस्थ हुये सरिखा और उपासना से जीव समीपस्थ हुये सरिखा प्राप्त होता है इस

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर से ईश्वर की अपूर्णता और परिच्छिन्नता दीख पड़ती है।

११ (७०) सत्यार्थप्रकाश में जो लिखा है कि ईश्वर के समीप रहना अर्थात् अष्टाङ्ग योग से परमात्मा के समीपस्थ जीव का होना यह उपासना शब्द का अर्थ है इस में महाराजा वेंकटगिरि जी का प्रश्न है कि जो ईश्वर को सर्वव्यापक मानो तो दूर और समीप कहना न बने गा ईश्वर सब पदार्थों के साथ सर्वदा रहेगा। दूर समीप मानने से ईश्वर एक देशी पाया जाता है। इस पर विचार यह है कि सत्यार्थप्रकाश में उक्त प्रकार का उपासनार्थ यथार्थ है उस में कुछ भी सन्देह नहीं किन्तु थोड़ा समझ का भेद है जैसे कोई मनुष्यों में किसी प्रकार का परस्पर वैर विरोध हो जाता है तब एक दूसरे से कहता है कि आज से हम तुम से दूर हुए अर्थात् अब से हमारा तुम्हारा कुछ सम्बन्ध नहीं है किन्तु उस का यह अभिप्राय नहीं होता कि वे दोनों मनुष्य अब किसी देश ग्राम वा सभा आदि में एकत्र न हों किन्तु यह तात्पर्य होता है कि वे दोनों परस्पर मिल के कुछ उपयोग नहीं ले सकते और जिन २ का परस्पर विशेष आन्तर्य मेल होता है तो वे परस्पर बिछुड़ते समय भी कहते हैं कि हम तुम सदा ही समीप हैं क्योंकि हम दोनों का अन्तःकरण मिला है। और ऐसे ही कार्य भी देखने में आते हैं कि जब किसी मित्र वा अतिनिकटसम्बन्धी भाई पर किसी प्रकार

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की आपत्ति आजाती है तब सुनती की समय द्वितीय मित्र देशान्तर से आ जाता है और उसी ग्राम के रहने वाले वहां तक नहीं पहुंच सकते इस से भी यह सिद्ध हुआ कि वही समीप है जो शीघ्र सहायता करे यह वार्त्ता लौकिक व्यवहार से ही सिद्ध हो सो नहीं किन्तु न्यायभाष्य (वात्स्यायन ऋषिकृत) में भी लिखा है तद्यथा:—

यस्य येनार्थसम्बन्धो दूरस्थस्यापि तस्य सः ।
अर्थतो ह्यसमर्थानामानन्तर्यमकारणम् ॥

जिस का जिस के साथ अर्थ सम्बन्ध (सुखहेतु) हो वह दूरस्थ भी उसी का है और जिन का कुछ सम्बन्ध नहीं उन के समीप होने से भी एक दूसरे का प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता । और वेद में भी यही लिखा है कि "तद्दूरे तद्वन्ति के" वह ईश्वर इन्द्रियारामों से अत्यन्त दूर है क्योंकि वे इन्द्रियों से भोग्य विषयों में ही सर्वदा लिप्त रहते हैं और इन्द्रिय तथा विषयों से ईश्वर बहुत दूर है तद्यथा:—

इन्द्रियेभ्यः पराह्यर्था अर्थेभ्यश्च परं मनः ।
मनसश्च पराबुद्धिर्बुद्धेरात्मा महान् परः ॥१॥
महतः परमव्यक्तमव्यक्तात्पुरुषः परः ।
पुरुषान्न परं किञ्चित्सा काष्ठा सा परागतिः ॥१॥
इति कठोपनिषद्

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्द्रिय, विषय, मन, बुद्धिमहत्तत्त्व, अव्यक्त प्रकृति और परपुरुष ये सब एक दूसरे से पर २ सूक्ष्म हैं परमेश्वर सब के अन्त में है उस से परे फिर कोई वस्तु नहीं अब देख लीजिये कि पूर्व पङ्क्ति में इन्द्रियों से ईश्वर कितनी दूर है अर्थात् इन्द्रिय ग्राह्य विषय से भी मनुष्य की दृष्टि में ईश्वर अत्यन्त दूर है कि जैसा ऊपर लिखा है और जो ईश्वर की भक्ति करता है वह इन्द्रियादि से लिप्त न हो के केवल अपने आत्मा को ईश्वर में लगाता है वह ईश्वर के निकट और ईश्वर सदा उसके निकट है इस प्रकार समीप और दूर मानने से ईश्वर में परिच्छिन्नत्व दोष नहीं आता अर्थात् ईश्वर विद्वानों के समीप और अविद्वानों से दूर है। इस प्रकार उपासना के समीपार्थ में कोई दोष नहीं आसकता॥

१२—(प्रश्न) सत्यार्थप्रकाश में स्वामी ऐसा प्रश्न करते हैं कि उपनिषदों में एक में आगे सत् रहता था एक में आगे असत् रहता था एक में आगे आत्मा रहता था एक में आगे ब्रह्म रहता था इसी लिये यह चारों भी अनादि हैं और तैत्तिरीय में परमात्मा अपनी इच्छा से बहुरूप भया उन को जगत् कहते हैं वह सब ब्रह्म है वह दूसरा पदार्थ नहीं है ऐसा लिख के उस का उत्तर लिखते हैं कि चैतन्यमात्र अखण्डैकरस ब्रह्मस्वरूप में नानारूप संबन्ध नहीं हुये तो न्यारे २ स्वरूप से परमेश्वर के आधार से है यह भाषण का पूर्वोत्तर विरोध का आप ही लोग ख्याल करो॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२ (३०) इस बारहवें प्रश्न का उत्तर कुछ भी देने योग्य नहीं क्योंकि सत्यार्थप्रकाश के अष्टम समुल्लास को निकाल कर देखा तो वहां सृष्टि विषय में कुछ भी परस्पर विरोध नहीं कि सृष्टि ईश्वर से कई प्रकार उत्पन्न हुई जो केवल प्रश्नकर्त्ता को उचित था कि आलस्य को छोड़ परिश्रम सहित उस को देखें वा किसी आप्त पण्डित से उस का अभिप्राय सुन लेवें तो ज्यों का त्यों वहां लिखा है। यह सब विद्वान् जानते ही हैं कि पूर्वपक्ष उत्तरपक्ष दोनों का परस्पर विरोध होता ही है यदि विरोध न हो तो पूर्वोत्तर दो पक्ष ही न बन सकें। इस लिये पूर्वपक्ष (प्रश्न) में कहे प्रलयावस्था के सत् असत् आदि को उत्तर पक्ष में व्यवस्था हो गई और "इस चेतनमात्र अखण्डैकरस ब्रह्मस्वरूप में नाना वस्तुओं का मेल नहीं अर्थात् परमेश्वर अनेक वस्तुओं से मिलकर नहीं बना है, यह अभिप्राय उस सत् असत् से हुई सृष्टि के उत्तर में नहीं किन्तु वेदान्ति लोग जो इस वचन (सर्वं खल्विदं ब्रह्म नेह नानास्ति किंचन) को पढ़ते हैं कि यह जगत् सब ब्रह्म रूप ही है और ब्रह्म से भिन्न कुछ नहीं है इस के उत्तर में स्पष्ट कर लिखा है और सत् असत् विषयक उत्तर उस से पहिले ही उसी पृ० २१० में दिया है इस लिये इस लेख में परस्पर कुछ भी विरोध नहीं है अच्छे प्रकार निष्पक्ष हो कर विचारना चाहिये ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(प्रश्न)-१२ सत्यार्थप्रकाश में स्वामी जी के प्रश्न—सृष्टि विषय में वेदादिशास्त्रों में परस्पर विरोध दोष पड़ता है, वह कैसा है ? तैत्तिरीय में आगे आत्मा से सृष्टि हुई सरीखी, छान्दोग्य में अग्न्यादि से, ऐतरेय में जलादि से, वेद में एक जगह में पुरुषादि से और एक जगे में हिरण्यगर्भादि से जगदुत्पत्ति हुई सरीखी मालुम पड़ती है, इस में कौन सा सच्चा ? ऐसा प्रश्न कर के उस का पण्डित जी उत्तर देते हैं कि, सभी सच्चे हैं, वह कैसे ? एक एक प्रलय समय में कौनसा कौनसा तत्वपर्यन्तु प्रलय होता है, पुनः सृष्टि होने में वे तत्वों से सुरु हो के जगत् सृष्टि होती है, इस लिये एकेक सृष्टि में एक एक तत्व आदि होता है, इस पर मैं पूछता हूं कि जो जो प्रलय में जो जो तत्व पर्यन्त प्रलय होता है सो पुनः सृष्टि में कौनसा कौनसा तत्व से सुरु होके सृष्टि होती है, सो दयानन्द स्वामी को कैसा मालुम पड़ा ? स्वामी का आयुर्बल क्या मारकण्डेय ऋषि का आयुर्बल प्रमाण था ?।

ऐसे यह सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ में बहुत हि आक्षेप लेने लायक लेख हैं, परन्तु थोड़े से लेके उन को मैंने अल्पज्ञान से दिग्दर्शन किया है ॥

१२—(उ०) इस को अच्छे प्रकार से विचार के देखते हैं तो सृष्टिविषय में कुछ भी विरोध नहीं आता। अनेक शास्त्रों में सृष्टि का क्रम अनेक प्रकार से लिखा है परन्तु कारण से

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्य्य की उत्पत्ति सब ने मानी है किन्तु कार्य्य से कारण होना ऐसा उलटा किसी ने नहीं लिखा। जो तत्त्व जिस का कारण है उस की उत्पत्ति उसी कारण से होती है अर्थात् ऐसा कभी न हुआ न होगा कि कभी अग्नि से वायु की उत्पत्ति होने लगे अथवा वायु का प्रलय हो जावे और अग्नि बना रहे यह भी नहीं सिद्ध हो सकता। और न ऐसा किसी शास्त्रकार ने लिखा है। अनेक प्रकार अनेक बार अनेक तत्त्वों से सृष्टि हुई इस को स्वामी जी ने कैसे माना तो इस का उत्तर यह है कि आयुर्बल का परिमाण तो उतना ही होगा कि जितना मनुष्य का होना सम्भव है और असम्भव आयु पहिले मार्कण्डेयादि ऋषि जनों की भी नहीं हुई किन्तु तपोबल के प्रभाव से साधारण मनुष्यों की अपेक्षा ऋषियों की आयु का यथा कर्म अधिक हो जाना सम्भव है। और यह आवश्यकता भी नहीं है कि जब इतनी अवस्था हो जो उत्पत्ति से किसी प्रलय तक शरीर बना रहे तभी महाप्रलय, प्रलय और अवान्तर (बीच २ के) अनेक प्रलयों की व्यवस्था जानी जावे ऐसा हो तब तो विद्या कोई पदार्थ ही न रहे किन्तु प्रत्यक्ष देख कर जो व्यवहार हो वही सत्य माना जावे। ऐसा न कभी हुआ न होगा किन्तु जो विषय विद्या से विद्वानों ने निश्चय किये हैं उन में किसी विद्वान् को कुछ भी सन्देह नहीं है। सृष्टि की उत्पत्ति और प्रलय के अनेक क्रम

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं अर्थात् महाप्रलय के बीच में जितने २ प्रलय वा अवान्तर प्रलय होते हैं उन सब का क्रम पृथक २ है परन्तु जैसा एक महाप्रलय के प्रलय अवान्तर प्रलय का क्रम होता है वैसा ही प्रत्येक महाप्रलय में उन २ आवान्तर प्रलयों का क्रम रहता है अवान्तर प्रलय का विषय कुछ सूर्यसिद्धान्त ज्योतिःशास्त्र में लिखा है तद्यथा:—

युगस्य दशमो भागश्चतुस्त्रिद्व्येकसङ्गुणः ।
क्रमात्कृतयुगादीनां षष्ठांशः सन्ध्ययोः स्वकः ॥

अर्थः—बारह हजार दिव्य वर्षों की एक चतुर्युगी होती है (जिस के मानुषी वर्ष ४३२०००० तितालीस लाख बीस हजार होते हैं) इस दिव्य वर्षों की चतुर्युगी को शास्त्रकार युग बोलते हैं इस बारह हजार दिव्य वर्ष रूप युग के दशमें भाग को चार तीन दो और एक गुणा करने से कृत युग आदि को क्रम से दिव्य वर्ष संख्या सिद्ध हो जाती है अर्थात् बारह हजार में सतयुगादि चारों युग की पृथक् २ संख्या निकल आती है जैसे बारह हजार का दशमा भाग बारह सौ वर्ष हुए इन को चौगुना करने से बारह चौक अड़तालीस ४८०० सौ वर्ष का सत्युग बारह तियां ३६०० छत्तीस सौ वर्ष का त्रेता, बारह दूनी २४०० चौबीस सौ वर्ष का द्वापर और बारह एक १२०० बारह सौ वर्ष का

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलियुग होता है इन चारों संख्याओं को मिलाने से फिर बारह हजार १२००० वर्ष पूरे हो जाते हैं। इस सतयुग आदि की उक्त दिव्य वर्ष संख्या का छठा भाग सन्ध्या सन्ध्यांश कहाता है जैसे सतयुग के ४८०० वर्ष में ८०० त्रेता में ६०० द्वापर में चार सौ ४०० और कलियुगोंमें दो सौ २०० दिव्य वर्ष सन्ध्या सन्ध्यांश होती हैं जैसे साठ घड़ी का मानुषी दिन रात होता है इस का छठा भाग दश घड़ी हुआ जिस में पांच घड़ी प्रातःकाल सन्ध्यांश और सायङ्काल ५घड़ी सन्ध्या कहाती है ऐसे ही सतयुग आदि प्रत्येक युग में उस २ दिव्य वा मानुष वर्ष संख्या का छठा भाग सन्ध्या सन्ध्यांश कहाता है इस सन्ध्याकाल में सृष्टि का स्वरूप कुछ २ विलक्षण हो जाता है। कलियुग की मानुष वर्ष संख्या ४३२००० चार लाख बत्तीस हजार वर्ष है इस का छठा भाग७२००० बहत्तर हजार वर्ष होता है। जिस में छत्तीस हजार वर्ष का सन्ध्यांश प्रातः और छत्तीस हजार वर्ष का सायङ्काल होता है जिस में अभी अनुमान ५००० पांच हजार वर्ष बीते हैं जब इस वर्त्तमान कलियुग को छत्तीस हजार वर्ष बीत जावेंगे तब वस्तुतः कलियुग का प्रारम्भ होगा। यह बात युक्ति से भी सिद्ध है कि जब एक राजा का राज्य बदलता वा सृष्टि में कोई बात बदलती है तो पहिले राजा का प्रभाव कुछ शेष रह जाता और आगामी का पूर्ण रूप

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो नहीं जमता जब तक दोनों का थोड़ा २ प्रभाव होता है पूर्णरूप किसी का नहीं जमता उसी को सन्ध्याकाल बोलते जैसे सूर्यास्त होते समय सूर्य का प्रकाश मन्द हो कर कुछ शेष रहता और रात्रि का प्रभाव भी पूर्ण नहीं पाता तब तक सन्ध्या काल कहाता है और रात्रि का पूर्ण प्रभाव संध्या काल में न होने का कारण भी सूर्य का प्रभावांश ही है। सो यह सन्ध्या सन्ध्यांश प्रत्येक युग में होता है। एक चतुर्युगी में मानुषी ४३२०००० तितालीसलाख बीस हजार वर्ष होते हैं और दिव्य वर्ष १२००० बारह हजार होते हैं इस चतुर्युगी को भी युग कहते हैं॥

युगानां सप्ततिः सैका मन्वन्तरमिहोच्यते।
कृताब्दसंख्या तस्यान्ते सन्धिः प्रोक्तो जलप्लवः॥

सूर्यसिद्धान्ते

इकहत्तर ७१ चतुर्युगी का एक मन्वन्तर होता है। ऐसे चौदह मन्वन्तर एक ब्राह्म कल्प में बीत जाते हैं। शास्त्रकारोंने तथा तदनुसार श्रीमान् स्वामी दयानन्दसरस्वतीजी ने भी१००० चतुर्युगी का एक ब्राह्म कल्प लिखा है परन्तु १४ चौदह मन्वन्तर की इकहत्तर २ चतुर्युगी जोड़ी जावें वा चौदह और इकहत्तर से गुणा किया जावे तो ९९४ चतुर्युगी होती हैं फिर हजार चतुर्युगी का दिन लिखने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से क्या प्रयोजन है? । (सत्यार्थप्रकाश में इस पर कई लोगों ने मुझ से शङ्का भी की है उस का भी यहीं उत्तर आ जावेगा) इस का उत्तर यह है कि ये छः चतुर्युगी सन्ध्या सन्ध्यांश में चली जाती हैं अर्थात् चौदह मन्वन्तरों की आरम्भ समाप्ति में छः चतुर्युगी बीत जाती हैं (क्रनाब्द०) एक मन्वन्तर की समाप्ति और दूसरे के आरम्भ में एक सद्युग की वर्ष संख्या १७२८००० सत्तरहलाख अट्ठाईस हजार वर्ष पर्य्यन्त सन्ध्या सन्ध्यांश होता है इतने (१७२८०००) समय पर्यन्त जलप्लव अर्थात् पृथिवी सर्वथा जलमय हो जाती है यह प्रलय जल से होता है इस को अवान्तर प्रलय कहते हैं। मन्वन्तर की समाप्ति में जब जल से अवान्तर प्रलय होने पर आता है तब वर्षों तक बराबर मूसलाधार वृष्टि होती है जिस में पर्वतादि को छोड़ सब जलमय हो जाते हैं जब द्वितीय मन्वन्तर का फिर आरम्भ होता है तब फिर जल से पृथिवी, पृथिवी से ओषधियां उन से अन्न और अन्न से वीर्य्य और वीर्य्य से शरीरों की उत्पत्ति होती है अर्थात् यह प्रत्येक मन्वन्तर के आदि अन्त का प्रलय जल से होता है इस में पृथिवी और पार्थिव शरीरों का प्रायः प्रलय होजाता है जल, अग्नि, वायु, और आकाश बने रहते हैं। इस १७२८००० सत्तरहलाख अट्ठाईस हजार वर्ष में आधा समय पहिले मन्वन्तर की समाप्ति में सन्ध्या और आधा समय आगामी मन्वन्तर की

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्ध्यांश (प्रातःकाल) समझा जाता है। इस प्रकार चौदह मन्वन्तरों में चौदह वार एक २ सतयुग का समय अवान्तर प्रलय (पृथिवी का जल पूर्ण होनारूप) होता है। इस से भी छः चतुर्युगी की संख्या पूरी नहीं होती जिससे ब्राह्मकल्प को १००० चतुर्युगी पूर्ण हो जावें। इस लिये:—

ससन्धयस्ते मनवः कल्पे ज्ञेयाश्चतुर्दश।
कृतप्रमाणः कल्पादौ सन्धिः पञ्चदशः स्मृतः॥१६॥

सूर्यसिद्धान्ते

अपनी २ सन्धि के सहित चौदह मन्वन्तर एक कल्प में होती हैं और एक सतयुगप्रमाण १७२८००० वर्ष ब्राह्मकल्प के आदि में पन्द्रहवां सन्ध्यांशकाल होता है अर्थात् सतयुग की १७२८००० सत्रहलाख अट्ठाईस हजार वर्ष संख्या को पन्द्रह गुणा करें तो २५९२००००दो क्रोड़ उनसठ लाख बीस हजार वर्ष संख्या होती है और एक चतुर्युगी की मानुष वर्ष संख्या ४३२०००० है इस को छः गुणा करें तो भी वही २५९२०००० संख्या पूरी हो जाती है इस प्रकार छः चतुर्युगी मन्वन्तरों के अवान्तर प्रलय (सन्ध्या सन्ध्यांश) में बीत जाती हैं इन के मिलाने से ब्राह्म कल्प की पूर्ण १००० चतुर्युगी पूरी हो जाती हैं॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इत्थं युगसहस्रेण भूतसंहारकारकः ।
कल्पो ब्राह्ममहः प्रोक्तं शर्वरी तस्य तावती ॥ २ ॥
सूर्यसिद्धान्ते

इस उक्त प्रकार से पृथिव्यादि भूतों का संहार करने वाला ब्राह्मकल्प एक हजार चतुर्युगी के प्रमाण से कहा गया है और इस ब्राह्म दिन की रात्रि भी १००० एक हजार चतुर्युगी की होती है ॥

परमायुः शतं तस्य तयाऽहोरात्रसंख्यया ।
आयुषोऽर्द्धमितं तस्य शेषकल्पोऽयमादिमः ॥ २१ ॥

इस पूर्वोक्त एक हजार चतुर्युगी वाले दिन और उतनी ही रात्रि के हिसाब से सौ वर्ष की ब्रह्मा की पूर्ण उत्तम अवस्था होती है इसी को महाकल्प और इस की पूर्ति को महाप्रलय बोलते हैं। इस (ब्रह्मा की आयुर्दाय) में से प्रारम्भ का आधा भाग ५० वर्ष तो व्यतीत हो गया अब उत्तरार्द्ध ५० वर्ष का है अर्थात् उत्तरार्द्ध के ५० वर्ष में यह पहिला दिन है।

कल्पादस्माच्च मनवः षड् व्यतीताः ससन्धयः ।
वैवस्वतस्य च मनोर्युगानां त्रिघनो गतः ॥ २२ ॥
सूर्यसिद्धान्ते ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस उत्तरार्द्ध के प्रथम ब्राह्म दिन में से अपनी २ सन्धियों (अर्थात् मन्वन्तरांतरूप अवान्तर प्रलय) के सहित छः मन्वन्तर व्यतीत हो गये अब इस सातवें वैवस्वत मन्वन्तर का भी तृतीयभाग अर्थात् २७ सत्ताईस चतुर्युगी बीत गई हैं।

अष्टाविंशाद् युगादस्माद्यातमेतत्कृतं युगम् ।
अतः कालं प्रसंख्याय संख्यामेकत्र पिण्डयेत्॥३॥
सूर्यसिद्धान्ते ।

अब इस अट्ठाईसवीं चतुर्युगी में से यह पूर्वोक्त सत्युग व्यतीत हो गया अर्थात् अब त्रेतायुग वर्तमान है (इस से यह सिद्ध है कि यह सूर्यसिद्धान्त पुस्तक इसी चतुर्युगी के त्रेतायुग में बना है) इस लिये पूर्वोक्त प्रकार से काल की संख्या करके काल ज्ञान करे ॥

इस पूर्वोक्त सब लेख का इस प्रसङ्ग में तात्पर्य यह निकला कि मन्वन्तरों की आरम्भ समाप्ति में अवान्तर प्रलय जल से और मन्वन्तर के आरम्भ में जल से ही सृष्टि का आरम्भ होता है और ब्राह्मकल्प में अग्नि से प्रलय होता है और अग्नि से ही सृष्टि का फिर आरम्भ होता है और महाप्रलय में वायु से प्रलय होता है और महाकल्प के पश्चात् फिर वायु से सृष्टि का आरम्भ होता है। आत्मा से आकाश और आकाश से वायु की उत्पत्ति जो शास्त्रों में दिखाई है उस का

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभिप्राय परमेश्वर से सृष्टिक्रम दिखाने का है वस्तुतः वायु तक का ही प्रलय और उत्पत्ति होती है आकाश की उत्पत्ति यही है कि ब्रह्माण्ड रचनार्थ अवकाश का नियत करना कि इतने अवकाश में ब्रह्माण्ड रचना हो। आकाश में वायु की गति है जहां आकाश नहीं वहां वायु भी नहीं। आकाश शब्द का अर्थ प्रकाश वाला है सृष्टि प्रक्रिया में सूर्य चन्द्रादि ज्योतियों से युक्त अवकाश ही प्रकाशवान् हो सक्ता है। जब अग्नितत्व के प्रलय से तेजसमात्र का प्रलय हो गया तो आकाश का आकाशपन नहीं रह सकता। तथा "शब्दगुण माकाशम्" जहां से शब्द की उत्पत्ति वा जहां स्थिति हो वह आकाश है सो अन्यतत्व वा प्राणी अप्राणि के न रहने से शब्द की उत्पत्ति नहीं हो सकती तथा शब्द की उत्पत्ति में वायु अग्नि भी कारण हैं "आकाशवायुप्रभवः। शिक्षायाम्" शब्द आकाश और वायु से उत्पन्न होता है तो वायु अग्नि के प्रलय में भी शब्द की उत्पत्ति नहीं हो सकती इस से भी आकाशत्व का अभाव होता है। पृथिवी की प्रलय का कारण इसलिये नहीं लिखा कि पार्थिव सब पदार्थ प्रलीन होने वाले हैं किन्तु प्रलय के कर्त्ता नहीं हैं और नैयायिकों के सिद्धान्तानुसार परमाणु चारभूतों (वायु, अग्नि, जल, पृथिवी) के ही होते हैं। आकाश के परमाणु नहीं होते इसी लिये आकाश जगत् का उपादान कारण नहीं समझा जाता किन्तु साधा-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस कारणान्तर्गत माना जाता है। और वायु की गति का कारण प्रायः अग्नि है। अग्नि से वायु में हलकापन आ जाता है इसी से ग्रीष्म काल में वायु की गति अधिक और शीत काल में भारापन रहने से वायु की गति वैसी तेज नहीं होती है। हलकाही पदार्थ अधिक चलायमान होता और भारी पदार्थ अधिकांश में स्थिर होता है जैसे भारी गम्भीर मनुष्य की बुद्धि स्थिर और हलके की चपल बुद्धि होती है। तृण उड़ जाते और पत्थर नहीं उड़ता है तात्पर्य यह कि यदि अन्य तत्त्वों का संघर्ष न हो और अग्नि वायु को हलका न करे तो वायु का चलना ही न हो तथा वायु सर्वत्र व्यापक है तभी पंखा हिलाने से चलने लगता है जैसे जल सर्वत्र भरा हो और एकस्थल से जल लिया जाय तो उस स्थल में इधर उधर से जल गिरे गा ऐसे ही सर्वत्र भरे वायु को जहां २ अग्नि हलका करता है वहां २ अन्यत्र से वायु गिरता है इस लिये उस में गति होती है जब अग्नि तत्त्व का प्रलय हो जावे तब वायु की गति होना भी दुस्तर है अर्थात् अग्नि के प्रलय में वायु अपने कारण आकाशमें स्वयमेव लीन हो जाता है इस लिये जल, अग्नि, वायु इन तीन ही तत्त्वों से तीन ही प्रकार का प्रलय होता है। जब २ जिस २ तत्त्व से प्रलय होता है तब २ उसी तत्त्व से फिर सृष्टि का आरम्भ होता है। इस सृष्टि और प्रलय के

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय में बहुत कुछ लिखा जा सकता है पर यहां जितना प्रश्न उपस्थित हुआ था उस पर लिखा फिर कभी इस विषय में आवश्यकता पड़ेगी तब लिखा जायगा। अब ये महाराजा वेङ्कटगिरि के प्रश्न पूर्ण हुए इन सब का उत्तर भी मैंने अपनी विद्या बुद्धि के अनुसार दिया है। महाराजा जी से निवेदन है कि इस मेरे लेख को मध्यस्थ होकर ध्यान दृष्टि से देखें यदि फिर भी कुछ शङ्का शेष रहे तो कृपा कर मुझ को अवश्य सूचना करें मैं पुनरपि यथाबुद्धि निर्धारण करूं गा। अथवा जो अन्यत्र में लिखा है कि सत्यार्थप्रकाश में ऐसी अनेक शङ्का हैं उन में से ये उदाहरण मात्र लिखी हैं सो जितने प्रश्न किये थे उन का यथावत् समाधान हो गया हो तो निवेदन है कि शेष प्रश्न भी लिख भेजें मैं अपनी बुद्धि के अनुसार उन का भी समाधान करूं गा। कदाचित् आप यह कहें कि तुमने बहुत सी युक्तियां वा वचन ऐसे लिखे हैं कि जो सत्यार्थप्रकाश में स्वामी जी महाराज ने नहीं लिखे यदि स्वामी जी ऐसे सब वचनों वा युक्तियों का सङ्ग्रह कर देते कि जिस से वह २ विषय यथावत् पुष्ट हो जाता तो किसी को प्रश्न करने का अवसर ही न मिलता तो इस का उत्तर यह है कि सत्यार्थप्रकाश किसी एक विषय का पुस्तक नहीं किन्तु अनेक विषयों का विचार मूलरूप से उस में किया गया है उन में से एक २ विषय पर एक २ सत्यार्थप-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काश बन सकता है यदि स्वामी जी महाराज ऐसा लिखते तो अनेक सत्यार्थप्रकाश बन जाते सो इतना समय उन के कहां मिलता था ? अनुमान केवल १२ वर्ष पुस्तक बनाने और विशेष कर उपदेश करने में रहे जिस में अनेक पुस्तक बनाये अनेक नगरादि में भ्रमण कर उपदेश किया। और लिखने वाला अपनी २ बुद्धि के अनुसार लिखता है किन्तु यह प्रतिज्ञा कोई नहीं कर सकता कि मेरे लेख वा पुस्तक में किसी देश वा काल में किसी मनुष्य को कभी सन्देह हो नहो अनेक ऋषि महर्षियों ने विद्या सम्बन्धी तथा धर्म सम्बन्धी अनेक पुस्तक बनाये हैं उन में भी शङ्का करने वाले शङ्का करने लगते हैं किन्तु जो ईश्वरीय अनादि विद्या वेद है उस में भी प्रायः लोग शङ्का करते हैं तो मनुष्यकृत पुस्तकों की क्या कथा है ? स्वामी जी महाराज के लेख में वा मेरे लेख में शङ्का हो इस में क्या आश्चर्य है ?। अर्थात् मैं भी प्रतिज्ञा नहीं कर सकता कि मेरे इस लेख पर कोई कभी शङ्का न कर सकेगा ॥

अब इस विषय को समाप्त करता हूं क्योंकि बढ़ाने में पार नहीं दीख पड़ता है। शमस्तु सर्वत्र ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकों का सूचीपत्र ॥

वाजसनेयोपनिषद् (ईश) संस्कृत भाषावृत्ति सहित =) तलवकारोपनिषद् (केन) संस्कृत भाषावृत्तिसहित ।) कठोपनिषद् संस्कृतभाषावृत्ति सहित १) प्रश्नोपनिषद् संस्कृत भाषावृत्तिसहित ॥) मुण्डकोपनिषद्भाष्य ॥।) डाकव्यय पु० ५ के =) तीर्थविषय =) विवाहव्यवस्था ।) द्वैताद्वैतसंवाद =) न्यायदर्शन मूलसूत्रपाठ ।) हिन्दी का प्रथम पुस्तक -) कुमारीभूषण ।) शास्त्रार्थखुर्जा =) सद्विचारनिर्णय =) आर्यसिद्धान्त १।२।३ भाग ३६ अङ्क जिल्दसहित २।) आर्यसिद्धान्त प्रथम, द्वितीय, तृतीय भाग ३६ अङ्क विना जिल्द २) इन पुस्तकों का डाक महसूल पृथक् ग्राहक को देना होगा जो एक २ मगावेंगे उन को आर्यसिद्धान्त तथा उपनिषदों के प्रत्येक पर)॥ डाक व्यय देना होगा जो महाशय इन से ५) रु० तक के पुस्तक लेंगे उन को २०) रु० सैकड़े के हिसाब से कमिशन के पुस्तक अधिक दिये जावेंगे अर्थात् अष्टांश के हिसाब से ५) रु० में ६) रु० के पुस्तक मिलेंगे ॥

भीमसेन शर्मा—सम्पादक आर्यसिद्धान्त—प्रयाग

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

स्थावर में जीवविचार

वृक्ष वनस्पति आदि स्थावर में जीव सिद्ध करने के लिये आर्यसिद्धान्त मासिक पत्र से उद्धृत कर और कुछ बढ़ा कर अनेक युक्ति तथा वेदादिशास्त्रों के प्रमाणों से युक्त भीमसेन शर्मा ने लोकोपकारार्थ बनाया ॥

सरस्वतीयन्त्रालय-इटावा

में छपा ॥

श्रावण शुक्ल ता० ४ । ८ । ९७ सं० १९५४

प्रथमवार १०००　　मूल्य -)॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक सं०.............
आगत सं०..9622d.
तिथि०.9/-/-2001

स्थावरयोनि में जीव विचार-

मांसभक्षण विषय में बड़ा दोष अधिकतम हिंसा है उस में अनेक लोग यह भी शङ्का करते हैं कि स्थावर घास वनस्पति वृक्षादि में भी जीव माने जाते हैं तो उन की तरकारी के खाने, डाली फल पत्ता तोड़ने, वृक्ष काटने, दातौन करने आदि प्रत्येक काम में पाप है फिर ऐसे पाप से कोई भी नहीं बच सकता। ऐसी दशा में सब पापों से बचकर संसार में मुक्ति का उपाय कोई भी नहीं कर सकता और एक बड़ा दोष यह है कि वेद और वेदानुकूल ग्रन्थों के आश्रय से हम मांसभक्षण को बुरा काम अधर्म ठहराने का उद्योग करते हैं सो सब बालू की भीत के समान निष्फल हुआ जाता है। क्योंकि मांस का निषेध करने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाले भी जब वृक्ष वनस्पति शाक आदि के खाने से नहीं बच सकते तो मांस खाने वालों के समान वे भी हिंसादोष के भागी हो चुके फिर जैसे चोर चोर को चोरी से नहीं हटा सकता वैसे कोई किसी मांसाहारी को नहीं हटा सकेगा। और वृक्ष वनस्पति आदि के तो खाने में हिंसादोष भी वेदादि शास्त्रों में नहीं दिखाया इत्यादि कारणों से अनेक अच्छे २ बुद्धिमानों की भी यही सम्मति है कि स्थावरयोनि वृक्ष वनस्पति आदि में जीव मानना एक प्रकार की भूल है।

उत्तर—मुझे जहां तक अनुमान वा प्रत्यक्षादि प्रमाणों से ज्ञात है वहां तक ऐसे मनुष्य नहीं मिले जो वेदादि शास्त्रों को ठीक २ पढ़ समझ के और उन का ठीक २ सिद्धान्त जान कर वृक्ष वनस्पति आदि में जीवात्मा के आने जाने वा ठहरने का निषेध करते हों किन्तु ऐसे ही लोग अधिक देखे वा सुने गये हैं जो अन्य भाषाओं के जानने से विशेष बुद्धिमान् होकर ऐसा मानते हैं। हम उन के बुद्धिमान् होने वा वेदादि को न जानने पर कुछ आक्षेप नहीं कर स-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कते क्योंकि दोषी वही माना जाता है जो उस विषय को ठीक समझ कर भी किसी स्वार्थादि के कारण उलटा कहे परन्तु यह अवश्य कहेंगे कि उन को वेदादि का सिद्धान्त ठीक जान कर ऐसा कहना उचित है। यदि वेद के वा धर्मशास्त्रों के ठीक २ जानने वाले अधिक लोग ऐसा मानते होते कि स्थावरयोनि में जीवात्मा नहीं जाता तो अवश्य उस पर ठीक २ व्यवस्था भी देते। ऐसी दशा में मुझे भी इस विषय पर कुछ लिखने की आवश्यकता न पड़ती। परन्तु ऐसा नहीं है इस लिये इस विषय पर लिखने की आवश्यकता हुई। संसारी मनुष्यों के लिये शास्त्र में मुख्य कर दो प्रकार के मार्ग दिखाये हैं। एक तो संसार की उन्नति करना और सब अच्छे कामों की प्रवृत्ति बढ़ाना जिस से संसारी सुख बढ़ें इस को अभ्युदय सुख कहते हैं। द्वितीय निःश्रेयस मार्ग है जिस को मोक्ष वा परमार्थ भी कहते हैं। संसार के अभ्युदय सुख की प्राप्ति के लिये मनुष्य को जो २ कर्म करने चाहिये वा करने पड़ते हैं वे सब वा प्रायः अधिकांश

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसे नहीं होते जिन से किसी को कुछ भी अनुपकार हानि वा दुःख प्राप्त न हो किन्तु ऐसे ही काम अधिक हैं जिन में धर्माधर्म मिला रहता है । परन्तु संसार में धर्म अधर्म शब्दों को सापेक्ष मान कर लोक का व्यवहार चलाने पड़ता है । जब हम को दो काम वा मार्ग ऐसे प्रतीत हों कि इन दोनों के करने में कुछ न कुछ दोष है वा किसी न किसी को कुछ दुःख वा हानि पहुंचना दोनों ही से सम्भव है तो वहां जिस में कम दोष हो वा जिस से किसी को कम दुःख पहुंचे वैसा काम करना चाहिये । क्योंकि संसार में रहकर संसारी व्यवहार चलाने के लिये हम को दो में एक मार्ग पर चलना अवश्य पड़ता है इसलिये जिस मार्ग में कम दोष हो और गुण वा भलाई अधिक हो उस कार्य को धर्मशास्त्रकारों ने अधिक दोष वा बुराईयुक्त काम की अपेक्षा धर्म ठहराया वा माना है। और यही सिद्धान्त सब विद्वानों को मान्य होता है। जैसे किसी प्राणी को किसी प्रकार का दुःख पहुंचाना अधर्म अवश्य है परन्तु संसारी मनुष्य वा राजादि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा नहीं कर सकते राजादि अनेक मनुष्यों को अ-
नेक हिंसक वा अपराधी प्राणियों का वध करने प-
डता वा ताड़नादि द्वारा दण्ड देने होता है क्योंकि
उन को ताड़ना दिये बिना संसार की व्यवस्था ठीक
नहीं चलती। और उन को ताड़ना देने से जो कष्ट
पहुंचाया जाता है उस से कुछ पाप अवश्य होता है
परन्तु उस ताड़ना से अनेक मनुष्य सचेत हो जाते हैं
कि ऐसा काम हम करेंगे तो हमारी भी यही दशा
होगी इस लिये ऐसा न करना चाहिये। इस प्रकार
समझ कर अनेक मनुष्य उन कामों से बचते और
उस एक अपराधी को मारकर जिस से जिन अनेकों
को दुःख होता था वा होना सम्भव था ऐसे प्राणियों
को विपत्ति से बचाना वा अन्य अधर्म करने वालों को
दण्ड का भय पहुंचाकर बचाना इत्यादि अनेक प्रकार
का अधिक पुण्य होता है इस लिये वह कर्त्तव्य काम
माना जाता और मानना चाहिये। परन्तु मुमुक्षु पु-
रुष को ऐसे काम भी नहीं करने चाहिये जिन से कुछ
भी किसी को दुःख पहुंचे। कोई मनुष्य कभी सिद्ध

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं कर सकता कि हिंसक सिंहादि के वा चोरादि के मारने में हिंसारूप अधर्म नहीं है किन्तु उस के प्राण वियोग करने से जो अत्यन्त दुःख पहुंचाया जाता है वह हिंसारूप पाप अवश्य है परन्तु उस हिंसा से अनेकों को सुख पहुंचानारूप पुण्य वा धर्म बहुत अधिक है। इस लिये ऐसे काम संसारी दशा में धर्मानुकूल कर्त्तव्य माने गये हैं और मानने चाहिये। इस से सिद्ध हुआ कि जिस काम के करने में उपकार अधिक हो और दोष कम हो वह कर्त्तव्य काम है। अधिक पुण्य से थोड़ा पाप दब जाता है। इस लिये ऐसे काम करनेवाला पापी नहीं कहाता किन्तु धर्मात्मा माना जाता है परन्तु वह मनुष्य अधिक पाप करने वाले की अपेक्षा संसारी मनुष्यों में धर्मात्मा है किन्तु परमार्थ की ओर झुके हुए, सर्वथा धर्म का ही सेवन करने वाले की अपेक्षा उस को धर्मात्मा नहीं कह सकते। इसी विचार वा सिद्धान्त के अनुसार मनुष्यजाति में विद्वान् वा अधिक कर धर्म का सेवन करने वाले जिन से संसार का अधिक उपकार होता

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता वा होना सम्भव हो उन की रक्षा साधारण मनुष्यों की अपेक्षा अधिक करनी चाहिये । ऐसे मनुष्यों को दुःख पहुंचाने वाले जानो धर्म के शत्रु हैं उन को मारना वा मरवाडालना अधिक पाप का हेतु नहीं है । जहां धर्मात्मा अधिक उपकारी और अधर्मी अनुपकारी वा साधारण इन में से एक के मारे जाने का सम्भव हो वहां धर्मात्मा की रक्षा करना अधिक उपयोगी होने से कर्त्तव्य धर्म है । इसी प्रकार पशुओं की अपेक्षा मनुष्यजाति की रक्षा करना तथा पशुओं में परस्पर अधिक उपकारी गौ आदि की रक्षा अन्य साधारण पशुओं की अपेक्षा अधिक वा प्रथम करना चाहिये और कृमि कीट पतङ्गादि की अपेक्षा सामान्य पशुओं की रक्षा करना भी धर्मानुकूल है । तथा वृक्ष वनस्पति आदि स्थावर की अपेक्षा प्राणीमात्र की रक्षा प्रथम करना उचित है । इसी प्रकार स्थावरों में घासादि की अपेक्षा अच्छे २ उपकारी फलफूल देने वाले वृक्षादि की अधिक रक्षा करनी चाहिये । क्योंकि संसार में उपकार अपकार ही उत्तम

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीच अच्छे बुरे के लक्षण हैं। इसी के अनुसार धर्म-शास्त्र वालों ने ब्रह्महत्या को महापातक और गोहत्या वा पशुहत्या को उपपातक माना है और वृक्ष वनस्पति आदि के तोड़ने काटने को हिंसा भी नहीं कहा। क्योंकि हिंसा वा हत्या शब्द प्राणवियोग करने में योगरूढ़ होरहा है। और प्राण की क्रिया श्वास (दम) जो जीवनरूप है वही प्रत्यक्ष लीजाती है। इसलिये वृक्षादि में हिंसा वा हत्या नहीं कही वा मानी जाती सो ठीक सिद्धान्त है॥

जीवात्मा वृक्षादि में भी है यह अवश्य मानना चाहिये। परन्तु व्यक्ति और जाति वा योनिके भेद से भेद अवश्य है। सब शरीरों में एक ही प्रकार से आत्मा नहीं रहता वा यों कहो कि सब देश काल और अवस्थाओं में एकसा नहीं रहता उसमें भेद होनेके कारण देश काल और अवस्था वा वस्तुओं का भेद ही है। मनुष्य जब अच्छे प्रकार सोजाता है तब मच्छर आदिके काटने पर भी दुःखका अनुभव नहीं होता वा इतना कम होता है जिससे जाग नहीं सकता क्योंकि दुःख पहुंचने की अ-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेक्षा निद्रा अधिक प्रबल है तमोगुण ने उसकी चेतनशक्तिरूप बुद्धि को दबा रक्खा है। जब निद्रा की अपेक्षा दुःख अधिक पहुंचाया जाय तो जाग भी सकता है। जब त्वचा में शून्य रोग हो जाता है तब कण्टक छेदनादि से भी इतना कम दुःख प्राणियों को पहुंचता है जिस से पीड़ा नहीं जान पड़ती तो क्या इस में जीवात्मा का निषेध कर सकते हैं ?। बालकपन और युवावस्था में शीत उष्ण आदि मनुष्य को इतनी पीड़ा नहीं पहुंचाते जितनी निर्बल रोगीदशा वा वृद्धावस्था में पहुंचा सकते हैं। यह सुख दुःखादि का भेद अवस्था भेद से है। किसी देश वा किसी काल में जैसे २ सुख दुःख का अनुभव प्राणी करता है वैसा ही सब देश और कालों में बराबर नहीं भोगता किन्तु सुख दुःख देश काल के भेद से बदल २ के कमती बढ़ती होते रहते हैं। ये सब तो साधारण बातें दृष्टान्त के लिये हैं। मुख्य दृष्टान्त यह है कि जैसे आंख में छोटासा तृण भी उड़कर पड़ जावे तो बड़ा क्लेश पहुंचता है और अन्य शरीर पर वा पग आदि पर वैसे सहस्रों तिनके भी नहीं जान पड़ते। ऐसे ही

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचारशील धर्मात्मा को अधर्म का अंश जितना क्ले-
शदायक होता है उस की अपेक्षा साधारण को बहुत
कम क्लेश व्यापता है। इसी प्रकार ज्यों २ जिस २
प्राणी के शरीर में विचारशक्ति कम होती है वहां २
वैसा ही सुख दुःख का अनुभव कम होता है। शा-
स्त्रकारों ने जीवात्मा का गमनागमन चार प्रकार की
योनियों में मुख्य कर माना है। १-जरायुज। २-अ-
ण्डज। ३-स्वेदज। ४-उद्भिज्ज। जरायुज में मनुष्य
और पशु मुख्य हैं। अण्डज में पक्षी मुख्य हैं। स्वे-
दज में कृमि कीट पतङ्गादि हैं। और चौथे उद्भिज्ज
में वृक्ष वनस्पति आदि हैं। इन में ऊपर से नीचे
तक सब में चेतनशक्ति और उसी के साथ सुख दुःख
का अनुभव बराबर कम होता गया है। अन्त में वृ-
क्षादि में इतना कम होगया कि जिस से अनेक लोगों
को सन्देह होने लगा कि इन में जीव है वा नहीं?
सो इस सन्देह का कारण चेतनशक्ति और सुखदुः-
खानुभव का न होने के समान निर्बल पड़जाना है।
यदि कोई मनुष्य समाधिस्थ हो वा उस की चेतन-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शक्ति नशा वा उन्मादादि रोग की प्रबलता में ऐसी दब जावे कि जिस को अनेक लोग मरा ही समझलें। ऐसी ही दशा वृक्षादि में जीवात्मा की रहती है। इस का कारण मनुस्मृति के प्रथमाध्याय में लिखा है कि—

तमसा बहुरूपेण वेष्टिताः कर्महेतुना।
अन्तःसञ्ज्ञा भवन्त्येते सुखदुःखसमन्विताः ॥ १ ॥

पूर्वजन्मों में वैसे २ विशेष तमोगुणी कर्मों के सेवन के कारण अनेक प्रकार के तमोगुण से आच्छादित भीतर मन ही मन में सुख दुःख भोगने वाले जीवात्मा वृक्षादि स्थावरयोनि में रहते हैं। उन को मनुष्यादि के तुल्य शरीराभिमान न होने वा वैसा अभ्यास पड़जाने से बहुत कम सुख दुःख का अनुभव होता है। जैसे कि बड़े की अपेक्षा थोड़ी अवस्था वाले बालक को सुख दुःखानुभव बहुत कम होता है। इत्यादि विचार के अनुसार वृक्षादि में जीवात्मा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का होना अवश्य मानना चाहिये। अन की तरकारी शाक खाने, डाली फल पत्ते तोड़ने में कुछ दोष तो अवश्य है परन्तु मांस खाने के समान पाप वा दोष उस में नहीं किन्तु पश्वादि को मारने की अपेक्षा सहस्रांश भी दोष नहीं मान सकते। यदि कोई पश्वादि के समान दोष ठहराने का भार ले, तो हमारा प्रश्न उसी के प्रति यह है कि मनुष्य, पशु, पक्षी कीट पतङ्ग खट्मल मक्खी मच्छर चींटी आदि को मारडालना तुम बराबर समझते हो ?। क्या मनुष्य चींटी खटमल इन तीनों की हत्या के दोष को कोई बराबर ठहरा सकता है ?। लोक में भी खटमल आदि जन्तुओं को अनेक लोग जान बूझकर मारडालते और उन को हत्या का दोष कोई नहीं लगाता और न वे अपने को दोषी समझते हैं परन्तु भारतवर्षनिवासी वेदानुयायियों में गौको कोई भूल से भी मार देवे तो भी गोहत्या का अपराधी माना जाता है तथा यदि कोई मनुष्य को मार डाले तो राजा उसके प्राण उसी अपराध में लेने को तयार होता है यह अपराध की

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न्यूनाधिक व्यवस्था शास्त्र के अनुसार ही लोक में भी प्रचरित है। एक सहस्त्र १००० खटमल के मारने में लोक वा शास्त्र के अनुसार इतना पाप नहीं माना जाता जितना एक पशु वा गौके मारने में माना जाता है। इसी प्रकार जन्मभर असंख्य घास वृक्ष वनस्पति के तोड़ने काटनें में भी उतना पाप नहीं जितना एक मनुष्य वा गौ के मारने में है। जो सब में बराबर पाप मानने का दावा करे उस को मनुष्य और खटमल के मारने में बराबर पाप ठहराने का उद्योग तथा ब्रह्महत्या महापातक को साधारणपातक वा सब जन्तुओं की हत्या को महापातक ठहराने का उद्योग करना चाहिये। इस लिये घास काटने शाक आदिके लिये पत्ती वा शाखा तोड़ने में ऐसा पाप वा दोष नहीं है जिसकी हम मांसभक्षण के साथ कुछ भी तुलना कर सकते हों। लोक वा शास्त्र के सिद्धान्तानुसार जब क्षुद्रजन्तु खटमलादि के मारने वाले भी हिंसक वा मुख्य हत्या दोषके अपराधी नहीं माने जाते तब स्थावर वृक्षादि तो खटमल आदि की अ-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेक्षा भी अधिक क्षुद्र हैं। जैसे मनुष्य और पश्वादि की अपेक्षा सहस्रांश भी खटमल आदि के मारने में पाप नहीं वैसे खटमल आदि की अपेक्षा वृक्षादि में लक्षांश भी पाप नहीं। शास्त्रकारों ने ऐसा ही सिद्धान्त मानकर क्षुद्रजन्तुओं के मारनेमें हत्या वा हिंसा दोष मुख्य नहीं रक्खा। फिर पश्वादि के मारने और घासादि के काटने में बराबर पाप कभी कोई नहीं ठहरा सकता इससे मांसकी उपमा शाकादिको नहीं देसकते।

अब रहा कुछ दोष सो भी जहां उस थोड़े दोष के होने से कई गुण पुण्य वा उपकार है वहां उस कम दोष वाले काम को करना चाहिये। उस से अधिक जो उपकार होगा उस से दोष दब जायगा। अर्थात् घास पत्ती वनस्पति आदि काटे विना काम नहीं चलता वा उस घासादि के बने रहने से उतना उपकार नहीं जितना हम काट कर काम निकाल सकते हैं तो काटना ठीक है। यदि मनुष्य चाहे तो घासादि के काटे विना भी निर्वाह कर सकता है मनुष्य की प्राणयात्रा के लिये ईश्वर ने अन्न क

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुख्य कर बनाया है। अन्नरूप फल के ओषधि नाम वृक्ष को सूख जाने पर काटना चाहिये तब कोई दोष नहीं है और अन्नरूप फल पकते समय उन के पेड़ (वृक्ष) आप ही सृष्टि के नियमानुसार सूख जाते हैं। उसी अन्न की दाल रोटी खाकर निर्वाह करना मुख्य काम है इसी से मनुष्य का निर्वाह हो सकता है। तरकारी भी उन आलू, रतालू, घुइया (अरवी) आदि कन्दों को खाना निर्दोष है। जिन का वृक्ष कन्द पकते समय सूख जाता है। इसी प्रकार जलाने आदि की लकड़ी हम वृक्ष के सूखने पर अपने काम में लावें तब कुछ भी दोष नहीं। परन्तु आज कल वा कभी सब वा प्रायः लोग इस प्रकार निर्वाह नहीं कर सकते सो यह शास्त्र के सिद्धान्त पर कुछ आक्षेप नहीं आता। क्योंकि शास्त्र तुम को सब प्रकार का मार्ग दिखाता है कि यह मार्ग सर्वथा निर्दोष है, इस में इतना दोष कम वा अधिक है जिस प्रकार चाहो वैसा करो जैसे मार्ग पर चलोगे वैसे धर्म अधर्म के भागी होकर सुख दुःख फल पाओगे। परमेश्वर ने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम सब को स्वतन्त्र बना कर सब प्रकार का उपदेश कर दिया है। यजुर्वेद में लिखा है कि—

दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्सत्यानृते प्रजापतिः। अश्रद्धामनृतेऽदधाच्छ्रद्धाᳬं सत्ये प्रजापतिः॥

उस ने विचार पूर्वक सत्य असत्य का भेद सब को प्रकट कर दिया। सत्य में विश्वास और असत्य में सब को अविश्वास अश्रद्धा उत्पन्न करदी। अर्थात भलाई बुराई के दोनों मार्ग दिखा दिये [येनेष्टं तेन गम्यताम्] जिस मार्ग से चाहो चलो। यदि सर्वथा धर्मात्मा बनना चाहो और संसार के सब दुःखों से बचनेकी इच्छा रखते होतो पहिले संसारी सब सुखों को तिलाञ्जलि देकर उस बाट को गहो क्योंकि उस मार्ग में पाप का लेश भी नहीं है। हल जोत कर बोये अन्न का भी निषेध वहां किया गया है किन्तु

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर की सृष्टि के अनुसार स्वयमेव जो अनादि में पक कर गिर जाता है उस सुन्यन्न से प्राणपोषण करो वा कन्द मूल फलादि जो वृक्ष से पककर स्वयं नीचे गिर जावें वा जिन का वृक्ष स्वयमेव सूख जावे उन को खाकर कालक्षेप करो अधिक बोलना छोड़ो एकान्त वास करो नित्य ईश्वर का ध्यान योगाभ्यास तप करो इत्यादि प्रकार से मुक्ति का मार्ग खुला है। द्वीपान्तरवासी मतों के समान किसी निज (ख़ास) शरीरधारी पर विश्वास लाने पर वैदिक सिद्धान्त में मुक्ति की रुकावट नहीं है । इस प्रकार स्थावरयोनि में जीवात्मा का गमनागमन मानने पर मुक्ति में कुछ शंका नहीं होसकती। इसी सिद्धान्त को ठीक मानकर मनुस्मृति आदि धर्मशास्त्रों में वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम वाले के लिये ऐसे २ साधन लिखे हैं कि वह वृक्ष से स्वयमेव पककर गिरे फल फूलादि खावे किन्तु वृक्ष से फलादि तोड़े नहीं—खोद कर वा जोतकर बोने से उपजे अन्न को न खावे इत्यादि । यदि वृक्षादि में जीवात्मा माननेपूर्वक सुख दुःख न माना जावे तो फल तोड़ने आदि का निषेध करना व्यर्थ हो जावे ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम वृक्षादि में जीवात्मा न मानें तो ऐसे २ सिद्धान्तों को भी उस के साथ ही खण्डन करना पड़े। इसलिये भी वृक्षादि में जीव मानने का सिद्धान्त रखना आवश्यक है॥

हां संसारी व्यवस्था में रहकर वृक्ष वनस्पति के तोड़ने काटने से प्रायः मनुष्य नहीं बच सकता इस के उत्तर में हम कह सकते हैं कि इसी से संसारी मनुष्य पूर्ण धर्मात्मा भी नहीं हो सकता इसी लिये महर्षि लोगों ने मुक्ति मार्ग को संसारी व्यवहार से भिन्न रक्खा है।

अब इस विषय में एक बात का विचार करना और आवश्यक है कि जीव वा जीवात्मा किस को कहते हैं जीव का लक्षण क्या है? न्यायदर्शनगोतम सूत्र के प्रथमाध्याय में आत्मा का लक्षण लिखा है कि–

इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानान्यात्मनो लिङ्गमिति॥

इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख और ज्ञान ये आत्मा के चिह्न हैं जहां ये प्रत्यक्ष दीख पड़ें वहां जानलो कि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस में आत्मा है । इन्हीं चिह्नों के न रहने से मनुष्य का शरीर मृतक (मुर्दा) मान लिया जाता है । यदि ऐसे चिह्न आत्मा को पहचानने के लिये नियत न करें तो मरे और जीते की परीक्षा भी होना दुस्तर है । इन में से वृक्षादि में कोई भी चिह्न नहीं दीख पड़ता फिर वृक्षादि में जीवात्मा का होना कैसे सिद्ध हो सकता है ? ॥

उत्तर—यह लक्षण वास्तव में मनुष्य शरीर का वा जङ्गम प्राणियों का है कि जिन में ये चिन्ह हों वे शरीर सजीव चेतन हैं और जिन में ये चिन्ह न हों उन्हें मृतक समझो । परन्तु वृक्षादि में जीवात्मा के होने का निषेध इस से नहीं निकलता । ऐसा न मानें तो शरीर से भिन्न आत्मा में अतिव्याप्ति दोष आवेगा । न्याय दर्शन के भाष्यकार वात्स्यायन ऋषि ने स्वयमेव लिखा है कि—

"नाशरीरस्यात्मनो भोगः कश्चिदस्तीति"

शरीर रहित आत्मा को कोई भोग सुख दुःखादि प्राप्त नहीं होता । इसी कारण कर्मों के सुख दुःख फल भोगने के लिये बार २ शरीर धारण करने पड़ता

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। जब तक एक शरीर से निकल कर दूसरे शरीर में जन्म ले शरीर का अभिमानी आत्मा नहीं बनता उतने बीच में इच्छा द्वेषादि कुछ भी प्रकट नहीं होते तो क्या आत्मा का अभाव मानोगे ? । यदि कहो कि इच्छादि गुण बीजरूप से आत्मा में तब भी रहते हैं तो यही उत्तर वृक्षादि के लिये भी उचित होगा कि तमोगुण से आच्छादित इच्छादि गुण वृक्षादि में भी हैं। वास्तव में इच्छादि गुणों की प्रकटता आत्मा की सत्ता से अन्तःकरण में होती है। और अन्तःकरण की शक्ति भिन्न २ योनियों वा शरीरों में अन्य २ प्रकार की स्वाभाविक और नैमित्तिक साधनों से हुआ करती है। मनुष्य योनि को जैसे सुख दुःख भोग के साधन दिये गये हैं वे सब मनुष्य जाति के स्वाभाविक हैं। उन में भी स्वाभाविक प्रकृतियों के अवान्तर भेद अनेक वा असंख्य हैं। पशु जाति में एक अन्य ही प्रकार की शक्ति इच्छादि गुणों की प्रकटता के लिये रक्खी गई है जो मनुष्य की सामान्य स्वाभाविक शक्ति से अनुभव करने की शक्ति बहुत ही कम है। मनुष्य के तुल्य इच्छादि गुण पशु योनि में कोई कभी नहीं ठहरा स-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कता। पश्वादि अपनी उन्नति का वा सुख विशेष की प्राप्ति का उपाय स्वयं कुछ नहीं कर सकते। मनुष्य से नीचे एक ही कक्षा उतर कर पशुयोनि है। उस में जब इच्छादि गुण इतने निर्बल पड़गये तो वृक्षादि जो कई कक्षा (दरजे) नीचे को गिरे हुए हैं उन में इच्छादि की न्यायानुसार जैसी दशा होनी चाहिये सो विचारशील स्वयं समझ सकते हैं। इस के लिये विशेष आन्दोलन की आवश्यकता नहीं। न्याय दर्शन में प्रायः मनुष्ययोनि का विचार है और उस का मुख्य विषय वा आशय यह है कि अनेक नास्तिकपक्ष के लोग आत्मा को मानते ही नहीं कि मनुष्य के शरीर में भी कोई आत्मा है। क्योंकि उन लोगों का सिद्धान्त है कि जैसे घड़ी आदि यन्त्र अनेक वस्तुओं के संयोग से बनाये जाते हैं और उन में नियमानुकूल गमनादि क्रिया वा अनेकों के संयोग से एक ऐसा गुण प्रकट हो जाता है जिससे अनेक काम चले जाते हैं। वैसे यहां मनुष्यादि के देह में भी रुधिर की गर्मी ही जीवन शक्ति है। उस गर्मी के न रहने पर मृतक माना जाता है। इस शरीर में भी अनेक धातुओं के संयोग

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से घड़ी के तुल्य एक कला चल रही है। घड़ी की कल बिगड़ने के तुल्य जब तक साध्य रोगादि द्वारा कला बिगड़ती है तब तक घड़ीसाज़ के तुल्य डाक्टर वैद्य आदि सम्हाल सकते हैं परन्तु जब असाध्यरोग दशा होता है। तब घड़ी के तुल्य शरीर की कला: फिर काम नहीं दे सकती और मृतक मान लिया जाता है इत्यादि प्रकार से बुद्धि से भिन्न आत्मा को न मानने वाले अनात्मवादियों का खण्डन करने के लिये पूर्वोक्त गोतमन्याय का सूत्र है कि बुद्धि मनुष्य की अनित्य है। क्षण २ वा पल २ में नयी २ उत्पन्न होती रहती है। अवस्थाभेद, देशभेद, कालभेद से तो बहुत ही ब-दल जाती है किसी की बुद्धि एकसी सदा नहीं रह सक-ती। घट को देखते समय घटाकार बुद्धि हुई फिर जब२ अन्य २ वस्तु को देखने सुनने शोचने लगा तब २ उस २ पदार्थ की बुद्धि बदलती गयी। ऐसे ही अनेक प्र-कार के भिन्न २ गुण कर्म व्यवाहार वा वस्तुओं का कालभेद से जैसा २ अनुभव इन्द्रियों द्वारा करता जा-ता है वैसी २ बुद्धि नयी २ होती जाती है और पुरानी बुद्धि धीरे २ नष्ट होती जाती है। इस कारण इच्छादि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुणों का आश्रय बुद्धि नहीं ठहर सकती क्योंकि जिस पदार्थ से सुख प्राप्त हुआ है उस को फिर ग्रहण की इच्छा और जिस से दुःख हुआ है उस से बचने की इच्छा यही दो प्रकार की इच्छा सदा सब को होती है इसी कारण पश्वादि को रुपये पैसे की कभी इच्छा नहीं होती। तो इस से यह सिद्ध हुआ कि जिस को जिस पदार्थ वा काम के ग्रहण वा त्याग की इच्छा होती है उसी ने पहिले कभी उस वस्तु वा काम से सुख दुःख का अनुभव किया है तो इच्छा का जो आधार है वा आश्रय है अथवा इच्छा गुण जिस में रहता है उस का दो काल में होना सिद्ध हो गया और बुद्धि में यह शक्ति नहीं इस लिये इच्छादि गुणों का जो आश्रय है वही स्थायी वस्तु आत्मा है। उसी ने उन पदार्थों की प्राप्ति से सुख दुःख भोगा था। इसी कारण उद्बोधक चिन्हादि से उसको फिर इच्छा हुई कि इस को मैं प्राप्त करूं वा त्याग करूं। यदि अनित्य बुद्धि को इच्छादि का आधार कोई माने तो जैसे अनुभव करने वाली अन्य बुद्धि के जाने भोगे का स्मरण अन्य बुद्धि को होकर इच्छा हो सकती है। वैसे ही

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्यशरीरधारी के देखे सुने का स्मरण अन्य को उस के मत में होना चाहिये। यह दोष अनात्मवादी के शिर पर है। इस लिये मनुष्यादि के शरीरों में इच्छादिगुण जिसके आश्रय रहते वा होते हैं वह आत्मा कोई भिन्न पदार्थ है। इस प्रकार इस सूत्रसे अनात्मवाद का खण्डन करके आत्मा का होना इच्छादि गुणोंसे सिद्ध किया है यही आशय वात्स्यायनभाष्य में स्पष्ट व्याख्यात है। किन्तु आत्मा के स्वरूपका निर्णय यहां नहीं किया गया और न यह सिद्ध किया कि इच्छादि गुण जहां न दीख पड़ें वहां आत्मा को मत मानो। आत्मा वा जीव का क्या स्वरूप है वह किस२ योनि में जाता वा रहता है उसके इच्छादि गुण किस२ दशा में रहते हैं यह विषय भिन्न है। इस विषय के साथ सूत्र का आशय कुछ नहीं मिलता किन्तु सूत्र का पूर्वोक्त प्रकार विषय ही भिन्न है। जैसे कोई धूम को देखकर अग्नि का होना सिद्ध करे वैसे ही यहां आत्मा की सिद्धि का विषय है। जैसे धूम से अग्नि के स्वरूप की और जिस२ दशा (हालत) में अग्नि रहता है इस विषय की सिद्धि नहीं हो सकती वैसे आत्मा के इच्छादि गुणों से उस

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के स्वरूप का था उस की सब दशाओं का निर्णय नहीं हो सकता । ये दोनों विषय भिन्न २ हैं इस से वृक्षादि में जीवात्मा के गमनागमन का निषेध नहीं आता ॥

अब जीव का स्वरूप क्या है ? अथवा यों कहें कि सजीव वा सचेतन किस को मानना चाहिये ?

इस में पहिले प्रश्न का उत्तर तो यह है कि जीव का स्वरूप सूक्ष्म और चेतन है वह इन्द्रियों से गृहीत नहीं होता वह शब्दादि के तुल्य किसी इन्द्रिय का विषय नहीं है। श्वेताश्वतर उपनिषद् में स्पष्ट लिखा है कि-

वालाग्रशतभागस्य शतधाकल्पितस्य च । भागो जीवः स विज्ञेयः स चानन्त्याय कल्पते॥

वाल के अग्रभाग के हजारवें अंश के तुल्य सूक्ष्म जीव है वही अच्छे २ यथोचित साधनों से मुक्ति के लिये समर्थ होता है । यद्यपि जीव इतना सूक्ष्म है तथापि वह जैसे छोटे बड़े शरीरों में आता वा रहता है उस

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब शरीर में उस की शक्ति व्याप्त रहती है। जैसे कि दीपक छोटे घर में जलाया जावे वा बड़े घर में जलाया जावे उसी घरभर में उस का प्रकाश फैलेगा। इसी प्रकार जीवात्मा की चेतनशक्ति सब छोटे बड़े शरीरों में फैली रहती है। महाभारत शान्तिपर्व मोक्षधर्म अ० १८७ में लिखा है कि-

मानसोऽग्निः शरीरेषु जीव इत्यभिधीयते॥

मन में प्रकट हुआ अग्नि के तुल्य प्रकाशस्वरूप चेतन सूक्ष्म मनुष्यादि के शरीरों में जीवपदवाच्य कहाता है। मानस कहने से प्रयोजन यह है कि मन रूप साधन के बिना जीवात्मा के इच्छादि गुण प्रकट नहीं होते किन्तु आत्मा और मन के संयोग में ही इच्छादि गुण प्रकट होते हैं। सुषुप्ति में भी मन तमोगुण से आच्छादित रहता है इसी कारण ठीक २ सुख दुःखादि का अनुभव नहीं होता किन्तु जैसे अधिक निद्रा में सोते हुए को मच्छरादि के काटने से कुछ दुःख पहुंचता है इसी लिये वह स्वप्नदशा में ही शरीर को हिलाता हाथ उठाता पटकता है इस कारण उस समय मनके साथ आत्माका पूरा संयोग नहीं माना जाता किन्तु

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ २ संयोग रहता है । स्वप्नदशा में जब तक उद्बोधक हेतुओं की अपेक्षा तमोगुणरूप निद्रा की प्रबलता अधिक रहती है तब तक दुःख पहुंचाने पर भी जाग नहीं सकता । यही दशा वृक्षादि स्थावरोंमें जीवात्मा की है । प्रयोजन यह कि बाहरी प्रकट इच्छादि के आधार का ही नाम जीवात्मा वा जीव नहीं है किन्तु इच्छादि गुणों से वा मन से भिन्न एक जीवात्मा है जिसकी विद्यमानता इच्छादि की प्रकटता होने न होने पर दोनों दशा में मानी जाती है । प्रश्न--यदि कोई शंका करे कि दीपक की विद्यमानता में प्रकाश न हो तो क्या ठीक है ? ऐसा कोई मान सकता है ? वा प्रकाश न होने की दशा में दीपक होने में प्रमाण ही क्या है ? दीपक का अभाव ही क्यों नहीं मान लिया जाय ? ।

उत्तर—यदि दिन में अधिक प्रबल आंधी मेघ के दब आने से रात्रि के तुल्य अन्धकार फैल जावे और प्रकाश न रहे तो क्या तुम मान लोगे वा सिद्धकर सकोगे कि अब सूर्य नहीं है ? वा किसी आच्छादक वस्तु से दीपक ऐसा दबा दिया जाय जिसका प्रकाश

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही न फैले वा बहुत मन्द प्रकाश फैल जावे तो क्या मान लोगे कि दीपक वहां नहीं है ? इसी प्रकार यदि मान सको वा सिद्धकर सको कि सूर्यादि नहीं हैं तो वृक्षादि में भी जीवका अभाव मानलेना। और यदि किसी प्रमाण से सूर्यादि की विद्यमानता को सिद्ध करो तो वही प्रमाण वृक्षादि में जीव की सत्ता सिद्ध करने के लिये उपयोगी होगा। इत्यादि विचार को यहीं छोड़ना ठीक है क्योंकि आगे पार नहीं।

अब यह विचारना शेष है कि सजीव वा सचेतन किस को मानना चाहिये ?। इस का उत्तर यह है कि जो वस्तु बीज से उत्पन्न हो और समय, खेत, जल तथा बीज इन चार प्रकार की सामग्रियों से जिसकी उत्पत्ति होकर किसी नियत समय तक बढ़े और पीछे नियत परिणत (वृद्ध) अवस्था में वा आगन्तुक रोगादि के कारण अपनी सबीज अर्थात् (सजीव) दशा को छोड़कर मृतक हो जावे वा सूख जावे उसको सजीव कहते हैं। बीज और जीव शब्द में एक अक्षर की लौट पौट है। इस कारण इन का अर्थ परस्पर अधिक मेल अवश्य रखता है कि जो

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीज से हों वे शरीर सजीव वा जीव सहित हो स-
कते हैं तथा जिन में जीव है उन की बीज द्वारा
आगे २ सन्तति चल सकती है इस प्रकार बीज और
जीव ये दोनों सहयोगी वा सहचारी वा सापेक्ष शब्द
हैं। जहां जीव नहीं उन में आगे सन्तति चलने वाला
बीज नहीं हो सकता। और जिन वस्तुओं का बीज
नहीं वहां जीवात्मा किसी रूप से रहे भी परन्तु श-
रीराभिमानी नहीं हो सकता। बीजशब्द का अर्थ
सामान्य कारण नहीं है किन्तु बीज किसी सजीव श-
रीर का सर्वोत्तमसार होता है जिस में उस शरीर के
सूक्ष्म सब अंश रहते हैं इसी कारण उस बीजसे फिर
शरीर वा वृक्षादि बन जाते हैं। लौकिक व्यवहार
में वृक्षादि शरीर पदवाच्य नहीं माने जाते और श-
रीर के स्थान में वृक्षादि शब्दों का भी प्रयोग नहीं
होता इसका कारण चेतनशक्ति की प्रबलता और
निर्बलता है। मनुष्यादि के शरीर में चेतनशक्ति प्र-
बल व्याप्त है और जिसकी चेतनशक्ति विशेष पीड़ा
पहुंचाने पूर्वक रोगादि द्वारा भिन्न की जाय वह श-
रीर कहाता और जो छेदन किया (काटा) जाय

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह वृक्ष कहाता है। इसी कारण मनुष्यादि के शरीरों में हिंसाशब्द की प्रवृत्ति है और वृक्षादि में नहीं। परन्तु वेद वा उपनिषदादि ग्रन्थों में कहीं २ शरीर शब्द के स्थान में वृक्ष शब्द का प्रयोग आता है। जैसे ऋग्वेद में—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते ॥ समाने वृक्षे पुरुषो निमग्नोऽनीशया शोचति मुह्यमानः ॥ श्वे० उ०

इन दोनों प्रमाणों में वृक्ष शब्द कर के शरीर लिया जाता है। इसी प्रकार वृक्षादि के स्थान में कहीं शरीर शब्द का प्रयोग आजावे तो असम्भव वा आश्चर्य नहीं है। परन्तु वृक्षादि स्थावरों को शरीरधारी मानने के विषय में न्याय वैशेषिक शास्त्र का सिद्धान्त विद्वन्मोदतरङ्गिणीनामक ग्रन्थ में ऐसा लिखा है कि—

शरीरता नास्ति महीरुहेषु जीवाश्रयत्वेऽपि विनास्थिमांसैः। चेन्मन्यते केवलजीवयोगात् शरीरतास्तां तदयोनिजेषु ॥१॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अयोनिजं वारिमहीमरुद्वपुर्धरांशसंज्ञ-व्यवहारसाधनम्। न पुण्यपापात्मककार्य-कारणं पुराकृतैः केवलभोगभाजनम्॥ २॥

वृक्षादि स्थावरों में जीवात्मा का निवास होने पर भी हड्डी मांसादि के न होने से उन के स्वरूप को शरीर शब्द से नहीं कह सकते वा वृक्षादि को शरीरधारी नहीं मान सकते। यदि केवल जीवात्मा का योग होनेमात्र से वृक्षादि शरीरधारी माने जावें तो उन का शरीर अयोनिज माना जायगा। स्त्री के गर्भाशय से जिन की उत्पत्ति है वे योनिज शरीर माने जाते हैं। तथा अन्य प्रकार से उत्पन्न होने वालों को अयोनिज कहते हैं॥ शरीर मानने के पक्ष में जल पृथिवी और वायु इन तीन तत्वों के योग से वृक्षादि का अयोनिज शरीर माना जाता और पार्थिव भाग की अधिकता से व्यवहार की सिद्धि के लिये वृक्षादिको दृश्य पदार्थों के अन्तर्गत विषय भी मानना ठीक है। वृक्षादि का अयोनिज शरीर पुण्य पापरूप कार्यों के संचय का कारण नहीं अर्थात् वृ-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदि अपनी विद्यमान दशा में पुण्यपाप कुछ नहीं करते किन्तु पूर्वजन्मों के किये निकृष्ट कर्मों का फल भोगने मात्र के लिये उन का अयोनिज शरीर है॥

प्रश्न—यदि बीज से उत्पन्न हो वह सजीव सचेतन है तो पत्थर वा कङ्कड़ आदि अन्य भी कई वस्तु ऐसे होते हैं जिन का पहिले छोटा बीजरूप टुकड़ा होता है उसी से वे बढ़ते हैं और बहुत बड़े २ हो जाते हैं। तो इस पक्ष में अतिव्याप्ति दोष आ गया इस कारण तुम को चाहिये कि पत्थरादि को भी सजीव वा सचेतन मानो। और जब पाषाणादि भी चेतन हुए तो फिर जड़ किसे कहो गे ?।

इस का उत्तर यह है कि पाषाणादि का सजीव वा सचेतन होना साध्य कोटि में है किन्तु सिद्ध नहीं क्योंकि प्रथम तो बीज से उत्पत्ति होना ही ठीक नहीं जान पड़ता। किसी वस्तु का बढ़नामात्र बीज से उत्पत्ति सिद्ध नहीं कर सकता। अनेक स्थलों में जहां मिट्टी नहीं है वा थोड़ी है वहां बड़े २ ढेर हो जाते हैं अन्यत्र से उड़ २ कर वायुके द्वारा मट्टी चली आती है। पृथिवी के जिस हिस्से में जिस व-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्तु की खानि होती है वहां अन्य वस्तु जो २ कुछ जा पड़ते हैं सब उसी के रूप में बन जाते हैं। जैसे साम्हर लवणकी जहां खानि है वहां जो कुछ पड़ता है सब साम्हर बन जाता है इसी प्रकार जहां पहाड़ों में पत्थर बनने की खानें हैं वहां अन्य वस्तुओं के त्रसरेणु भी पत्थररूप होते रहते हैं। इस कारण पत्थर बढ़ते हैं। यदि इस प्रकार के बढ़ने से जीव होने की शङ्का होती है तो सभी में जीव की शङ्का होना सम्भव है। इस लिये ऐसी शङ्का ठीक नहीं। और द्वितीय कदाचित् कोई पत्थरादि ऐसे हों जैसे वृक्षादि जीवधारी ऋतु, खेत, और जलरूप चार प्रकार की सामग्री से किसी नियत समय तक उत्पन्न होकर सजीव रह कर सूख जावें (मृत होजावें) वा अपनी वर्त्तमानदशा (हालत) को छोड़ जावें तो उनको सजीव मान लेनेमें हमारी कुछ हानि नहीं॥

प्रश्न—क्या घास शाक तरकारी बूटी ओषधि आदि सब ही में जीवका निवास मानोगे ?।

उत्तर—हां ऊपर लिखे अनुसार बीज से उत्पन्न होकर नियत समय तक ठहर कर नष्ट होजाने वाले

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घासादि सभी जीवधारी हैं इस में कुछ सन्देह नहीं।

प्र०—यदि घासादि को पश्वादि न खावें तो कैसे जी सकते हैं। और खावें तो पशुपालने वाले को दोष लगेगा। फिर धर्मशास्त्र में पशुपालन वैश्य का कर्त्तव्य कर्म क्यों ठहराया गया ?। पशुओं का भक्ष्य घासादि बनाया और मनुष्यों को पशुपालनकी आज्ञा दी तो सिद्ध हुआ कि परमेश्वर ही मनुष्यों से पाप कराना चाहता है। ऐसा है तो मनुष्य का अपराध नहीं किन्तु ईश्वर का दोष है॥

उ०—यदि पश्वादि हरी घास न खावें और अनेक प्रकार का भूसा पककर वा सूख जानेपर एकत्र की हुई घास खावें तो जीवित रह सकते हैं। यदि पशुपालने वाला चाहे तो हरी घासादि खिलाये विना अच्छे प्रकार पशु पाल सकता है। और कदाचित किसी देश वा समय में हरित घासादि के बिना पशुपालन नहीं हो सकता हो और पशुपालनवृत्तिको छोड़ भी नहीं सकते तो पशुपालन कर्त्ता को कुछ दोष अवश्य लगेगा। हम पूर्वपक्षी से पूछते हैं कि यदि घासादि को जड़ मानकर इस दोष से तुम किसी प्र·

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार बच भी गये तो संसार के असंख्य कार्य वा व्यवहार ऐसे हैं जिन को किये विना मनुष्य कदापि नहीं बच सकता उन से भी बचने का उपाय कुछ सोचा है ? यदि कोई प्रतिज्ञा करे कि संसार के सब काम चलाता हुआ भी कोई सर्वथा निष्पाप हो सकता है। तो हम प्रतिज्ञा करते हैं कि ऐसी दशा में मनुष्य कदापि सर्वथा निष्पाप नहीं हो सकता। एक२ पग धरने में पाप पुण्य का संचय होता रहता है। चलने फिरने खाने पीने उठने बैठने आदि साधारण व्यवहारों में भी अनेक जीवों का जान कर वा अज्ञान से मरण होता वा उन को कष्ट पहुंचता रहता है। इस से कोई नहीं बच सकता और न उक्त व्यवहार किये विना रह सकता है। इस से यह प्रयोजन नहीं है कि जब नहीं बच सकता तो जानकर भी पाप करने चाहिये। इसी लिये धर्मशास्त्रों में उपाय बतलाये गये हैं कि जहां तक हो सदा पापों से बचने का उद्योग करना चाहिये जहां नहीं बच सकता वहां उस को प्रायश्चित्त बताये गये हैं तथा उस के बदले विशेष पुण्य करने की आज्ञा दी गयी है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और यह बात तो ठीक है कि मनुष्य को पशुपालन की आज्ञा दी गयी और पशुओं का भक्ष्य घासादि परमेश्वर ने बनाया परन्तु यह आज्ञा नहीं दी कि पशुओं का पालन हरित घासादि खिला कर ही करना चाहिये और यदि कहीं कभी हरित घासादि खाये विना पशुओं का निर्वाह नहीं होसक्ता तो जैसे सिंहादि अनेक प्राणियों का निर्वाह किन्हीं जीवों का मांस खाये विना नहीं होता और अनेक मांसाहारी प्राणियों का मांस ही भक्ष्य बनाया प्रतीत होता है क्या यह भी दोष परमेश्वर ही पर तुम लगाओगे ?। हमारे पक्षानुसार तो मनुष्य अपने सुख के लिये जो २ काम करता है उन में यदि उस को कुछ पाप वा दोष लगे वा दुःख मिले तो उस का अपराधी वही बनेगा ईश्वर का इस में कुछ दोष नहीं यह नहीं हो सकता कि भोजन प्राप्ति से होने वाले सुख को हम भोगें और मल संचय से होने वाले दुर्गन्धादि जन्य दुःख का भागी कोई अन्य बने मनुष्य अपने सुख के लिये पशुपालन करता है उस में होने वाले अनिवार्य अपराध वा दुःख का भागी भी वह

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वयं होगा यह निश्चय है कि जो संसारी सुख के लिये भागेगा। उस को कुछ दुःख भी अवश्य प्राप्त होंगे। जब संसारी व्यवहार में रह कर मनुष्य सर्वथा निष्पाप नहीं हो सकता तभी तो हमारे यहां तीसरा, चौथा आश्रम बन सकता है। यदि गृहाश्रम में सब व्यवहार करता हुआ भी निष्पाप हो सके तो फिर वानप्रस्थ संन्यासाश्रम व्यर्थ हो जावें। ईसाइयों के यहां वर्णाश्रम की व्यवस्था नहीं इसी लिये उन के मत में कोई निष्पाप नहीं हो सकता तब विश्वास कर पाप छुड़ाना चाहते हैं जैसे कोई कहे कि मैं संस्कृत पढ़ने के परिश्रम को तो असाध्य समझ कर नहीं कर सकता परन्तु किसी पण्डित पर विश्वास कर लूं कि वह कृपा कर दे तो पढ़ जाऊं जैसे यह विश्वास विना परिश्रम किये तीनों काल में कभी सफल नहीं हो सकता वैसे ही पाप छुटाने का विश्वास निष्फल जानना चाहिये।

अब स्थावर में जीव होने के विषय में वेदादि शास्त्रों के कुछ थोड़े प्रमाण इस लिये लिखते हैं कि जिस से शास्त्र प्रमाण को प्रधान मानने वाले लोगों

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को भी विश्वास हो जावेगा। जो लोग केवल युक्तिको प्रधान नहीं मानते वे कह सकते हैं कि जब तक स्वतः सिद्ध वेद का प्रमाण न मिले तब तक हम वृक्षों में जीव नहीं मान सकते इस लिये प्रथम वेद के मन्त्रों का प्रमाण लिखते हैं—

इदं जनासो विदथ महद्-ब्रह्म वदिष्यति। न तत्पृथिव्यां नो दिवि येन प्राणन्ति वीरु-धः॥ अथर्व० १। ३२। १।

हे मनुष्यो ! यह तुम लोग जानो कि जो सर्वोपरि सत्य श्रेष्ठ वेद कहता है कि वह शक्ति न पृथिवीतत्व में न सूर्यरूप तैजस में है कि जिस से वीरुध् आदि स्थावर जीवित रहते हैं। अर्थात् तैजस वा पार्थिवादि जड़ संसार के किसी पदार्थ में वह चेतनशक्ति नहीं है जिस से जीवित कहे वा माने जाते हैं किन्तु वह जीवरूप चेतन शक्ति वीरुध् आदि स्थावरों में पृथिव्यादि तत्वों से भिन्न ही है॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवलां नघारिषां जीवन्ती
मोषधीमहम्॥ अथर्व० ।८।७।६
जीवं लाति—आदत्तेऽसौ जीवला तां जी-
वन्तीमोषधीमहमस्मा अरिष्टतातये हुव इ-
त्युत्तरेणान्वयः ॥

जीव को अपने में लेने रखने वा स्वीकार करने वाली जीवती प्राण शक्ति को धारण करती हुई ओषधि को मैं अपने अनिष्ट रोगादि जन्य दुःख को निवृत्त करने के लिये चाहता मगाता हूं। वा यों कहो कि ऐसी ओषधि को मनुष्य अपने सुखार्थ उपयोग में लावे।

तथा मनु० अ० १२

शरीरजैः कर्मदोषैर्याति स्थावरतां नरः।
वाचिकैः पक्षिमृगतां मानसैरन्त्यजातिताम्

जो मनुष्य शरीर से होने वाले चोरी हिंसा व्यभिचारादि कामों को प्रबलता से दीर्घ काल तक निरन्तर करता है वह जन्मान्तर में स्थावर योनि को प्राप्त होता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा बड़े २ वाचिक पापों से पक्षि योनि वा हरिणादि मृगों की योनि पाता और मानस पापों से चर्मकार चाण्डालादि नीच जातियों में जन्म लेता है । तथा मनु० अ० १२

स्थावराः कृमिकीटाश्च मत्स्याः सर्पाः सकच्छपाः । पशवश्च मृगाश्चैव जघन्या तामसी गतिः ॥ १ ॥

स्थावर वृक्ष वनस्पत्यादि कीड़ा, चीटा, मछली, सांप, कछुआ, पशु चौपाये और मृगहरिणादि ये सब तमोगुण में निकृष्ट दर्जा के देहधारी हैं । मनुष्यादि की अपेक्षा ये सब एक प्रकार के निकृष्ट हैं परन्तु पशवादि से बहुत नीचे स्थावरों की कोटि है इसी कारण सब से पहिले इन को श्लोक में पढ़ा है । मनु० अ० २१

तृणगुल्मलतानां च क्रव्यादां दंष्ट्रिणामपि क्रूरकर्मकृतां चैव शतशो गुरुतल्पगः ॥१॥

घासादि तृण गुल्म गुच्छा वाले फूलों के पेड़ पौंड़ने वाली लता डांश मशक छिपकली आदि तथा हिंसक म-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नुष्यादि नीचों में गुरु की स्त्री से व्यभिचार करने वाला पुरुष जन्म पाता है। धर्म शास्त्रादि में खोजने से इत्यादि सैकड़ों प्रमाण मिल सकते हैं जिन का नमूना दिखादेना ही बुद्धिमानों के लिये बहुत है। वेद के प्रमाण अत्यन्त स्पष्ट नहीं तथापि स्थावर में जीव का होना अति ही स्पष्ट है। वेद में प्रायः सामान्य वर्णन होता विशेष कर स्पष्टता से वर्णन करने के लिये ही धर्मशास्त्रादि ग्रन्थ बने हैं सो अब यह सिद्ध हो गया कि स्थावर में जीव है उस के लिये वेद तथा धर्मशास्त्र के प्रमाणों का मेल भी मिल गया तथा यही बात युक्ति से भी सिद्ध होगयी तब वेदमतानुयायी महाशयों को निर्विकल्प मान लेना ही उचित है। और इन मनु के प्रमाणों से भी अधिक स्पष्ट प्रमाण के लिये आगे महाभारत के कुछ श्लोक लिखते हैं। महाभारत शान्तिपर्व मोक्षधर्म के अन्तर्गत भृगु भरद्वाज के संवाद में लिखा है किः—

घनानामपि वृक्षाणामाकाशोऽस्ति न संशयः।
तेषां पुष्पफलव्यक्तिर्नित्यं समुपपद्यते ॥१॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊष्मतो म्लायते वर्णं त्वक्फलं पुष्पमेव च।
म्लायते शीर्यते चापि स्पर्शस्तेनात्र विद्यते २
वाय्वग्न्यशनिनिर्घोषैः फलं पुष्पं विशीर्यते।
श्रोत्रेण गृह्यते शब्दस्तस्माच्छृण्वन्ति पादपाः॥
वल्ली वेष्टयते वृक्षं सर्वतश्चैव गच्छति।
नह्यदृष्टेश्च मार्गोऽस्ति तस्मात्पश्यन्ति पा-
दपाः॥ ४॥
पुण्यापुण्यैस्तथा गन्धैर्धूपैश्च विविधैरपि।
अरोगाः पुष्पिताः सन्ति तस्माज्जिघ्रन्ति पा-
दपाः॥ ५॥
पादैः सललिपानाच्च व्याधीनां चापि दर्शनात्
व्याधिप्रतिक्रियत्वाच्च विद्यते रसनं द्रुमे ६
वक्त्रेणोत्पलनालेन यथोर्ध्वं जलमाददेत्॥
तथा पवनसंयुक्तः पादैः पिबति पादपः॥७॥
सुखदुःखयोर्ग्रहणाच्छिन्नस्य च विरोहणात्॥
जीवं पश्यामि वृक्षाणामचैतन्यं न विद्यते॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषार्थः—इस प्रकरण में पहिले यह प्रश्न उठाया गया है कि वृक्षों में जीव और पांच ज्ञानेन्द्रियों की शक्तियां हैं वा नहीं इसी का उत्तर पूर्वोक्त श्लोकों से दिया गया है कि आकाशादि पांचों तत्वों का मेल वृक्षों में है और पांच भूतों से बने पांच ज्ञानेन्द्रियों की शक्तियां भी इन में हैं इसी कारण जीव भी इन में अवश्य मानना चाहिये क्योंकि गुणी के बिना गुणों की स्थिति कहीं भी नहीं देखने में आती। पांच ज्ञानेन्द्रियों की शक्ति जीवात्मा के सहयोगी साधन हैं। जहां जीवात्मा का निवास नहीं वहां ज्ञानेन्द्रियों का कोई काम कदापि नहीं हो सकता तो ज्ञानेन्द्रियों के काम से जीव का होना सिद्ध हो गया। यद्यपि वृक्षों की पिण्डी आदि के सब अवयव सम्मिलित हैं तथापि उन में आकाश तत्व का काम होता अर्थात् आकाश उन के भीतर विद्यमान है क्योंकि फूल फल वृक्षों के भीतर से समय २ पर सदा निकला करते हैं। यदि अवकाश भीतर न होता तो किसी वस्तु का निकलना पैठना नहीं बन सकता। निकलने पैठने का मुख्य हेतु आकाश तत्व ही है। कोई कहे कि ऐसे

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो पत्थर आदि में भी आकाश होना सिद्ध हो सकता है इस का उत्तर यह है कि इस पर हमारा विवाद नहीं कि पत्थर आदि में आकाश नहीं है किन्तु हमारा कहना यह है कि वृक्षों में आकाश का काम जैसे स्पष्ट दीखता है वैसा पत्थर में नहीं। कदाचित् पत्थर में आकाश का होना सिद्ध भी हो जाय तो हमारी कुछ हानि भी नहीं परन्तु आकाशादि का होना पत्थरादि में सिद्ध भी हो जाय तो वे चेतन वा सजीव नहीं हो सकते क्योंकि सजीव होने की सामग्री एक यही नहीं है किन्तु बहुत है जो पूर्व से लिखते आये हैं ॥ १ ॥ वायु और अग्नि तत्त्व भी वृक्षादि में हैं। अग्नि के बढ़ने से वा ग्रीष्म ऋतु में अधिक ताप पहुंचने से उन वृक्षों पर उदासीनता छा जाती है। उन की त्वचा और फलफूल मुरझाय जाते वा गिर जाते हैं इस से मालूम होता है कि वायु का कार्य स्पर्शेन्द्रिय इन में है क्योंकि जिस के स्पर्श इन्द्रिय नहीं उस को बाहरी सरदी गर्मी व्याप्त होकर कुछ बाधा नहीं पहुंचा सकती ॥२॥ वायु अग्नि और विद्युत् की गर्जना के शब्दों से वृक्षों के फल फूल गिर जाते हैं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस से प्रतीत होता है कि वृक्षों में शब्द सुनने के श्रोत्र इन्द्रिय की शक्ति विद्यमान है। क्योंकि श्रोत्र इन्द्रिय के बिना भयङ्कर शब्द का भय किसी के भीतर जाकर कुछ हानि नहीं पहुंचा सकता। जैसे किसी अत्यन्त बधिर मनुष्य को कैसा ही कठोर वा कोमल वचन कहा जाय जिस को वह कान से न सुन पावे तो उसे कुछ भी हर्ष शोक न होगा॥३॥ लता की वेल वृक्षादि पर लिपटती और सब ओर को बराबर चढ़ती जाती है इस से जान पड़ता है कि वृक्षों में देखने की शक्ति है क्योंकि जिस में देखने की शक्ति नहीं वह मार्ग में नहीं चल सकता। यदि कोई कहे कि अन्धे भी तो बिना नेत्रों के मार्ग में चलते हैं। तो इस का उत्तर यह होगा कि वे बुद्धिस्थ नेत्रों से देख कर चलते हैं। नेत्रों की बाहर निकलने वाली शक्ति अन्धे की बुद्धि में आ जाती है। और इन्द्रिय गोलकमात्र बिगड़ जाता है किन्तु इन्द्रियशक्ति नष्ट नहीं होती। और वृक्षादि में भी प्रसिद्ध इन्द्रियों के गोलक हम नहीं ठहराते किन्तु इन्द्रियों की शक्ति के काम उन में दीखते हैं इस कारण इन्द्रियशक्ति उन में मानने की

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवश्यकता है ॥४॥ अच्छे २ शुद्ध सुगन्ध और नाना प्रकार की धूपों से वृक्ष नीरोग और फल फूल देने वाले हो जाते हैं इस से ज्ञात होता है कि उन में सूंघने की शक्ति विद्यमान है। क्योंकि जिस में गन्धग्रहण की शक्ति नहीं उस में सुगन्ध दुर्गन्ध प्रवेश कर कुछ हानि नहीं पहुंचा सकता है ॥५॥ पाद अर्थात् जड़ों से पृथिवी के जल को पीते वा अपने में लेते और वृक्षों को जल के विकार से रोग भी होते दीखते हैं तथा रोगों की ओषधि वा रोग हटाने के उपाय से आराम भी होता दीखता है इस से सिद्ध है कि जिह्वा इन्द्रिय की शक्ति वृक्षों में है। यदि रसग्रहण की शक्ति न हो तो जल का पीना तथा रोग का होना वा रोग की निवृत्ति किसी रसादि के संयोग से होना सम्भव नहीं। पादप शब्द भी संस्कृत वाणी का है उस का अर्थ सर्वसम्मत यही होता है कि "पादैः पिबन्ति ते पादपाः" पगों से जल पीते हैं इस कारण उन का नाम पादप है जैसे छोटी नली रूप मुख से कोई जन्तु ऊपर को जल खींचे वैसे पवनसंयुक्त वृक्ष अपने पगरूप मुख से जल पीते हैं। अर्थात् वृक्ष की जड़ों को उन का मुख समझना चाहिये ॥७॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृक्षादि में सुखदुःख के दीखपड़ने और ऊपर से जड़ छोड़ कर काटडालने पर फिर हो जाने से निश्चय होता है कि वृक्षों में जीव है किन्तु जीव रहित अचेतन वा जड़ नहीं हैं। जैसे किसी मनुष्य को भोजनादि न मिलने वा किसी प्रकार का विशेष कष्ट पहुंचने से मलिन आकृति हो जाती और उदासीनता छाजाती है और उस कष्ट के दूर होने से वहां प्रसन्न आकृति हो जाती उदासीनता भाग जाती है उस से ज्ञात होता है कि इस से इस को दुःख था और अब दुःख निवृत्त हो गया वैसे ही वृक्षों में भी स्पष्ट सुखदुःख के चिन्ह दीखते हैं और सुखदुःख चेतन जीवात्मा के विना होते नहीं इस कारण वृक्षों में जीव का निवास अवश्य मानना चाहिये ॥

अब इस विषय पर और कुछ लिखने की कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। यदि पुनर्वार छपाने समय तक कुछ बढ़ाने की आवश्यकता हुई तो लिखेंगे। इस से अब इस लेख को समाप्त करते हैं ॥

इति ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकों का सूची॥

मनुस्मृतिभाष्य प्रथम जिल्द ३ अध्याय ३) वैराग्यशतक भाषा ।) पुनर्जन्म ≡)॥ यमयमीसूक्त =) आयुर्वेदशब्दार्णव (कोष) ॥=) मनुस्मृतिभाष्य की भूमिका १॥) डाकव्यय =)॥ पुस्तक रायल पुष्ट कागज़ में ३६४ पेज का छपा है ॥ ईश उपनि० भाषा वा संस्कृत भाष्य ≡) केन ।) कठ ॥।) प्रश्न ॥=) मुण्डक ॥।) माण्डूक्य ≡) तैत्तिरीय ॥।) ऐतरेयोपनि० ।=)॥ इन ८ उपनिषदों पर सरल संस्कृत तथा देवनागरी भाषा में टीका लिखी गयी है कि जो कोई एकबार भी इस को नमूना (उदाहरण) मात्र देखता है उस का चित्त अवश्य गड़ जाता है। आठों इकट्ठे लेने वालों को ३।=) ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य ये छः उपनिषद् छोटे गुटकाकार में बहुत शुद्ध मूल भी छपे हैं मूल्य =) तैत्तिरीय, ऐतरेय, श्वेताश्वतर, और मैत्र्युपनिषद् ये चार उपनिषद् द्वितीय गुटका में ≡) गणरत्नमहोदधि १॥) आर्यसिद्धान्त ७ भाग ८४ अङ्क एक साथ लेने पर ४।=) और फुटकर लेने पर प्रति भाग ॥।) ऐतिहासिक निरीक्षण =) ब्राह्ममतपरीक्षा =) स्थावर में जीव विचार -)॥ अष्टाध्यायी मूल ≡) न्यायदर्शन मूल सूत्रपाठ ≡) देवनागरीवर्णमाला)। यज्ञोपवीतशङ्कासमाधि -) संस्कृत का प्रथम पु०)॥। द्वितीय-)। तृतीय =)॥। भ-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तृ हरिनीतिशतकभाषा टीका ≡) गीताभाष्य २।) हिन्दी का प्रथम पुस्तक)॥ द्वितीयपुस्तक पं० रमादत्त कृत ≡) शास्त्रार्थ खुर्जा -) भजन पुस्तकें—भजनामृतसरोवर =) सत्यसङ्गीत)। सदुपदेश)। वनिताविनोद (स्त्रियों के गीत) =) भामिनीभूषण ।) सङ्गीतरत्नाकर =) सभाप्रसन्न ।) सीताचरित्र नाविलप्रथम भाग ॥।) स्वामीजी का स्वमन्तव्यामन्तव्य)॥ नियमोपनियम आर्यसमाज के)। आरती आधा पैसा। आर्यसमाज के नियम ≡)। सैकड़ा २) हज़ार। सत्यार्थप्रकाश २।) वेदभाष्यभूमिका २॥) संस्कारविधि १।) पञ्चमहायज्ञ ≡)॥ आर्य्याभिविनय।) निघण्टु ।=) धातुपाठ ।=) वर्णोच्चारणशिक्षा -) गणपाठ ।-) निरुक्त १) मांसभोजन विचार प्रथम भाग का उत्तर -)॥ द्वितीय भा० =)॥ तृतीय का ≡)। है। भर्तृहरि वैराग्यशतक भाषा मूल्य ।) कन्यासुधार -) वेश्यालीला)॥ प्रश्नोत्तररत्नमाला -) आर्य चर्पटपञ्जरिका)। चाणक्यभाष्य -)। जगद्वशीकरण =)॥ पुत्रकामेष्टिपद्धति मू० =) बालबोध -)। पं० रमादत्त जी का बनाया सजीवन बूटी आल्हा)॥ स्वर्ग में सबजेक्टकमेटी -)॥ अबलाविनय ≡)॥ इत्यादि आर्य धर्म सम्बन्धी अन्य पुस्तक भी हैं बड़ा सूची मंगाकर देखिये॥ भीमसेन शर्मा सरस्वती प्रेस—इटावा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कार क्या हैं ?

ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः
पुस्तक सं० २.१/६३
आगत सं० १५२२६
तिथि० १४.४.२००१
गुरुकुल ग्रन्थालय काँगड़ी.

यङ्गमैञ्ज आर्य्य-समाज
ट्रैक्ट सोसायटी लाहौर।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग २ संख्या १

ओ३म्

संस्कार क्या हैं ?

ट्रैक्ट नम्बर ११

यंगमैन्ज़ आर्य्य समाज ट्रैक्ट सोसायटी
लाहौर.

मूल्य २ आने] मई १९१२ [Price As. 2.

बाम्बे मैशीन प्रैस लाहौर में छपा ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निवेदन

पाठक महाशयों की सेवा में यह निवेदन है, कि श्रीमद् दयानन्द ऐङ्गलो वैदिक कालेज कमेटी की आज्ञानुसार मैं शास्त्रानुसन्धान का काम (Research Work) कर रहा हूं। इसी काम के अन्तर्गत संस्कारों के विषय में भी यथाशक्य अनुसन्धान का काम किया गया है। संस्कार विधि जिन गृह्य सूत्रादि के आधार पर लिखी गई है, उन सब की देख भाल करके संस्कार विधि के ऊपर यह एक व्याख्या लिखी गई है। संस्कार विधि की व्याख्या की आवश्यकता बहुत बड़ी देर से समझी जारही है। अतएव इस व्याख्या का इस समय प्रकाशित होना अतीव उपयुक्त होगा॥

इसमें मन्त्रों के पते और अर्थ भी दिये गए हैं और विधि भी बड़ी स्पष्ट कर दी गई है, संस्कार विधि में जहां लेखक भ्रम से विधि में त्रुटि हुई है, वह ठीक कर दी गई है, और जो मन्त्र बराबर अशुद्ध छपते चले आरहे हैं, उनका पाठ शोध दिया है। इससे इन पुस्तकों द्वारा संस्कार कराने में भी बड़ा सुभीता होगा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और व्याख्यान भी साथ २ विदित होसकेगा। यद्यपि यह सब कुछ पूरे परिश्रम से लिखागया है, तथापि संस्कारों के विषय में नया नया अनुसन्धान बहुत काल बराबर होता ही रहेगा, और बहुत सी बातें ऐसी भी हैं, जिनका अभिप्राय अभी स्पष्ट नहीं होसका॥

इस पुस्तक में संस्कारों की भूमिका ही दीगई है इससे आगे क्रमशः सारे संस्कार एक २ करके छपेंगे॥

राजाराम,

२० वैशाख सं० १९६९

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ संस्कारों की भूमिका ॐ

पं० राजाराम जी प्रोफैसर लिखित।

(कर्म और उसका फल)

यह सारा विश्व दिन रात कर्म में लगा रहता है। इस कर्म का ही यह फल है, कि इस में जीवन है, सौन्दर्य्य है और प्रकाश है। यदि इस में कर्म न होता तो न इस में जीवन होता, न सौन्दर्य्य होता, न प्रकाश होता। न कुछ भोग्य होता, न कोई भोक्ता होता। और यदि आदि में ही कर्म न होता। तो यह विश्व उत्पन्न ही न होता। अतएव कर्म्म ही इस जगत की सारी महिमा का हेतु है॥

वेद का उपदेश।

जब इस जगत में कर्म ही कर्म हो रहा है, तो यहां वही महान् हो सकता है जो कर्म में महान् हो। अतएव भगवान् वेद का उपदेश है—

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतः॰ समाः।

(यजुर्वेद ४०–२)

(हे मनुष्य !) कर्मों को करता हुआ ही यहां सौ वर्ष जीने की इच्छा कर।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्म के चार भेद ।

कर्म चार प्रकार का होता है उत्पत्ति, आप्ति, संस्कार और विकार ।

उत्पत्ति कर्म—उत्पन्न करना वा बनाना जैसे अनाज का उत्पन्न करना और बर्तनों का बनाना ।

आप्ति कर्म—प्राप्त करना, जैसे खान में से सुवर्णादि धातुओं को निकालना ।

विकार कर्म—विकार के दो भेद हैं, रूपान्तर करण और विनाश ।

रूपान्तर कर्ण—दूसरे रूप में बदल देना जैसे दूध को दही के रूप में वा लोहे को शस्त्र अस्त्र और यन्त्रों के रूप में ।

विनाश—Decompose जैसे लकड़ी को जला देना

संस्कार कर्म—किसी विद्यमान वस्तु को उत्तम बनाना उसका संस्कार कहलाता है* ।

संस्कार कर्म दो प्रकार से होता है, जैसाकि श्री शंकराचार्य्य लिखते हैं:—

---

* नोट—जिसका संस्कार किया जाय उसे संस्कार्य कहते हैं, और करने वाले को संस्कर्त्ता ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कारोहि गुणाधानेन वा स्याद् दोषायनयेन वा ।

अर्थ—संस्कार गुणों के डालने से होता है; वा दोषों के दूर करने से ।

गुणों का डालना ।

जैसे तेल को फूलों की बास देकर सुगन्धित बनाना ॥

दोषों का हटाना—जैसे चूने से शीशे पर के मैल को दूर करना । इन दोनों का क्रमशः **आधान** और **शोधन** नाम है ।

संस्कार की विशेष व्याख्या ।

इस तरह संस्कार से दो लाभ होते हैं, शोधने से संस्कार्य्य के बाहरी मैल दूर होजाते हैं, और वह शुद्ध (खालिस) बन जाता है । और आधान से उस में एक और नया बल आ जाता है । यह दोनों ही संस्कार हम अपने छोटे २ कार्यों में भी करते रहते हैं । स्त्रियें पकी हुई रोटी को तवे से उतार कर चूल्हे में सेकती हैं, इस से उस पर कुछ भस्म लग जाती है, फिर वह रोटी को वस्त्र से पोंछकर घी से चुपड़ देती हैं ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोंछने से उसका शोधन करती हैं और चुपड़ने से नये गुण का आधान।

शोधन से तो उसका बाहर से आया दोष दूर होता है, और अब वह शुद्ध हुई रोटी अपना पूरा बल देती है। और आधान से उसकी शक्ति और भी बढ़ जाती है। चुपड़ी रोटी अनचुपड़ी से अधिक बुद्धि और अधिक पराक्रम देती है। इसी तरह पानी का अर्क खींचने से पानी में मिले हुए बाहर के दोष सर्वथा दूर होजाते हैं। और अर्क खींचा हुआ पानी दूसरे पानी की अपेक्षा कई गुणा अधिक बल बुद्धि और पराक्रम का देने वाला बन जाता है। यह उस का शोधन संस्कार है। पर जब उस में गुलाब के फूल डालकर अर्क खींचा जाता है तो उस में एक नया गुण आ जाता है और अब वह निरे अर्क से भी अधिक गुणकारी बन जाता है। वैद्य लोग उसको अन्दर की जमी हुई मलों को उखाड़ने के लिये वर्तते हैं॥

संस्कार की व्यापकता।

संस्कार कर्म ऐसा व्यापक है कि हम अपने रहने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के स्थान का अपने पहिनने के कपड़ों का, अपने बर्तने के बर्तनों और दूसरे सामान का, अपने खाने पीने की वस्तुओं का और अपने पालतू सारे पशुओं का संस्कार करते हैं। जिस पुरुष के पास जितनी संस्कृत वस्तुयें हैं, उतना ही वह सभ्य है, जितनी असंस्कृत हैं उतना ही वह जङ्गली है।

मनुष्य के लिये संस्कार की आवश्यकता।

जिस तरह और सब वस्तुओं का संस्कार होता है, और संस्कार से ही उनका मूल्य और आदर बढ़ जाता है इसी तरह मनुष्य का भी संस्कार होता है। संस्कार से ही उस का भी मूल्य और आदर बढ़ता है।

मनुष्य में संस्कार का बहुत बड़ा प्रभाव।

संस्कार का इतना बड़ा प्रभाव होता है कि एक ही जाति का फल जब उसके बीज पर संस्कार किया जाता है, तो वह अपनी जाति के दूसरे फलों से रंग में आकार में स्वाद में कई गुणा बढ़ जाता है। इसी तरह पशुओं के मूल्य में भी बहुत बड़ा अन्तर आजाता है। पर मनुष्य में तो संस्कार का इतना बड़ा प्रभाव होता है कि जहां एक पुरुष १०) में भी महंगा जचता है, वहां दूसरा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करोड़ों से भी नहीं मिलता है। और एक इतना महान् हो जाता है कि उसका मूल्य डाला जा ही नहीं सक्ता, यह सब संस्कारों का प्रभाव होता है, नहीं तो मनुष्य २ में कोई भेद नहीं ॥

मनुष्य के लिये संस्कारों का नियत करना।

ऋषियों ने जब इस बात को देखा कि हर एक अप्राणी और प्राणी संस्कारों के होने से बहुमूल्य बन जाता है, और मनुष्य में तो उस का सब से विलक्षण फल होता है, तो उन्होंने मनुष्य के जीवन को पूर्ण शक्तिमान् बनाने के लिये संस्कार नियत किये और मनुष्य को महान् बनाने के लिये जहां तक संस्कार से सहायता ली जा सकती थी, ली। अतएव न केवल उत्पन्न हुए मनुष्य का संस्कार नियत किया, किन्तु उससे पूर्व माता के गर्भ में और उससे भी पूर्व माता पिता के अलग २ देह के अन्दर रज वीर्य रूप में ही उनका संस्कार नियत किया। जिस से कि प्रथम तो उसकी उत्पत्ति ही असाधारण हो और फिर उस असाधारण पुरुष को फिर नये संस्कारों से और भी असाधारण बना दिया जाय।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एस संस्कारों के नियत करने में उन्होंने पदार्थविद्या के अनुसार वेद से सहायता ली। अतएव यह संस्कार वैदिक संस्कार कहलाते हैं॥

नियत वैदिक संस्कारों का फल।

पूर्व लिख आये हैं, कि संस्कार का फल संस्कार्य में से दोष हटाकर उसको शुद्ध और नये गुणों के उत्पन्न करने से उसकी शक्ति को बढ़ाना है, यही फल इन नियत संस्कारों से मनुष्य के लिये अभिप्रेत हैं॥

जैसाकि भगवान् मनु लिखते हैं:—

वैदिकैः कर्मभिःपुण्यैर्निषेकादि द्विजन्मनाम्।
कार्यः शरीर संस्कारःपावनः प्रेत्य चेह च॥२६
गार्भैर्होमैर्जातकर्मचौड़मौञ्जीनिबन्धनैः।
बैजिकं गार्भिकं चैनो द्विजानामपमृज्यते॥२७
अध्याय २॥

वैदिक पवित्र कर्मों से द्विजातियों का गर्भाधानादि शरीर संस्कार करना चाहिये, जो इस लोक और परलोक में पवित्र करने वाला है॥ २६॥ गर्भ सम्बन्धी (अर्थात गर्भाधान पुंसवन और सीमन्तोन्नयन सम्बन्धी) होमों से और जातकर्म चूड़ाकर्म

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और उपनयन से द्विजों का वह दोष जो बीज वा गर्भ से आया है दूर होजाता है ॥२७॥

इन दोनों श्लोकों में से दूसरे में संस्कार की शोधन शक्ति बतलाई है। कि मनुष्य के शरीर में जो पैतृक (मौरूसी) दोष आये हैं, वह दूर होजाते हैं। और पंहिले श्लोक में यह बतलाया है कि यद्यपि यह संस्कार शरीर के होते हैं, पर इन से शरीर और शरीर में रहने वाला आत्मा दोनों शुद्ध होते हैं। इस लिये संस्कारों की शुद्धि का फल न केवल इस लोक में अपितु परलोक में भी मिलता है। यह इसलिये होता है, कि शरीर द्वारा आत्मा का भी संस्कार होता है।

संस्कार यद्यपि दोनों प्रकार का होता है, शोधन और आधान, पर आत्मा का संस्कार केवल शोधन ही है, आधान नहीं, आत्मा में कुछ डाला नहीं जा सकता उसको शुद्ध कर दो, उस पर जो मैल लगा है, उसको धो डालो, बस इतना ही तुम्हारा काम है, फिर उस में बल सब प्रकार का अपने आप इतना है कि उस में बाहर से किसी बल के डालने की आवश्यकता ही नहीं, और अवकाश भी नहीं। उसका बल थोड़ा इसलिये है कि उस पर मैल है। मैल को धोडालो।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बल इतना है, कि उसका पारावार नहीं क्योंकि वह बल के उस बड़े स्रोत के साथ मिला हुआ है जो इस सारे ब्रह्माण्ड को थामे हुए है। यह उस में लीन होकर उसके सारे बल को अपना बना लेता है, तब इस की शक्ति को कौन रोक सकता है। इसीलिये संस्कार का काम भगवान मनु ने पवित्र कर देना बतलाया है, आगे सब कुछ अपने आप होजाता है। क्योंकि जो कुछ अपने स्वरूप से बढ़कर ग्रहण करना है वह अपने अन्तर्यामी से ही ग्रहण करना है॥

संस्कार आरम्भ से समाप्ति तक यथा विधि पूरा किया हुआ ही पूरा फलता है।

यह याद रक्खो कि संस्कार का पूर्ण फल उसी समय होता है, जब यह पूर्ण विधि से पूर्ण भी किया जाये। कई एक अवस्थाओं में लोग संस्कार के आरम्भ को ही पूरा समझ लेते हैं। जैसे वेदारम्भ संस्कार वेद पढ़ने के लिये है अतएव उसका आरम्भ वेदारम्भ सम्बन्धी होम से होता है, पर समाप्ति उस की उस समय होती है जब पुरुष पूर्ण विद्वान् और बलवान हो जाता है। जिस के पीछे उसका समावर्तन

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कार होता है। और वह स्नातक कहलाता है। इतने समय तक वह शास्त्रानुसार तपस्या का जीवन बिताता है। और विद्याऽध्ययन में पूर्ण परिश्रम करता है। इतना काम यदि यथाविधि पूर्ण किया जाता है तो वेदारम्भ संस्कार पूर्ण होता है। और यदि वेदारम्भ संस्कार का होम करके और गायत्री मन्त्र का उपदेश करके ही छोड़ दिया जाता है तो वह पूरा संस्कार नहीं है। यही हेतु है कि लोग वेदारम्भ करते हुए भी उसके पूर्ण फल के भागी नहीं बनते हैं। पूर्ण फल लन के लिये संस्कार को शास्त्रानुसार पूर्ण भी करना चाहिये ॥

संस्कार की इतिकर्तव्यता।

संस्कार किसतरह करना चाहिये, इसके लिये आचार्यों ने जो पद्धतियां बांधी हैं, उनके अनुसार करना चाहिये। आजकल प्रायः लोग इसकी परवाह नहीं करते, यह उनकी वहुत बड़ी त्रुटि है। जब शास्त्र के अनुसार कर्म ही न किया गया, तो फिर पूरा फल मिलने की क्योंकर आशा होसक्ती है। इसलिये संस्कार बड़ी श्रद्धा से पूर्ण इतिकर्तव्यता के साथ करना चाहिये। किसी यन्त्र के छोटे बड़े पुर्ज़े सब उपयोगी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होते हैं और अपना २ नियत प्रयोजन रखते हैं उनमें से हरएक पुरज़े से जिस विधि से जो काम लेना चाहिये, उसी विधि से वही काम लेने से वह यंत्र उत्तम काम करता है। इसके विपरीत किसी पुरज़े को निकाल देने से वा उसकी नियत विधि के अनुसार काम न लेने से काम पूरा नहीं होता, वा अच्छा नहीं होता वा यंत्र बिगड़ जाता है। इसीलिये किसी इञ्जन को चलाने के लिये कोई सुशिक्षित इंजीनियर नियत किया जाता है, जोकि उसके पुरज़े के प्रयोजन को समझता है। हां दूसरे उस पर यह विश्वास करते हैं, कि इसका हरएक पुरज़ा जहां जिस रीति से रक्खा गया है, वहीं उसी रीति से रहना चाहिये। ठीक इसीतरह कर्मकाण्ड के यंत्र को चलाने वाले ऋषियों ने हरएक कर्म का जो २ अङ्ग जिस रीति पर जहां नियत किया है, उस उस रीति पर वहीं २ पूरा होना चाहिये। जो इसको उलट पलट करता है, वह यंत्र के पुर्ज़ों को उलट पलट करने की तरह इसके अङ्गों को उलट पलट करने से सफल नहीं होता है वा उलटा हानि उठाता है अतएव श्री कृष्ण ने अर्जुन को कहा है॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यः शास्त्र विधि मुत्सृज्यवर्तते काम कारतः । न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परांगतिम् ॥ २२ ॥

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्य व्यस्थितौ । ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि ॥ २३ ॥ गीता अध्याय १६

अर्थ—जो शास्त्र की विधि को छोड़कर अपनी इच्छा से बर्तता है, वह न सिद्धि को प्राप्त होता है न सुख को न परमगति को ॥ २३ ॥

इसलिये कार्य और अकार्य (करने और न करने योग्य) की व्यवस्था में शास्त्र तेरे लिये प्रमाण है। शास्त्र विधि से बतलाया हुआ जानकर तुझे इस लोक में कर्म करना चाहिये ॥ २४ ॥

संस्कार कराने वाले।

गृह्य सूत्रों के अनुसार कई संस्कारों में तो यजमान आपही सारा कृत्य करता है। और आपही मन्त्र पढ़ता है, ब्रह्मा दक्षिण की ओर बैठा हुआ उस सारे कर्म पर दृष्टि रखता है, और मन से मन्त्रोक्त देवता

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और उससे फल प्राप्ति का चिन्तन करता है । और कई संस्कारों में ब्रह्मा के साथ यजमान को कर्म कराने वाला एक दूसरा आचार्य होता है । आचार्य और ब्रह्मा तो पूर्ण विद्वान् और धर्मात्मा होने ही चाहियें, इसमें कोई सन्देह नहीं।पर गृह्य सूत्रों के अनुसार यजमान भी विद्वान् होना चाहिये । जो इति कर्तव्यता को समझता हो, और वेदवेत्ता हो । इसीलिये ही सूत्र ग्रन्थ पढ़े लिखे तीनों वर्णों को ही संस्कारों में अधिकार देते हैं पर श्रीस्वामी जी महाराज संस्कार विधि में ऋत्विजों के विषय में यह लिखते हैं ॥

ऋत्विजों का लक्षण—"अच्छे विद्वान् धार्मिक, जितेन्द्रिय कर्म करने में कुशल, निर्लोभ, परोपकारी दुर्व्यसनों से रहित, कुलीन, सुशील, वैदिक मत वाले वेदवित् एक दो अथवा चार (ऋत्विजों) का वरण करें। जो एक हो, उसका पुरोहित, और जो दो हों तो ऋत्विक, पुरोहित, और तीन हों तो ऋत्विक, पुरोहित और अध्यक्ष, और जो चार हों, तो होता अध्वर्यु उद्गाता और ब्रह्मा (नाम हैं) । इनका आसन वेदी के चारों ओर—अर्थात् होता का वेदी से पश्चिम आसन

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्व मुख, अध्वर्यु का उत्तर आसन दक्षिण मुख, उद्गाता का पूर्व आसन पश्चिम मुख, और ब्रह्मा का दक्षिण आसन उत्तर में मुख होना चाहिये। और यजमान का आसन पश्चिम में और वह पूर्वाभिमुख अथवा दक्षिण में आसन पर बैठकर उत्तराभिमुख रहे" ॥

यहां श्री स्वामीजी ने जो ऋत्विजों के लक्षण लिखे हैं, उन पर विशेष ध्यान देना चाहिये। ऐसे पूर्ण विद्वान् सरल हृदय सच्चे विश्वासियों को ही यजमान इस बात के लिये प्रेरे, कि वह कुदरत में बसे हुए अन्तर्यामी परमात्मा की वेद मन्त्रों द्वारा महिमा गावे, और उस अधिपति से यजमान के लिये, उसके परिवार के लिये, और सब के लिये स्वस्ति, शान्ति और वृद्धि मांगे ॥

अब यजमान के विषय में श्री स्वामी जी यह लिखते हैं—"सब संस्कारों में मधुर स्वर से मन्त्रोच्चारण यजमान ही करे। न शीघ्र न विलम्ब से उच्चारण करे, किन्तु मध्य भाग जैसा, कि जिस वेद का उच्चारण है वैसा करे। यदि यजमान न पढ़ा हो, तो इतने मन्त्र तो अवश्य पढ़ लेवे। यदि कोई कार्य कर्ता जड़ मन्दमति काला अक्षर भैंस बराबर जानता हो, तो वह शूद्र है,

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात् शूद्र मन्त्रोच्चारण में असमर्थ हो, तो पुरोहित और ऋत्विज् मन्त्र उच्चारण करें, और कर्म उसी मूढ़ यजमान के हाथ से करावें ॥

इस कथन से श्री स्वामीजी महाराज का यह आशय पाया जाता है कि वेद का जानना और वैदिक कर्मों को करना हरएक मनुष्य के लिये अत्यावश्यक है। क्योंकि यह उसका धर्म है। पर यदि कोई पुरुष वेद नहीं पढ़ा, तथापि उसको कर्म का त्याग नहीं करना चाहिए। क्योंकि कर्म अवश्य फलता है, हां विद्या के साथ कियां हुआ अधिक फल देता है, जैसा कहा है :—

उभौ कुरुतो, यश्चैतदेवं वेद, यश्चन वेद। नाना तु विद्या चाविद्या च। यदेव विद्यया करोति श्रद्धयोपनिषदा, तदेव वीर्यवत्तर भवति।

(छान्दोग्य उप०)

कर्म दोनों ही करते हैं. जो इसको ठीक २ जानता है, और जो नहीं जानता है, पर विद्या और अविद्या भेद रखती हैं, जो विद्या श्रद्धा और उपनिषद् (रहस्य ज्ञान) के साथ किया जाता है, वही अधिक शक्तिवाला होता है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिये यजमान को अवश्य विद्यावान् होना चाहिये। शास्त्र की मर्यादा है, " विद्वान् यजेत विद्वान् याजयेत् " विद्वान् यज्ञ करे विद्वान् यज्ञ कराए। पर संस्कारका त्याग किसी अवस्था में न करे, चाहे एक अक्षर भी न पढ़ा हो। कर्म का प्रधान रखकर भी श्रीस्वामीजी का अन्तरीय अभिप्राय यह अवश्य था, कि कोई भी पुरुष मनुष्य जन्म में आकर वेद ज्ञान के अमृत से खाली न रहे, इसलिये अनपढ़ पर अधिक आक्षेप भी किया है॥

उपस्थित कर्म में लवलीन होना।

जो कर्म किया जारहा है, उसमें कराने करने और देखने वालों को ऐसा लवलीन होजाना चाहिये। कि उपस्थित कर्म के सिवाय वृत्ति कहीं न दौड़े, इससे कर्म का फल बढ़ता है। अतएव श्रीस्वामीजी लिखते हैं- " इन ऋत्विजों को सत्कार पूर्वक आसन पर बैठाना और वे प्रसन्नता पूर्वक आसन पर बैठें और उपस्थित कर्म के विना दूसरा कर्म वा दूसरी बात कोई भी न करे ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामान्य विधि।

(१) जब कभी कोई नैमित्तिक होम करना हो, तो यह विधि सबसे पहिले करनी चाहिये। संस्कारों में भी सभी में यह विधि व्याहृत्याहुतियों तक ठीक इसी क्रम से पहिले करली जाती है। व्याहृतियों से परली आहुतियों के क्रम में तो भेद होजाता है, परप्रायः आहुतियें यह भी दीजाती हैं। इसलिये इसका नाम सामान्य-विधि है। और इसीलिये इसको अलग सब से पहिले रक्खा है॥

(२) यजमान कार्यारम्भ से पूर्व ऋत्विजों को वरण करता है:—

यजमान—ओ३म्—आ वसोः सदने सीद= यज्ञ के स्थान पर बैठिये॥

ऋत्विज्—ओ३म्—सीदामि=बैठता हूं॥

यजमान—ओ३म्—अहमद्योक्तकर्मकरणाय भवन्तं वृणे=मैं आज अमुक कर्म करने के लिये आपको वरता हूं॥

ऋत्विज्—ओ३म्—वृतोऽस्मि=मैं स्वीकार करता हूं॥

(३) यह ऋत्विज् एक दो तीन वा चार यथा सम्भव वा यथाशक्ति होसक्ते हैं॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) यजमान सदा पश्चिम में पूर्वाभिमुख बैठे, उसके साथ उसके दाएं हाथ पत्नी बैठे ॥

(५) ब्रह्मा दक्षिण में उत्तराभिमुख बैठे। शेष ऋत्विज् पूर्व उत्तर में बैठें ॥

(६) आचमन विधि—यजमान और ऋत्विज् इन तीन मन्त्रों से पहले तीन आचमन करें :—

ओं अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ।

अर्थ—तू अमृत का फर्श है * (तुझपर जीवन की स्थिति है) स्वाहा ॥

ओं अमृतापिधानमसि स्वाहा ।

अर्थ—तू अमृत (जीवन) का ढकना है * स्वाहा ॥

---

* अमृत = जीवन। जीवन के प्रादुर्भाव में और जीवनकी स्थिति में जल प्रधान हेतु हैं, इसीलिए जीवन जल का नाम भी है। सो जल जीवन का फर्श है, इस पर जीवन खड़ा होता है। और यह ढकना है अर्थात् जीवनको ढांपे रखता है। क्योंकि जलों के यथाविधि प्रयोगमें रोग दूर होते हैं स्वास्थ्य बढ़ता है, और आयु बढ़ता है जलों की इस शक्ति का वर्णन ऋग्वेद में इसतरह पर है :—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ॥

अर्थ—तू सचाई, यश और शोभा है *, मुझमें शोभा आश्रय लेवे, स्वाहा ॥

अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजमपामुत प्रशस्तये ।
देवा भवत वाजिनः (ऋग्वेद १।२३।१९)

अर्थ—जलों के अन्दर अमृत (जीवन) है जलों में औषध है, सो हे विद्वानों जलों की उत्तमता के लिए वेगवाले बनो " जलों में सब रोगों की औषध है अर्थात् जल के उचित प्रयोग से सब रोग निवृत्त हो सकते हैं। आज कल पश्चिमी जल चिकित्सक (Hydropathists) भी यह कहते हैं, कि यदि किसी रोग की चिकित्सा जल से न होसके, तो निश्चय जानो कि किसी भी औषध से नहीं हो सकेगी। जलों में अमृत है अर्थात् जलों के उचित प्रयोग करने वाला दीर्घजीवी होता है जैसा कि इस मन्त्र में कहा है :—

आपः पृणीत भेषजं वरूथं तन्वे मम
ज्योक् च सूर्यं दृशे (ऋग्वेद १।२३।२१)

अर्थ—हे जलो (मेरे शरीर में) ऐसा औषध भरदो, जोकि मेरे शरीर के लिए कवच (जिरह बख़्तर) हो, जिससे कि मैं चिरकाल तक सूर्य को देखूं ॥

* जल मनुष्य में ईश्वर प्रेम, धर्म्मानुष्ठान, मधुर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंगन्यास ।

(७) आचमन के पीछे अङ्गन्यास करे । दाएं हाथ की अंगुलियों से जल को छू छूकर इन छः मन्त्रों से

सत्यभाषण आदि दिवा प्रकृति के जनक होते हैं जैसा कि :—

इदमापः प्रवहत यत्र किञ्च दुरितं मयि ।
यद्वाहमभिदुद्रोह यद्वा शेप उतानृतम् (१।२३।२२)

हे जलो इसको बहादो, जो कुछ मुझमें दुर्गुण है, वा जो कुछ मैंने द्रोह किया है, वा अप्रिय कहा है अथवा झूठ बोला है (अर्थात् इनके संस्कारों को हमारे हृदय से मिटादो) इस वर्णन में जल के अन्तर्यामी परमात्मा को मुख्य करके अन्तःकरण से खोटे संस्कारों के मिटाने की प्रार्थना है, केवल भौतिक जल से नहीं ॥

श्रोः=शोभा, कान्ति, तेज, यह शरीर में जलस्थ अग्नि (Heat) से उत्पन्न होता है जैसा कि :—

आपो अद्यान्वचारिषं रसेन समगस्महि ।
पयस्वानग्न आगहि तं मा सं सृज वर्चसा ॥
ऋग्वेद (१ । २३ । २३)

अर्थ—जलों का अब हमने उचित प्रयोग किया है रस से हम संगत हुए हैं । जल से मिले हुए हे अग्नि आओ, और मुझे तेज से युक्त करो ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंङ्गों को स्पर्श करे। जो अङ्ग दुहरे हैं (जैसे आंखें) उनमें से पहले दाएं फिर बाएं को ॥

ओ वाङ्ग म आस्येऽस्तु=मेरे मुख में बाणी हो (इस से मुख को) ॥

ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु=मेरे नथनों में प्राण हो (इससे नासों को) ॥

ओं अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु=मेरे नेत्रों में दृष्टि हो (इस से नेत्रों को) ॥

ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु=मेरे कानों में सुनने की शक्ति हो (इमसे कानों को) ॥

ओं बाव्होर्मे बलमस्तु=मेरी भुजाओं में बल हो (इस से भुजाओं को दोनों हाथों से एक साथ स्पर्श करे) ॥

ओं ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु=मेरी रानों में बल हो (इससे रानों को) ॥

ओं अरिष्टानिमेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु।

मेरे सारे अङ्ग मेरे शरीर के साथ नीरोग हों,

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(इस मन्त्र से सिर से लेकर पाओं तक सारे अङ्गों का स्पर्श करे)॥

अग्न्याधान।

(८) अब समिधाओं को कुण्ड में चिनकर घृत का दीपक जला उस दीपक से "ओं भूर्भुवः स्वः" पढ़कर कर्पूर को जलाकर पात्र में रक्खे, वा उक्त मन्त्र पढ़कर किसी द्विज के घर से अग्नि लावे॥

(९) और इस मन्त्र से कुण्ड में स्थापन करे :-

ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा। तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे। (य० ३।५)

अर्थ-तू जो महिमा से द्यौ की तरह और फैलाव से पृथिवी की तरह है उस तुझ की पीठपर हे देवयजनि!*

---

* देवयजनी पृथिवी वेदी है, जिस पर देवताओं के लिए यज्ञ किया जाता है। द्यौ की महिमा प्रकाश से है, और पृथिवी सब चराचर का आश्रय है। वेदी भी यज्ञ के द्वारा जगत् में ज्ञान का प्रकाश लाती है और वृष्टि आदि द्वारा सब चराचर को पोषण करती है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पृथिवी ! अन्न खाने के लिए (होमे हुए) अन्न के खाने वाले अग्नि को स्थापन करता हूं ॥

(१०) फिर उस स्थापित अग्नि पर छोटी २ समिधा, वा कपूर रखकर अथवा पंखे के वायु से प्रज्वलित करता हुआ यह मन्त्र पढ़े :–

ओं उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते सꣳसृजेथा मयं च । अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत।

(यजु० १५ । ५४)

अर्थ–हे अग्ने ! सावधान हो, जाग, तू और यह (यजमान) दोनों मिलकर इष्ट और पूर्त * को पूरा

अन्न खाने से तात्पर्य्य स्वस्थ रहने और दीर्घजीवी होने से है ॥

* कर्म्मों के मुख्य दो भेद हैं इष्ट और पूर्त। इष्ट वह हैं जिनकी इतिकर्त्तव्यता वेदमन्त्रों से होती है जैसे अग्निहोत्र। पूर्त वह दूसरे सर्वोपकारी कर्म्म हैं, जिनकी आज्ञा वेद में है, पर विधि लौकिक होती है, जैसे सर्व साधारण के लिए बाग, कुयें वा तालाब लगवाना, पाठशालाएं, पुस्तकालय और अनाथालय स्थापन

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करो। और उस उत्तम मिल बैठने के स्थान पर हे सारे देवताओ तुम और यजमान बैठो *

(११) फिर चन्दन वा ढाक आदि की आठ २ अंगुल की तीन समिधाएं घी में डुबाकर उनमें से एक इस मन्त्र से अग्नि में डाले :-

ओं अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्तेने-ध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा, इदमग्नये जातवेदसे इदं न मम ॥ १ ॥

करना। इनमें से इष्ट कर्म्म तो अग्नि में ही किए जाते हैं, पर पूर्त कर्म्मों के आरम्भमें भी होम करनेका विधान इससे पाया जाता है ॥

* यज्ञ में यजमान और ऋत्विजों के सङ्कल्प बल से और यथाविधि होम करने से अधिदैवत वा अध्यात्म शक्तिएं प्रकट होती हैं, इसलिए यजन स्थान यजमान और देवताओं के मिल बैठने का स्थान है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ—हे जातवेदस * (हे अग्ने) यह समिधा तेरा शरीर है, इससे तू चमक और बढ़ और हमें चमका और बढ़ा प्रजा (पुत्रादि) से, पशुओं से, वेद के तेज से, और खाने योग्य अन्न से। स्वाहा † यह जातवेदस अग्नि के लिये है, यह मेरा नहीं † ॥

१२—अगले दो मन्त्रों से दूसरी समिधा अग्नि में डाले ॥

ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्। आस्मिन् हव्या जुहोतन (स्वाहा इदमग्नये इदं नमम)। ओं सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जात

---

* जातवेदस, जिससे धन उत्पन्न हुआ है। रत्न आदि की उत्पत्ति में हेतु भूत अग्नि को जातवेदस कहा है। स्वाहा, शुभ आहुति अर्थात् यह आहुति शुभ हो।

† स्वाहा के पीछे "इदं न मम" तक त्याग कहलाता है, जहां यह त्याग पढ़ा हो वहां स्वाहा पर आहुति नहीं देनी चाहिए, किन्तु त्याग की समाप्ति पर देनी चाहिए।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेदसे स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे, इदं न मम ॥

अर्थ–समिधा से अग्नि का सेवन करो घी से अतिथि * को प्रज्वलित करो, और इसमें हव्य (होम के योग्य नाना विधि पदार्थों) को होमो ॥

अच्छी तरह प्रज्वलित हुए प्रकाशमान जातवेदस् अग्नि के लिये तीव्र †घृत होमो ॥

(१२) अगले मन्त्र से तीसरी समिधा डाले ।

ओं तंत्वा समिद्भिरंगिरो घृतेन वर्धयामसि । बृहच्छोचा यविष्ठय स्वाहा । इदमग्नयेऽङ्गिरसे इदं न मम ॥

अर्थ–उस तुझको हे अङ्गिरः ! हम समिधाओं से

---

* अग्नि को अतिथि कहने से अतिथिवत् आदरणीय बतलाया है ।

† इस से यह विधि निकलती है, कि प्रज्वलित अग्नि में ही आहुतियां डालनी चाहियें, बुझी हुई में नहीं, और तीव्र घृत अर्थात् शुद्ध पवित्र और पिघला हुआ घृत ही डालना चाहिये ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और घी से बढ़ाते हैं, हे युवतम तू ज़ोर से चमक * ॥

१४–फिर पांच आहुतियां आज्यकी इस पूर्वोक्त मन्त्र से देवे ॥

ओं अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्तेने ध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा इदमग्नये जातवेदसे, इदं न मम ।

१५–इसके पीछे इन मन्त्रों से कुण्ड के चारों ओर जल छिड़के :–

ओ३म् अदितेऽनुमन्यस्व (इस से दक्षिण में)

अर्थ–हे अदिति (हृदय की अधिष्ठात्री शक्ति) स्वीकार कर ॥

ओ३म्–अनुमतेऽनुमन्यस्व (इससे पश्चिम में)

अर्थ–हे अनुमति (पूर्णमासीकी अधिष्ठात्री शक्ति) स्वीकार कर ॥

---

* अङ्गिरः = गतिवाला, वा अङ्गों का सार । अग्नि से ही गति होती है, और अङ्गों में जीवन उसी से है । युवतम = सब से बढ़कर जवान । उमङ्गों से भरे हुए युवतम की तरह कार्य्य करने में समर्थ ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्—सरस्वत्यनुमन्यस्व (इससे उत्तर में)*

अर्थ—हे सरस्वति (विद्या की अधिष्ठात्री शक्ति) स्वीकार कर ॥

इस प्रकार तीन ओर जल छिड़क कर फिर इस अगले मंत्र से पूर्व से लेकर चारों ओर जल छिड़कें ॥

ओं देव सवितःप्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ॥

(यजु० ११।७)

अर्थ—हे प्रेरकदेव ऐश्वर्य के लिये यज्ञ को प्रेरो, और यज्ञपति (यजमान) को प्रेरो। ज्ञान का पवित्र करनेवाला दिव्य गन्धर्व (वेद का धारनेवाला परमात्मा) हमारे ज्ञान को पवित्र करे, वाणी का स्वामी हमारी वाणी को रसीली बनाए ॥

---

* यह जल छिड़कने की विधि गोभिल गृह्यसूत्र १।३।१-५ में और हिरण्य केशि गृह्यसूत्र १।२।८-१० में खादिर गृह्य सूत्र १।२।१७-२० में लिखी है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आघाराहुतियें।

*१३—इसके पीछे आज्य की दो आघाराहुतियें देवे ॥

ओ३म् अग्नये स्वाहा इदमग्नये इदं न मम ॥

तदनुसार "अदितेऽनुमन्यस्व" इससे दक्षिण "अनुमतेऽनुमन्यस्व" इस से उत्तर में जल छिड़कना चाहिए। दैवकर्म्म पश्चिम से पूर्व को और दक्षिण से उत्तर को होते हैं, जैसा कि ब्राह्मण में कहा है:-

प्राञ्च्युपाञ्चि वा कर्माण्य नुतिष्ठेरन्।

कर्मों को वह पूर्व वा उत्तर को ओर अनुष्टान करें इस से दक्षिण ओर उत्तर में पश्चिम से पूर्व को ओर और पश्चिम में दक्षिण से उत्तर को ओर छिड़के, और "देव सवितः" इस से प्रदक्षिण क्रम से चारों ओर जल अंजलि से छिड़के ॥

संस्कारविधि में "अदितेऽनुमन्यस्व" से पूर्व में जल छिड़कना लिखा है। सूत्रों के असम्मत होने से यह लेखक प्रमाद हो प्रतीत होता है। दक्षिण, पश्चिम और उत्तर में क्रम भी ठीक रहता है ॥

* अघाराहुति=स्रुवे के साथ पश्चिम से पूर्व को सीधी घी की धारा बहाता जाए।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ–इससे उत्तर भाग में आघाराहुति देवे ॥

ओ३म्–सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय, इदं न मम ॥

इस से दक्षिण भाग में आघाराहुति देवे ॥

आज्य भागाहुतियें ।

१७–फिर निचले दो मन्त्रों से वेदी के मध्य में दो आज्यभागाहुतियें देवे :–

ओम्–प्रजापतये* स्वाहा, इदं प्रजापतये इदं न मम ॥

ओम्–इन्द्राय स्वाहा, इदमिन्द्राय इदं न मम ॥ †

---

* प्रजापति की आहुति में सर्वत्र "प्रजापतये" मन में कहकर 'स्वाहा' वा 'इदं न मम' वाणी से बोले ॥

† अग्नि, सोम, प्रजापति और इन्द्र, विशिष्ट रूप में परमात्मा के नाम हैं। अर्थात् अग्नि का अन्तर्यामी अधिष्ठाता, चन्द्र का अधिष्ठाता, सारे जगत् का अधिष्ठाता और बिजली का अधिष्ठाता । अग्नि का सम्बन्ध उत्तर मार्ग (शुक्ल मार्ग) से और चन्द्रका दक्षिण मार्ग (कृष्ण मार्ग) से है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्याहृत्याहुतियें ।

१८–फिर यह चार व्याहृत्याहुतियें आज्य की देवें ॥

ओम्, भूरग्नये स्वाहा, इदमग्नये, इदं न मम

ओं भुवर्वायवे स्वाहा, इदं वायवे, इदं न मम

ओम्, स्वरादित्याय स्वाहा, इदमादित्याय, इदं न मम ।

ओम्, भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा, इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः इदं न मम *

स्विष्ट कृदाहुति†

१९–इसके पीछे एक स्विष्टकृदाहुति आज्य की वा भातकी देवें, इस मन्त्र से—

---

* भूर्भुवः स्वः = पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्योलोक के नाम हैं, अग्नि वायु और सूर्य इन के देवता हैं, हवन इन सबको तृप्ति का हेतु है।

† स्विष्टकृत् अग्नि का विशेषण होता है अर्थ यजन को अच्छा बनाने वाला अर्थात् सब प्रकार की त्रुटियों को मिटा कर यज्ञ को पूर्ण शक्तिमान् बनाने वाला ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म् यदस्य कर्मणो ऽत्यरीरि चं यद्वा न्यून मिहाकरम् । अग्निष्टत् स्विष्ट कृद् विद्वान् त्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे । अग्नये स्विष्टकृते सुहुत हुते सर्व प्रायाश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्धयित्रे सर्वान् नः कामान् समर्धय* स्वाहा । इद मग्नये स्विष्टकृते, इदं न मम ॥

अर्थ—जो इस कर्म में मैंने अत्यधिक किया है, वा जो न्यून किया है, उस सारे को स्विष्टकृत अग्नि जानता है, वह मेरे लिये उसको अच्छा यजन किया हुआ और अच्छा होमाहुआ बना देवे । यह उस अग्नि के लिये है, जो यजन को अच्छा (त्रुटि रहित और पूर्ण शक्ति) बनाने वाला है, हवन को अच्छा बनाने वाला है, सारी प्रायश्चित्ताहुतियों की कामनाओं का

---

* इस मंत्र का 'यत्कर्मणोऽत्यरीरिचम्' इतनी प्रतीक शतपथ १४, ८, ४, २४ में हैं, और आश्वलायन गृह्य १ । १० । २३ में पूरा मंत्र हैं, उसी के अनुसार 'विद्यात्' के स्थान 'विद्वान्' पाठ कर दिया है, इसमें अर्थ गौरव भी है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समृद्ध (अधिक फलदायक) बनानेवाला है। (हे देव) हमारी सारी कामनाओं को समृद्ध करो। स्वाहा :-

प्राजापत्याहुति ।

२०-इसके पीछे एक प्राजापत्याहुति आज्य की देवे :-

ओम्-प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये, इदं न मम ॥

पवमानप्राजापत्याहुतियें ।

२१-फिर चार आज्याहुतियें निचले चार मन्त्रों से देवें, इनमें से पहले तीन मन्त्र पवमान अग्नि के विषय में हैं, चौथा प्रजापति के विषय में। इसलिये पहली पावमानी और चौथी प्राज्यापत्याहुति है :-

१-ओं भूर्भुवः स्वः *। अग्न आयूंषि

---

* ओ३म् भूर्भुवः स्वः, मन्त्र का भाग नहीं, मन्त्र के आदि में जोड़े गए हैं-अर्थ-ओ३म् से स्थूल जगत्, सूक्ष्म जगत् और प्रकृति का अधिष्ठाता, और भूर्भुवः स्वः से पृथिवी अन्तरिक्ष और द्यौ का अधिष्ठाता परमेश्वर अभिप्रेत है॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पवस आसुवोर्ज्जमिषं चनः । आरे बा धस्व दुच्छुनां स्वाहा । इदमग्नये पवनाय † इदं न मम ॥ (ऋग्० ९ । ६६ । १९)

अर्थ—हे अग्नि ! तुम हमारी अवस्थाओं को पवित्र करते हो, अन्न और पराक्रम हमारी ओर प्रेरो, और विपत्तियों को हमसे परे हटाओ ॥

२—ओं भूर्भुवः स्वः । अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः । तमीमहे महागयं स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय, इदं न मम (ऋग्० ९ । ६६ । २०)

अर्थ—अग्नि जो पवमान (पवित्र करने वाला) ऋषि है, सब मनुष्यों का हितैषी पुरोहित है, उस महाधनी से हम याचना करते हैं, स्वाहा ॥

३—ओं भूर्भुवः स्वः । अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम् । दधद्रयिं मयि पोषं

† यह तीनों ऋचाएं पावमानी कहलाती हैं, इनका देवता पवमानअग्नि अर्थात् पवित्र करनेवाला अग्नि है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वाहा, इदमग्नये पवमानाय इदं न मम ॥

(ऋग्० ९ । ६६ । २१)

अर्थ–हे अग्नि ! तुम जो अपनों के रक्षक हो हमारे ब्रह्मवर्चस और बडी वीरता को पवित्र करो, मुझमें धन और पुष्टि दो ॥

४–ओं भूर्भुवः स्वः । प्रजापते नत्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुम स्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् स्वाहा । इदं प्रजापतये, इदं न मम ॥ (ऋग्० १० । १२१ । १०)

अर्थ–हे प्रजा के स्वामी ! तुम्हारे बिना और कोई इन सब पदार्थों पर शासन नहीं कर रहा है सो हम जिस कामना से आपको पुकारते हैं, हमारी वह पूर्ण हो, हम धनों के मालिक हों ॥

सर्व प्रायश्चित्त होम ।

२२–फिर निचले आठ मन्त्रों से आठ आज्या-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुतियें देवें, इन मन्त्रों से किया होम सर्वप्रायश्चित्त होम कहलाता है. अर्थात जो भूल चूक हुई है उसका यह प्रायश्चित्त है ॥

(१) ओं त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अवयासिसीष्ठाः । याजिष्ठो वन्हितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषा ँ सि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा । इदमग्नी वरुणाभ्यां, इदं न मम ॥ (यजु० २१ । ३, ऋग्० ४।१।४)

अर्थ—तुम हे अग्नि ! वरुण के जाननेवाले हो, उस देवता के क्रोध को हमसे परे हटाओ । और (हमारे लिये) सब से श्रेष्ठ यजमान बनकर (हमारी हवियों को सब से श्रेष्ठ पहुंचाने वाले बनकर) बहुत बड़े चमकते हुए तुम हमसे सारे द्वेषों को (हमारे अन्दर जो दूसरों के लिये हैं, और दूसरों के अन्दर जो हमारे लिये हैं) दूर कर दो ॥

(२) ओं स त्वं नो अग्ने ऽवमो भवोती ने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ, अवयक्ष्व नो वरुण ँ रराणो वीहि मृडीक ँ सुहवा न एधि स्वाहा। इदमग्नी वरुणाभ्यां, इदं न मम॥ (यजु० २१। ४. ऋग्० ४। १। ५)

अर्थ—हे अग्ने! इस (नई) उषा के फूटने पर अपनी सहायता द्वारा हमारे रक्षक बनो, हमारे अन्तरङ्ग साथी बनो, और (हवि) देते हुए हमारे लिये वरुण को पूजो, कल्याण लानेवाली हवि को पहुंचाओ, और हमारे लिये आसानी से बुलाने योग्य बनो॥

(३) ओं इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय। त्वामवस्यु राचके स्वाहा। इदं वरुणाय,इदं न मम॥ (यजु० २१। १, ऋग्० १। २५। १९)

अर्थ—हे वरुण मेरी इस टेर को सुनो आज मुझ पर कृपा करो, तेरी सहायता चाहते हुए मैंने तुझे पुकारा है॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) ओं तत्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मान आयुः प्रमोषीः स्वाहा। इदं वरुणाय इदं न मम॥

(यजु० २१। २, १८। ४९, ऋग्० १। २४। ११)

अर्थ—मैं तुम्हें वन्दना करता हुआ मन्त्र द्वारा तुम से यह मांगता हूं, और यजमान हवियों के द्वारा यह मांगता है, कि हे वरुण क्रोध न करते हुए तुम (हमारी कामनाओं को) जानो, हे फैली हुई प्रशंसावाले! हमारी आयु को मत चुराओ॥

(५) ओं येते शतं वरण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णु र्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतःस्वर्काःस्वाहा। इदं वरुणाय, सवित्रे, विष्णवे, विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः, इदं न मम॥

(कात्यायन २१। ५)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ—हे वरुण ! जो तुम्हारी यज्ञ सम्बन्धी (यज्ञ में विघ्न वा त्रुटियें करनेवालों के लिये) सौ हज़ार (अर्थात् अनगिनत) बड़ी २ फांसें फैली हुई हैं, उन से आज हमें सविता, विष्णु, विश्वेदेव और शोभन गीतों वाले मरुत् छुड़ाएं ॥

(६) ओं अयाश्चाग्ने ऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित् त्वमया असि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषज ँ स्वाहा। इदमग्नये अयसे, इदं न मम ॥ (कात्यायन २५ । ११)

अर्थ—हे अग्ने ! तुम तीक्ष्ण(तेज़)हो और निर्दोषों के रखवारे हो। सचमुच ही तुम तीक्ष्ण हो, तीक्ष्ण हुए तुम हमारे यज्ञ को (देवताओं में) लेजाते हो, तीक्ष्ण हुए तुम हमारे यज्ञ को औषध बनाओ ॥

(७) ओं उदुत्तमं वरुण पाश मस्मदवाधमं विमध्यमं श्रथाय। अथावयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा। इदं वरु-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

णाय, इदं न मम ॥ (यजु० १२ । १२, ऋग्वेद० १ । २४ । १५)

अर्थ—हे वरुण ! ऊपर की फांस को हमसे ऊपर उठा दो, निचली को नीचे उतार दो, और मध्यम को खोलदो, तब हम हे आदित्य (आदिति के पुत्र) तुम्हारे व्रत (नियम) में निरपराध होकर अदिति के लिये हों ॥ *

(८) ओं भवतंनः स मनसौ सचेतसावरेपसौ । मा यज्ञ ँ हि ँ सिष्ठं मा यज्ञपतिं

* वरुण पवित्रता का अधिष्ठाता है, जो पवित्रता के नियमों को तोड़ता है, उसके शरीर को वरुण की फांसें ऊपर नीचे और मध्य में जकड़ लेती हैं, सो वह एक जकड़े हुए कैदी की तरह अदिति की शोभा को नहीं भोग सक्ता । इसलिये यह प्रार्थना है, कि हे वरुण उन सारी फांसों से निर्मुक्त करके तुम्हारे नियमों पर चलने का हमें सामर्थ्य दो जिससे हम निरपराध होकर अदिति (सारे देवताओं की माता Nature) की शोभा को स्वतन्त्रता से उपभोग करें ॥

CC-0. Gurukul.Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जातवेदसौ शिवौ भवतमद्यनः स्वाहा ।
इदं जातवेदोभ्यां, इदं न मम ॥ (यजु ५ । ३)

अर्थ—हमारे लिये तुम दोनों एक मनवाले, एक चिन्तनवाले और निर्दोष होजाओ, न यज्ञ को हानि पहुंचाओ, न यज्ञपति (यजमान) को हानि पहुंचाओ हे जातवेदसो हमारे लिये कल्याणरूप होजाओ ॥

पूर्णाहुति ।

२३—फिर निचले मन्त्र से तीन पूर्णाहुतियें आज्य और दूसरी सामग्री की देवें :—

ओं सर्वं वै पूर्ण ँ स्वाहा ॥

वामदेव्यगान ।

२४—सारे मङ्गल कार्यों में हवन के अनन्तर वामदेव्य गान करें ॥

वामदेव्य गान ।

ओं भूर्भुवः स्वः । कया नश्चित्र आभुवदूती सदावृधा सखाः । कया शचिष्ठया वृता ॥ १ ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओं भूर्भुवः स्वः । कस्त्वा सत्योमदानां म ँ हिष्ठो मत्सदन्धसः। दृढा चिदारुजे वसु ॥ २ ॥

महावामदेव्यम् ।

ओं भूर्भुवः स्वः । अभीषुणः सखीनामविता जरितॄणाम् । शतम्भवास्यूतये॥३॥

का ऽ ५ या नश्चा ३ इत्रा ३ आभुवात् । ऊ । ती सदावृधः सखा औ ३ होहाइ कया २३ शचाई । ष्ठयौहो ३ हुम्मा २ । वा २ तों ३ ऽ ५ हाई ॥ (१) ॥ का ऽ ५ स्त्वा । सत्यो ३ मा दानाम् । मा । हिष्ठोमात्सादन्ध । सा औ ३ होहाइ । दृढा २३ चिदा । रुजौहो ३ हुम्मा २ वा ऽ ३ सो ३ ऽ ५ हायि (२) ॥ आ ऽ ५ भी । षुणा ३ सा ३ खीनाम् । आविता जरायितृ । णाम् । औ २३ होहायि । शता २३ । म्भवा । सियौहो ३ । हुम्मा २ । ता ऽ २ यो ३ ऽ ५ हायि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥(३) साम० उतरार्चिके । अध्याये १ । खं० ३ । मं० १ । २ । ३ ॥

संस्कारों की संख्या।

श्रीस्वामीजी महाराजने संस्कार सोलह इस क्रम से माने हैं :—

(१) गर्भाधान, (२) पुंसवन (३) सीमन्तोन्नयन (४) जातकर्म (५) नामकरण (६) निष्क्रमण (७) अन्न प्राशन (८) चूड़ाकर्म (९) कर्ण वेध (१०) उपनयन (११) वेदारम्भ (१२) समावर्तन (१३) विवाह (१४) गृहाश्रम (१५) वानप्रस्थ (१६) संन्यास ॥

अन्त्येष्टि कर्म इन सोलह से अलग है, वह संस्कार नहीं, अपितु विकार है। संस्कार विधि में उसको इस लिये स्थान दिया है, कि उसकी भी विधि संस्कारों की तरह मन्त्रों से कीजाती है। इसीकारण इसे उपचार से संस्कार भी बोलते हैं, वस्तुतः यह संस्कार नहीं, और न किसी आचार्य ने इसे संस्कार माना है। श्री स्वामी जी महाराज को भी यही अभिप्रेत है। अतएव उन्होंने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरम्भ में सोलह संस्कार कहे हैं। अब यदि अन्त्येष्टि को भी संस्कारों में गिनें, तो सत्तरह होजाते हैं॥

प्रश्न—यदि गृहाश्रम को एक अलग संस्कार न मानकर अन्त्येष्टि को संस्कार माना जाए, तो सोलह की संख्या ठीक बनी रहती है। और यह उचित इस लिये है कि :—

१—गृहाश्रम वस्तुतः विवाह से अलग कोई संस्कार नहीं, और अन्त्येष्टि एक स्वतन्त्र संस्कार है॥

२—और कि श्री स्वामीजी महाराज ने कई स्थलों में गर्भाधान से लेकर मृत्यु पर्यन्त, वा दाह पर्यन्त "सोलह संस्कार" ऐसा लिखा है। यह तभी ठीक हो सक्ता है, जब अन्त्येष्टि को संस्कार मानाजाए॥

३—अन्त्येष्टि प्रकरण में भी अन्त्येष्टि कर्म के लिए संस्कार शब्द प्रयुक्त किया है॥

(उत्तर) १—गृहाश्रम को विवाह से अलग संस्कार मानना ही उचित है, क्योंकि गौतम धर्म सूत्रों में विवाह से आगे पांच महायज्ञ, सात पाकयज्ञ, सात हविर्यज्ञ, और सात सोमयज्ञ यह २६ भी संस्कार माने हैं *इनमें

*नोट—देखो गौतम धर्मसूत्र १।८।१७-२१॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कार का लक्षण (शोधन और आधान) घटता है। इसलिए इनको संस्कार मानना उचित है। किन्तु यह सब कर्म गृहाश्रम में किये जाते हैं, इसलिये श्रीस्वामीजी महाराज ने इन सब के लिए एक नाम गृहाश्रम संस्कार रख दिया है, इसका अर्थ गृहाश्रम के संस्कार, अर्थात् पञ्च महायज्ञादि है, अतएव इस प्रकरण में पञ्च महायज्ञों और दर्श पूर्णमासेष्टियों और शालाकर्म का विधान किया है॥

२—मृत्यु पर्यन्त इत्यादि में पर्यन्त शब्द सीमा का बोधक है। अर्थात् संस्कार इसमें वरे हैं अथवा प्रसिद्धि का अनुसरण करके ऐसा लिखा गया है वा लेखक प्रमाद है॥

३—अन्त्येष्टि प्रकरण में अन्त्येष्टि के लिये संस्कार शब्द का प्रयोग उपचार से है। पर गृहाश्रम वा अन्त्येष्टि में से श्रीस्वामी जी को संस्कार कौन अभिप्रेत है, इसका उत्तर इससे स्पष्ट मिलजाता है, कि गृहाश्रमके शीर्षक में उन्होंने "अथ गृहाश्रम संस्कार विधिं वक्ष्यामः" लिखा है, पर अन्त्येष्टि के शीर्षक में "अन्त्येष्टि कर्म विधिं वक्ष्यामः" लिखा है॥

इसलिये गृहाश्रम ही संस्कारों में है, अन्त्येष्टि को उपचार से संस्कार कहा है॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्य का पहिला संस्कार।

१–हिरण्यकेशी ने संस्कारों में सब से पहला स्थान उपनयन को दिया है, पर अन्य सारे गृह्यसूत्रकारों ने पहला स्थान विवाह को दिया है। श्री स्वामीजी महा० राज ने संस्कारविधि में सब से पहले गर्भाधान संस्कार लिखा है॥

२–आर्य्यों में तीन संस्कार बड़े समारोह के हैं, उपनयन, समावर्तन, और विवाह॥

३–उपनयन एक आर्यकुमार को वेद और दूसरी विद्याएं पढ़ने के लिये आचार्यकुल में भेजते समय होता है। यह एक उसका दूसरा जन्म माना जाता है, जो कि सभ्यता और कर्तव्य का जन्म कहलाता है। इससे पहले बच्चा अपने संस्कार आप नहीं करता, अपितु माता पिता उसके संस्कार करते हैं, उपनयन से वह आप अपने संस्कार आरम्भ करता है, इस हेतु से इसे पहला स्थान दिया है। किञ्च-उपनयन सब के लिये नियत है, विवाह मनुष्य की इच्छा पर है न करे तो कोई बाधा नहीं। पर उपनयन प्रत्येक के लिये अवश्य

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्तव्य है। इस हेतु से भी हिरण्यकेशी ने उपनयन को प्रधानता दी है॥

दूसरे आचार्य विवाह को इसलिये प्रधानता देते हैं, कि उपनयन भी बहुत कुछ माता पिता के आधीन होता है, उपनीत होकर भी वह आचार्य के अधीन रहते हैं। यद्यपि शास्त्रीय जीवन को धारण कराना गुरु का काम होता है। सो वस्तुतः वह अभी तक पूरे स्वतन्त्र नहीं हुए होते। विवाह से आरम्भ करके अपने और अपनी संतान के सारे संस्कार उनके अपने अधीन होजाते हैं। अर्थात विवाह से पूर्व उनके संस्कारों की ज़िम्मावारी दूसरों पर होती है, विवाह से लेकर सारी ज़िम्मावारी उनके अपने ऊपर आजाती है, वह अपने और अपनी संतान के आचार व्यवहार की ज़िम्मावारी उठा लेते हैं॥

किञ्च यदि विवाह सब प्रकार शास्त्र मर्यादा के अनुसार होगा, और विवाहित स्त्री पुरुष शास्त्रीय जीवन को धारण करेंगे, तो उनकी संतति स्वभावतः ही शुभ संस्कारों वाली होगी, और उन पर किये संस्कार पूरा फल देंगे। इसलिये गृह्यसूत्र-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारों ने संस्कारों में विवाह को प्रधानता दी है, और गर्भाधान को विवाह का शेष (अङ्ग) माना है। प्रथम गर्भाधान विवाह से पीछे एक वर्ष वा बारह रात्रि वा छः रात्रि वा अन्ततः तीन रात्रि ही ब्रह्मचारी रहकर चौथी रात्रि को होना चाहिये, इसीलिये इसका नाम चतुर्थी कर्म रक्खा गया है॥

पर श्री स्वामी जी महाराज ने प्रथम स्थान गर्भाधान को दिया है। आशय यह है, कि चाहे यह संस्कार माता पिता के अधीन है, और चाहे यह विवाह का अङ्ग है, पर संस्कार सब से पहला यही है, क्योंकि जीवन का आरम्भ इसी से होता है। और यद्यपि प्रथम गर्भाधान विवाह का शेष है, पर प्रत्येक गर्भाधान शेष नहीं होसक्ता, वह एक दूसरे संस्कारों की तरह अपने समय पर स्वतंत्र संस्कार होता है, इसलिये विवाह से अलग करके इसको संस्कारों में प्रथम स्थान देना उचित है। अतएव भगवान् मनु ने भी कहा है:-

निषेकादिश्मशानान्तो मन्त्रैर्यस्योदितो विधिः- (मनु० २।१६)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिनके लिये विधि (कर्मों का अनुष्ठान) गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि पर्यन्त मन्त्रों से बतलाया है ॥ इसीलिये स्मृतियों में भी गर्भाधान को पहले कहा है, और पद्धतिकारोंने भी गर्भाधानको ही पहले लिखा है ॥



CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पढ़ने योग्य पुस्तकें ।

	Rs.	a.	p.
(१) Conception of God—Head in the Vedas (English)	0	6	0
(२) यज्ञोपवीत उर्दू			–)॥
(३) तोफ़ा शिवरात्रि उर्दू			)॥
(४) संध्या उर्दू			≡)
(५) Swamiji on Vedas (English)	0	1	0

(6) Arya Samaj its beliefs and principles two Rupees per hundred for free distribution. Single copy two pice.

मिलने का पता—

मंत्री यंगमैन्ज़ आर्य्य समाज

ट्रैक्ट सोसायटी, लाहौर ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यंगमैन्ज़ आर्य्य समाज ट्रैक्ट सोसायटी लाहौर।

हिन्दी, उर्दू, गुरुमुखी, अंग्रेज़ी आदि में वैदिक धर्म, यज्ञ, संस्कार, स्त्री शिक्षा, विधवा विवाह, स्वास्थ्य रक्षा, जातीय त्योहार और अन्य उपयोगी विषय सम्बन्धी पुस्तकें छापती है–

सोसाइटी के सभासद दो प्रकार के हैं—

प्रथम–जीवन पर्यन्त सभासदों को एक वार ही २०रु० देने पड़ते हैं ॥

द्वितीय–साधारण सभासद वार्षिक चन्दा १) रुपया।

सभासदों को सोसायटी की छपी हुई सब पुस्तकें विना डाक व्यय और मूल्य के दी जाती हैं ॥

सभा और समाजों के लिये विशेष नियम हैं ॥

मन्त्री,

यंगमैन्ज़ आर्य्य समाज

ट्रैक्ट सोसायटी, लाहौर ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

7 BOOKS WORTH READING.

	Actual price. Rs. a. p.	Reduced price. Rs. a. p.
1. Light of truth (English translation by M. Durga Pershad) C. B. ...	2 4 0	2 0 0
2. Life and teachings of Swami Dayanand Sarswati C. B.	2 0 0	1 8 0
3. The message of Vedas C. B.	1 4 0	1 2 0
4. Fountain—Head of Religion C. B.	1 0 0	0 15 0
5. The Ten Gurus and their teachings C. B. ...	0 13 0	0 12 0
6. The teachings of the Arya Samaj C. B. ...	0 12 0	0 10 0
7. Five great duties of Aryas C. B.	0 4 0	0 3 0

Complete Price List of English and Hindi books can be had, on application from—

LIBRARIAN,

Arya Samaj, Anarkali, Lahore.

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

2.9/63
96522F
25.2.2001

वेदारम्भः

प्रथमभागः

मे० द० ऐं० वैदिक विद्यालयाध्यापकेन

हरिहरनाथशास्त्रिणाऽन्वयाऽऽर्यभा-

षाभ्यामलङ्कृतः ॥

यह पुस्तक लाला गजपतिराय जी के पुत्र रामशरण

दास ज़िमीदार ने द० ऐं० वै० स्कूल मेरठ की

सहायता के लिये धर्मार्थ छपवाई

पं० तुलसीराम जी स्वामी सम्पादक वेद-

प्रकाश तथा सामवेदभाष्य के प्रबन्ध से

स्वामियन्त्रालय मेरठ

में छपा ॥

इस का मुद्रणाधिकार उक्त स्कूल कालिज कमेटी को है

संवत् १९५४ फाल्गुन

प्रथमबार] [१०००

मूल्य प्रतिपुस्तक)॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेदारम्भः

१–शन्नोमित्रः शं वरुणः शन्नोभवत्वर्यमाशन्नइ-
न्द्रो वृहस्पतिःशन्नोविष्णुरुरुक्रमः॥नमोब्रह्म-
णे नमस्तेवायो त्वमेवप्रत्यक्षंब्रह्मासि त्वामेव
प्रत्यक्षंब्रह्मवदिष्यामि । ऋतंवदिष्यामि ।
सत्यंवदिष्यामि। तन्मामवतु। तद्वक्तारमवतु।
अवतुमामवतुवक्तारम् ओ३म् शान्तिः ३

अर्थ–सब का मित्र (परमात्मा) हमें सुखदायक हो,+ पूज्य (परमात्मा) हमे सुखदायक हो न्यायकारी हमें सुखदायक हो । ऐश्वर्य वाला बड़ों से बड़ा हमें सुखदायक हो पराक्रमी व्यापक हमें सुखदायक हो ब्रह्म को नमस्कार (सर्वाधार तुझे नमस्कार है) तू ही यथार्थ ब्रह्म है तुझे ही यथार्थ ब्रह्म कहूंगा (वेदानुकूल कहूंगा) सत्य कहूं गा इस से मेरी रक्षा करो(इस से (सत्यवक्ता की रक्षा करो) (मेरी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रक्षाकरो (सत्यवक्ता की रक्षा करो) तीन वार शान्ति पाठ से आध्यात्मिक आधिभौतिक आधिदैविक दुःख शान्त हों १

२–ईशा वास्यमिदꣳ सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ॥ १ ॥

(यत्किञ्च,) जो कुछ (जगत्याम्) सृष्टि में (जगत्) जगत् है (इदंसर्वम्) यह सारा (ईशा) ईश्वर से (वास्यम्) आच्छादित है (तेन त्यक्तेन) उस के दिये से (भुञ्जीथाः) भोगकर (कस्यस्वित्) किसी के (धनम्) धन की (मागृधः) इच्छा मत कर ॥ २ ॥

३-अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद् देवा आप्नुवन् पूर्वमर्षत् । तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ॥ ४ ॥

(तत्) वह (अनेजत्) निष्कम्प (एकम्) एक (मनसो, जवीयः) मन से अधिक वेगवाला है (पूर्वम्) आगे (अर्षत) चलते हुवे (एनत्) इस को (देवाः) इन्द्रियां (न आप्नुवन्) नहीं पहुंच सकते (तत, तिष्ठत्) वह स्थिर ही

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(धावतः) दौड़ते हुवे (अन्यान्) औरों को (अत्येति) उल्लंघन करता है (तस्मिन्) उस में (मातरिश्वा) जीवात्मा (अपः) कर्मों को (दधाति) धारण करता है।३।

४—तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके । तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ॥५॥

(तत्) वह (एजति) चलता है (तत् न एजति) वह नहीं चलता है (तत् दूरे) वह दूर है (तत्) वह (उ) और (अन्तिके) समीप है (तत्) वह (अस्य) इस (सर्वस्य) सब के (अन्तः) भीतर है (तत् उ,) और वह (अस्य सर्वस्य) इस सब के (बाह्यतः) बाहिर है ॥४॥

५—सपर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धम्। कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥८॥ यजुर्वेद अध्याय ४० । मंत्र १, ४, ५, ८ ॥

(सः) वह (शुक्रम्) शक्तिमान् (अकायम्) शरीर रहित (अव्रणम्) छिद्ररहित (अस्नाविरम्) नाड़ियों के

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संबन्ध से रहित (शुद्धम्) पवित्र (अपापविद्धम्) पाप रहित (कविः) सर्वज्ञ (मनीषी) अन्तर्यामी (परिभूः) व्यापक (स्वयम्भूः) अजन्मा (शाश्वतीभ्यः) निरन्तर (समाभ्यः) वर्षों के लिये (याथातथ्यतः) यथार्थ (अर्थान्) पदार्थों को (वि, अदधात्) रचता है ॥ ५ ॥

६—तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः ।
तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ता आपः स प्रजापतिः ॥ १ ॥

(तत्) वह (एव) ही (अग्निः) प्रकाशमान (तत्-एव) वही (आदित्यः) ग्रहण करने वाला है (तत्वायुः) वह चलानेवाला (तत् उ,) और वही (चन्द्रमाः) आल्हादक है (तत्) वही (शुक्रम्) बलस्वरूप (तत्ब्रह्म) वही बड़ा (ताः) वही (आपः) व्यापक (सः) वही (प्रजापतिः) प्रजा का पालक है ॥ ६ ॥

७—सर्वे निमेषा जज्ञिरे विद्युतः पुरुषादधि ॥
नैनमूर्ध्वं न तिर्यञ्चं न मध्ये परिजग्रभत् ॥ २ ॥

(सर्वे) सब (निमेषाः) समय के विभाग (विद्युतः) प्रकाशमान (पुरुषात्) ईश्वर से (अधि,जज्ञिरे) उत्पन्न हुवे और (एनम्) इस को (न) नकोई (ऊर्द्ध्वम्) ऊपर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से (न, तिर्यञ्चम्) न इधर उधर से (न, मध्ये) न मध्य से (परि, जग्रभत्) पकड़सकता है ॥ ७ ॥

८—न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः। हिरण्यगर्भइत्येषः मा मा हिꣳसीदित्येषा। यस्मान्न जात इत्येषः ॥३॥

(हिरण्यगर्भः) यजुः–(२५। १०–१३) यह अनुवाक मामाहिꣳसीत् (१२–१०२) यह ऋक् और यस्मान्नजातः यजुः (८–३६ । ३७) यह अनुवाक जिस का बड़ा प्रसिद्ध यश है उस की प्रतिमा नहीं है ॥ ८ ॥

९—एषो ह देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो ह जातः स उ गर्भे अन्तः । स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ् जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः ४

(हे जनाः) हे मनुष्यो (एषः) यही (ह) प्रसिद्ध (देवः) देव (सर्वाः) सब (प्रऽदिशोऽनु) दिशाओं में व्याप्त है (पूर्वो, ह, जातः) सब से पहले प्रकट हुआ (सउ) और वही (गर्भे) अन्तः करण के (अन्तः) बीच है (सएव) वही (जातः) प्रकट हुआ (सजनिष्यमाणः) और वही प्रकट होगा (सर्वतोमुखः) सर्वत्र व्यापकहो

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(प्रत्यङ्) सब में (तिष्ठति) स्थित है ॥९॥

१०—यस्माज्जातं न पुरा किंचनैव य आबभूव भुवनानि विश्वा । प्रजापतिः प्रजया स ँ रराणस्त्रीणि ज्योतीँषि सचते स षोडशी ५

(यस्मात्) जिस से (पुरा) पहिले (किञ्चन,एव) कुछ भी (न) नहीं (जातम्) (उत्पन्न हुआ (यः) जिसने (विश्वा) सब (भुवनानि) भुवनों को (आबभूव) फैलाया है (प्रजया) प्रजा के साथ (सम् ऽरराणः) रमता हुआ (षोडशी) सोलह * कलावाला (सः) वही (प्रजाऽपतिः) परमेश्वर (त्रीणि) तीन † (ज्योतींँषि) ज्योतियों को (सचते) संयुक्त करता है ॥१० ॥

११—वेनस्तत् पश्यन्निहितं गुहा सद्यत्र विश्वं भवत्येकनीडम् । तस्मिन्निदं सं च वि चैति सर्वँस ओतःप्रोतश्च विभूः प्रजासु ॥८॥

---

* प्राण, श्रद्धा, आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, इन्द्रिय, मन, अन्न, वीर्य्य, तप, मन्त्र, कर्म, लोक, नाम यह सोलह कला प्रश्नोपनिषद् के छठे प्रश्न में हैं ।

† अग्नि, विद्युत, सूर्य्य

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(वेनः) विद्वान् (गुहानिऽहितम्) बुद्धि में स्थित (तत् सत्) उस नित्य को (पश्यत्) देखता है (यत्र) जिस में (विश्वम्) सब जगत् (एकनीडम्) एकाधार है (इदं सर्वम्) यह सब उसी में (समेति) प्रलय के समय सङ्गत होता है (च) और सृष्टि के समय (वि,च,एति) अलगर भी होता है (सः) वह (विऽभूः) व्याप्त हो (प्रऽजासु) प्रजाओं में (ओतः, प्रोतश्च) ओत और प्रोत है ॥११॥

१२—स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा । यत्र देवा अमृत-मानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥१०॥
य०अ० ३२। मं० १–५,८, १०॥

(देवाः) विद्वान् लोग (अमृतम्) मुक्ति सुख को (आनशानाः) भोगते हुए (यत्र) जिसड़ (तृतीये धामन्) तृतीय धाम * में (अधिऽऐरयन्त) स्वेच्छा से विचरते हैं (सः) वही (नः बन्धुः) हमारा बन्धु (जनिता) उत्पादक और (विऽधाता) कर्त्ता (सः) वही (विश्वा,धामानि) सब धाम और

---

* प्रकृति और जीव की अपेक्षा ईश्वर तृतीय धाम है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(भुवनानि,) भुवनों को (वेद) जानता है ॥१२॥

१३—हिरण्यगर्भःसमवर्त्तताग्रेभूतस्यजातःपति-
रेकआसीत् । सदाधारपृथिवींद्यामुतेमांक-
स्मैदेवायहविषाविधेम ॥१॥

(हिरण्यऽगर्भः) सूर्य्यादि का आधार (अग्रे) पहिले (समऽवर्तत) था (जातः, भूतस्य) उत्पन्न हुए भूतों का वही (एकःपतिः) एक स्वामी (आसीत्) है (सः) वही (द्याम्) द्युलोक (उत) और (इमांपृथिवीम्) इस पृथिवी को (दाधार) धारण कर रहा है (कस्मैदेवाय) उस सुख स्वरूप देव की (हविषाविधेम) प्रेम से भक्ति करें ॥१३॥

१४—यआत्मदाबलदायस्य विश्वउपासतेप्रशि-
षंयस्यदेवाः । यस्यछायामृतंयस्यमृत्युः
कस्मैदेवायहविषाविधेम ॥२॥

(यः) जो (आत्मदाः) जीवन का देने वाला और (बलदाः) बल दाता है (विश्वे,देवाः) सब देव (यस्य) जिस को (उपासते) सेवते हैं (यस्य) जिस के (प्रशिषम्) शासन को मानते हैं (यस्य) जिस का

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(छायाऽमृतम्) आश्रय अमृत है और विमुख होना (मृत्युः) मृत्यु है ॥१४॥

१५—यः प्राणतोनिमिषतोमहित्वैकइद्राजाजगतोबभूव । यईशे अस्यद्विपदश्चतुष्पदःकस्मैदेवाय हविषाविधेम ॥३॥

(यः) जो (प्राणतः) सोते (निऽमिषतः) जागते (जगतः) जगत् का (महिऽत्त्वा) निजमहत्त्व से (एकः, इत, राजा) एक ही राजा (बभूव) है (यः) जो (अस्यद्विऽपदः) इस द्विपात् और (चतुष्पदः) चतुष्पात् का (ईशे) स्वामी है (कस्मैदेवाय) उस० ॥ १५ ॥

१६—यस्येमेहिमवन्तोमहित्वायस्यसमुद्रंरसयासहाहुः । यस्येमाःप्रदिशोयस्यबाहूकस्मैदेवायहविषाविधेम ॥४॥

(इमे) ये (हिमऽवन्तः) हिम वाले पर्वत (यस्य) जिसके (महिऽत्त्वा) महत्त्व को (आहुः) कहते हैं (रसयासह) नदी के साथ (समुद्रम्) समुद्र जिस के महत्व को कहता है (इमाः) यह (प्रऽदिशः) दिशाए (यस्यबाहू) जिसकी भुजाएं हैं उस

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(कस्मै) सुख स्वरूप (देवाय) देव का (हविषा) हविःसे (विधेम) सेवन करें ॥ १६ ॥

१७—येनद्यौरुग्रापृथिवीचदृढायेनस्वः स्तभितंये-
ननाकः। योअन्तरिक्षेरजसोविमानःकस्मै-
देवायहविषाविधेम ॥५॥

(येन) जिस ने (द्यौः) आकाश और (उग्रा, पृथिवी च) महन पृथिवी को (दृढा) दृढ़ की है (येन) जिस ने (स्वः) सूर्य को (स्तभितम्) धारण किया (येन) जिसने (नाकः) मुक्ति को धारण किया है (यः, अन्तरिक्षे) जो आकाश में (रजसः) जल का (विऽमानः) बनाने वाला है (कस्मै०) ॥१७॥

१८—यंक्रन्दसीअवसातस्तभानेअभ्यैक्षेतांमन-
सारेजमाने। यत्राधिसूरउदितोविभाति क-
स्मैदेवायहविषाविधेम ॥६॥

(अवसा) रक्षा के लिये (तस्तभाने) रचे हुए (मनसा) ध्यान से (रेजमाने) चलाये हुए भी स्थिर (क्रन्दसी) द्यौः और भूमि (यम्) जिस को (अभिऐक्षेताम्) जताते हैं (यत्र, सूरः, उदितः) जिस में सूर्य उदय हुआ (विभाति)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशित होता है ॥१८॥

१९—आपोहयद्बृहतीर्विश्वमायन्गर्भंदधानाजन
यन्तीरग्निम्। ततोदेवानांसमवर्ततासुरेकः
कस्मैदेवायहविषाविधेम ॥७॥

(यत्) जब (गर्भम् दधानाः) गर्भ को धारण और (अग्निम्, जनयन्तीः) अग्नि को उत्पन्न करता हुआ (बृहतीः) बड़ा (आपः) महत्तत्व (आयन्) फैला (ततः, देवानाम्) तब देवों का (असुः) प्राण (एकःप्रजापतिः) एक ईश्वर (सम् अवर्त्तन) था (कस्मै दे०) उस सुख० ॥१९॥

२०—यश्चिदापो महिनापर्यपश्यद्दक्षं दधानाजन-
यन्तीर्यज्ञम्। यो देवेष्वधिदेवएकआसीत्क-
स्मैदेवायहविषाविधेम ॥८॥

(यः चित्) जो ईश्वर (दक्षम्) बल को (दधानः) धारण और (यज्ञम्) संसार को (जनयन्तीः) उत्पन करते हुए (आपः) महत्तत्व को (महिना) अपने महत्त्व से (परिअपश्यत्) देखता है (यः) जो (देवेषु अधि) देवों में (एकः देवः) एक देव (आसीत्) है) कस्मै दे०) उस सु० दे०॥२०॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१–मानोहिंसीज्जनिता पृथिव्यायोवादिवंस-
त्यधर्माजजान। यश्चापश्चन्द्राबृहतीर्जजान
कस्मैदेवायहविषाविधेम ॥९॥

(मा) हम को (नः) नहिं (हिंसीत्) मारे (यः पृथिव्याः) जो पृथिवी का (जनिता) उत्पादक है (वा) और (यः सत्यधर्मा) जिस सत्यधर्मीने (दिवम्) द्यौ को (जजान) उत्पन्न किया है (च,यः) और जिसने (चन्द्राः) चमकीले (बृहतीः) बड़े (अपः) महत्तत्व को (जजान) उत्पन्न किया है (क०) उस० ॥२१॥

२२–प्रजापतेनत्वदेतान्यन्योविश्वाजातानिप-
रिता बभूव । यत्कामास्तेजुहुमस्तन्नोअ-
स्तुवयंस्यामपतयोरयीणाम् ॥१०॥ ऋ०
मण्डल १०, सूक्त १२१, मं० १–१०॥

(हे प्रजापते) हे प्रजापालक (त्वत् अन्यः) तुम से दूसरा (एतानि) इन (विश्वा) सब (जातानि) भूतों को (न, परि, बभूव) नहीं दबा सकता है (वयम्) हम (यत्कामाः) जिस इच्छा से (जुहुमः) आपका आश्रय करें

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ततनः अस्तु) वह हमारी सिद्ध हो (च वयम्) और हम लोग (रयीणाम्) धनों के (पतयः) स्वामी (स्याम) हो ॥२२॥

२३–महद्यक्षं भुवनस्य मध्ये तपसि क्रान्तं सलिलस्य पृष्ठे । तस्मिञ्छ्रयन्ते य उ के च देवा वृक्षस्य स्कन्धः परित इव शाखाः। अथर्व० काण्ड १०। वर्ग ७। मन्त्र।३८।

(तपसि) विज्ञान में (क्रान्तम्) बढ़ा हुआ (महत्) बड़ा (यक्षम्) पूज्य (भुवनस्य) संसार के (मध्ये) मध्य में (सलिलस्य,पृष्ठे) महत्तत्त्व से परे है (ये, उ, के च, देवाः) जितने देव हैं सब (तस्मिन्) उसी में (श्रयन्ते) आश्रित होते हैं (वृक्षस्य) वृक्ष के (स्कन्धः, परितः) स्कन्ध के सब ओर (शाखाः, इव) शाखा जैसे ॥ २२ ॥

२४–यो भूतं च भव्यं च सर्वं यश्चाधितिष्ठति। स्वर्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥ अथर्व० काण्ड १०। वर्ग ८।मं०१

(यः) जो (भूतम् च भव्यम्) भूत और भविष्यत् (सर्वम्) सब का (अधितिष्ठति) अधिष्ठाता है (यस्य) जिसे

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हा (केवलम्) केवल (स्वः) सुख स्वरूप है (तस्मै) उस (ज्येष्ठाय) बड़े (ब्रह्मणे) ब्रह्म को (नमः) नमस्कार है ॥२३॥

२५—यस्य भूमिः प्रमान्तरिक्षमुतोदरम् । दिवं यश्चक्रे मूर्धानं तस्मैज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ३२

(यस्य) जिस के (भूमिः) पृथिवी (प्रमा) पाद हैं (उत) और (अन्तरिक्षम्) आकाश (उदरम्) उदर है (यः) जिस ने (दिवम्) द्यौ को (मूर्द्धानम्) मूर्द्धा (चक्रे) बनाया है (तस्मै) उस० ॥ २४ ॥

२५—यस्य सूर्यश्चक्षुश्चन्द्रमाश्च पुनर्णवः अग्निं यश्चक्र आस्यं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ।३३।

(सूर्यः) सूर्य (च) और (पुनर्नवः) वार २ नवीन होने वाला (चन्द्रमाः) चन्द्र (यस्य) जिस के (चक्षुः) नेत्र हैं (यः) जिस ने (अग्निम्) अग्नि को (आस्यम्) मुख (चक्रे) बनाया है (तस्मै) उस० ॥ २५ ॥

२७—यस्य वातःप्राणापानौ चक्षुराङ्गिरसोऽभवन् । दिशो यश्चक्रे प्रज्ञानीस्तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥३४॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथर्व०काण्ड १० । वर्ग ७। मंत्र ३२-३४

(वात्तः) वायु (यस्य) जिस के (प्राणाऽपानौ) प्राण अपान और (अङ्गिरसः) किरणें (चक्षुः) नेत्र हैं (यः) जिसने (दिशः) दिशाओं को (प्रज्ञानीः) श्रोत्र (चक्रे) बनाया है (त०) ।२६।

२८—न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते।१६।

(ईश्वर) न दूसरा न तीसरा न चौथा भी कहाता है ।२७।

२९—न पञ्चमो न षष्ठः सप्तमो नाप्युच्यते ।१७।

न पांचवा न छठा न सातवां कहाता है ॥ २८ ॥

३०—नाष्टमो न नवमो दशमो नाप्युच्यते ।१८।

न आठवां न नवां न दशवां कहाता है ॥ २९ ॥

३१—तमिदं निगतं सहः स एष एक एकवृदेक एव।२०।

(इदं जगत्) यह जगत् (तम्) उसी को (निगतम्) निश्चित प्राप्त है (सः एषः एकः) वह एक (एकऽवृत्) एक अपने ही आधार है ॥ ३० ॥

३२—सर्वे अस्मिन्देवा एकवृतो भवन्ति ॥२१॥

अथर्व०काण्ड १३ वर्ग ४। मं० १६-२१॥

(सर्वेदेवाः) सब देव (अस्मिन्) इसी में (एकवृतः) एकाधार (भवन्ति) होते हैं ॥ ३१ ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ धर्मोपदेश विषयः ॥

३३–संसमिद्युवसेवृषन्नग्नेविश्वान्यर्यआ। इल-
स्पदेसमिध्यसेसनोवसून्याभर ॥१॥

(हे वृषन्) कामनाओं के वर्षा करने वाले (अग्ने) प्रकाशवान् ईश्वर (अर्यस्त्वम्) स्वमी होकर आप (विश्वानि) सब भूतों को सत्रा (संयुवसे) मिलते हैं आप (इलः) पृथिवी के (पदे) प्रत्येक स्थान पर (सम् इध्यसे) प्रकाशित हो रहे हैं (सः) आप (नः) हमारे लिये (वसूति) धन की (आभर) प्राप्ति कीजिये ॥३३॥

३४–संगच्छध्वंसंवदध्वंसंवोमनांसिजानताम्।
देवाभागंयथापूर्वेसंजानानाउपासते ॥२॥

हे मनुष्यो ! तुम (समगच्छध्वम्) सङ्गत हो (सम्वदध्वम्) संवाद करो और (वः मनांसि) तुम्हारेमन (सम्-ज्ञानताम्) ज्ञान वाले हों (यथा) जैसे (पूर्वेदेवाः) पूर्वदेव (सम् जानानाः) ज्ञानी हुए (भागम्) धर्म का (उपासते) सेवन करते हैं ॥ ३२ ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३५–समानोमंत्रः समितिःसमानी समानं मनः सहचित्तमेषाम्। समानंमंत्रमभिमंत्रयेवः समानेनवोहविषाजुहोमि ॥ ३ ॥

हे मनुष्यो ! तुम्हारा (मन्त्रः) मन्त्र (समानः) समान हो (समितिः) सभा (समानी) समान हो (मनः समानम्) मन समान हो (चित्तम् एषाम्, सह) चित्त एक हो मैं (समानम्, मन्त्रम्) समान मन्त्र (वः) तुम्हारे लिये (अभि-मन्त्रये) पढ़ता हूं (समानेन हविषा) समान भोग से (वः) तुम को (जुहोमि) पालता हूं ॥ ३३ ॥

३६–समानीवआकूतिःसमानाहृदयानिवः। समानमस्तुवोमनोयथावःसुसहासति ॥४॥

ऋग्वेद० मण्डल १०। सूक्त १९१।मं० १-४॥

(वः आऽकूतिः) तुम्हारा अभिप्राय (समानी) एक हों (वः,हृदयानि) तुम्हारे हृदय (समाना) एक हो (वः मनः समानम् अस्तु) तुम्हारा मन एक हो (यथा वः) जिस से तुम्हारी (सुऽसहाऽसति) शोभन एकता हो ॥ ३४ ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

आर्यसमाज के नियम

१–सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।

२–ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, और सृष्टिकर्त्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३–वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

४–सत्य ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

५—सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहियें।

६—संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७—सब से प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार यथायोग्य वर्त्तना चाहिये॥

८—अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये॥

९—प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

१०—सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम पालने में सब स्वतन्त्र रहें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पु० सं० १३ 2.9/63

ओ३म्

पौराणिक धर्म
और
थियासौफ़ी

(प्रथम भाग)

जिस को

परीक्षितगढ़ ज़िला मेरठ निवासी एक आर्य्य ने लिखा और सामवेदभाष्यकार तथा सम्पादक वेदप्रकाश पं० तुलसीराम स्वामी ने अपने

स्वामि-यन्त्रालय-मेरठ में छापा

संवत् १९५७ विक्रमी

प्रथमवार १०००

श्रावण

मूल्य)॥।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमिका

इस पुस्तक में यह दर्शाया है कि पुराणों में बौद्धधर्म श्राद्धखण्डन मांसभक्षणादि घृणित बातें हैं और वेदों को राक्षसधर्म बताया है, तथा सब अवतारों की निन्दा और दोष लगाये हैं परन्तु बुद्ध को निर्दोष अवतार बताया है, इस से सिद्ध है कि पुराण बौद्धों के बनाये हैं। २–यह भी दर्शाया है कि थियासौफी क्या कर रही है। हाल में ही श्रीवेंकटेश्वर समाचार बंबई २०।७।१९०० में छपा है हिन्दू कालेज बनारस में कि दुर्गापूजा की तातील काट कर बड़े दिन की तातील बढ़ा दी हैं। क्या अब भी कुछ सन्देह है। पौराणिक इन को अपना न समझें। विद्वान् इस को विचारें और पढ़ें। भूल क्षमा करें।

आ० कृ० का० एक आर्य्य

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

अब से श्री स्वामी दयानन्दसरस्वती जी ने पुराणों को यथार्थ कथा और आर्य्यावर्त्त की मान्य पुस्तकों की श्रेणी से पृथक् कर दिया है और यह बतला दिया है कि वेदों के अतिरिक्त अन्य ग्रन्थ स्वतःप्रमाण नहीं हैं, तथा यह अठारह पुराण, उपपुराण व्यास जी ने नहीं बनाये। इस बात को हमने अपने बनाये भागवतपरीक्षा और भागवतविचारनामक पुस्तकों में भली भांति समझा दिया है कि पुराण व्यासकृत नहीं है ।।

इत्यादि पुस्तकों से विपक्षियों (ईसाई—मुसलमानों) के फन्दे से बहुत ही लोग बच गये, प्रथम ईसाई लोग पुराणों की घिनौनी शिक्षा दिखा २ कर भोले भाले आर्यसन्तान को ईसाई बनाते थे। परन्तु अब वह उनकी लीला नहीं चलती ।।

अब बहुत से यूरोपीय भी पुराणों को सत्य कहने लगे हैं। और मूर्त्तिपूजा, तीर्थस्नान से मुक्ति, तिलक, माला इत्यादि को मानने लगे हैं,इस से लोग यह न समझें कि वह लोग सत्य चित्त से पुराणों को मानने लगे। नहीं २ वह केवल ऊपर से ही दिखाते हैं, हाथी के

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दान्त खाने के और दिखाने के और होते हैं ॥

क्योंकि यदि वह सत्य धर्म समझ कर वेद स्मृति पुराण मन्त्र तन्त्रों को मानते होते तो यह तो शोचिये कि अब तक वलायतों में बहुत से अंग्रेज़ आदि थियासोफ़िस्ट हो गये हैं। हमारे बहुत से भोले पौराणिक भाइयों ने यह समाचार अख़बारों में पढ़ा था कि स्वामी विवेकानन्द जी ने अमेरिकादि देशों में ५००० शिष्य किये हैं। वह सब पुराणों के मानने वाले यदि सत्य अन्तःकरण से होते तो क्या अब तक वहां कोई भी भक्त ऐसा न होता जो एक शिवालय ठाकुरद्वारा बनवाता। हम तो कर्नल आलकाट और मिसेस ऐनीबिसेन्ट को जब पौराणिक समझें कि वह जैसे यहां मन्दिरों के दर्शन करती थीं ऐसे ही वलायत में भी अधिक नहीं तो दोनों समय शालिग्राम नर्मदेश्वर की पूजा किया करतीं, मन्दिर बनवातीं, भारतवर्ष से पण्डितों को बुलाकर कथा बंचवातीं। देखो एक आगरे में राय शालिग्राम ने राधास्वामी पन्थ चला आया है उन का महाप्रसाद डाक में नित्यप्रति पार्सल होकर जाता है। भला मथुरा के कितने महामन्दिरों

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का महाप्रसाद वलायत के भक्त अंग्रेज़ मंगाते हैं? त्रिवेणी के जल और चरणामृत की कितनी पेक हो हो कर शीशी बोतल अमेरिका की डाक में रवाना होती हैं? एक भी नहीं। हमारी समझ में यह कोई कार्य भी नहीं होता है। अब इन हिन्दुओं को फिर उसी पुराणों के घिनौने घेर में घेरना चाहते हैं। हमने जहां तक इन थियासाफ़िस्टों को देखा है, केवल प्रार्थना की शिक्षा मात्र है। क्योंकि कभी यह १६ संस्कार तो क्या यज्ञोपवीत भी नहीं कराते। हम भी प्रसन्न होते कि थियासाफ़िस्टों में वेदध्वनि होती, विवाह समय वैदिकप्रतिज्ञा होतीं। बताइये तो सही कितने अंग्रेज़ों ने मृतशय्यादान किया है?। आठ म-हादान किये? वा गोदान किये? कितनी गायत्री जपवाई? पिण्डदान किये? सो कुछ नहीं॥

हमारी समझ में तो यही आया है कि यह सब प्रपञ्च इसी लिये है कि यदि पुराणों की शिक्षा से लोग निकल गये तो ईसाई मत में कैसे फंसेंगे। इस लिये पु-राणों की सत्यकथा बताकर इस समय साधारण हिन्दुओं को अपनी ओर करलेना और फिर उसी अन्धकार में जाले हुवों को ईसाई जाल में फंसाने का अच्छा मौक़ा होगा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रिय सनातनधर्मियो ! ज़रा यह तो बताइये कि जब आप के मत में सिवाय विप्रवंश के और किसी को वेदाधिकार ही नहीं और भारतवर्षके सिवाय अन्य द्वीपों के मनुष्यों को आप म्लेछ मानते हैं और समुद्रयात्रा से धर्म भ्रष्ट कहते हैं तब आप अंग्रेज़ों को धर्मगुरु किस मुख से कहते हैं और जो यहां के मनुष्य वलायत हो आवें उन का तो कोई प्रायश्चित्त भी आपने निर्णय नहीं किया, परन्तु जो ख़ास वहीं के खेत के हैं, उन से ऐसी प्रीति कि धर्मगुरु बना लिये। "ऐसी बहू मत देवो दाता। घर से वैर अपर से नाता"। ठीक वही कहावत है। अब ज़रा इन शङ्काओं का उत्तर हम पौराणिकों से चाहते हैं और आशा करते हैं कि यदि आप से न बने तो गुरु से बूझ कर बताइये—

विष्णुपुराण की परीक्षा

पाठकगण ! आज हम विष्णुपुराण के कुछ थोड़े से श्लोक दृष्टिगत कराते हैं। क्योंकि निर्णयसिन्धु आदि बड़ी २ पोथियों में और अनेक ग्रन्थों के टीकाकारों ने इसी विष्णुपुराण के बहुधा प्रमाण दिये हैं। और

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इमसे कई पौराणिकों के अग्रगण्य पण्डितों ने भी विष्णुपुराण ही को अधिक प्रामाणिक बताया है। उस का मुख्य कारण तो यह है कि श्रीस्वामी जी महाराज ने सत्यार्थप्रकाश में इस की कम ख़बर ली है इसी कारण इस विष्णुपुराण का भेद बहुत से सामाजिक भद्रजनों से छिपा है। हमने इस की महिमा पौराणिकों के मुख्य पत्र हिन्दी बंगवासी में भी बहुत ही छपी देखी तो हम को इस के देखने की बड़ी ही उत्कण्ठा हुई और एक दिन रात्रि में मेरठ की टौनहाल की लायल लाइब्रेरी में जाकर मूल विष्णुपुराण को देखा और वहां से यह निम्नलिखित श्लोक हमने नोट करलिये और फिर बंगवासीकृत तर्जुमे को भी देखा, उस में भी यही अर्थ देखा। अतः अर्थ में कुछ विवाद नहीं है। विष्णुपुराण अंश ३ अध्याय ३ में यह बताया है कि अबतक सृष्टि के प्रारम्भ से २८ द्वापर बीते हैं। प्रत्येक द्वापर में व्यास रूप बनकर विष्णु भगवान् १८ पुराणों को इस कारण बनाते हैं कि कलियुग में थोड़ी अवस्था और अल्प बुद्धि वाले लोग वेदाशय को नहीं समझेंगे, अतः पुराणों ही से

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्म्ममार्ग का अवलम्बन करके उद्धार पावेंगे। यही कथा देवीभागवत के प्रथमस्कन्ध में भी लिखी है, अतः हम उन विष्णुपुराण के श्लोकों को और उन के अर्थ को बोधार्थ नीचे चक्रमें लिखेंगेः—

अंश ३ अध्याय ३ मैत्रेयं प्रति पराशर उवाच

यस्मिन्मन्वन्तरे ये ये व्यासास्तांस्तान्निबोध मे।
यथा च भेदःशाखानां व्यासेन क्रियते मुने॥८॥
अष्टाविंशतिकृत्वोवैवेदा व्यस्तामहर्षिभिः।
वैवस्वतेन्तरे तस्मिन् द्वापरेषु पुनः पुनः ॥ ९॥
वेदव्यासाव्यतीताये अष्टाविंशतिसत्तमाः।
चतुर्धा यैःकृतो वेदो द्वापरेषुपुनः पुनः ॥ १०॥
द्वापुरे प्रथमे व्यस्ताः स्वयं वेदाः स्वयंभुवा।
द्वितीये द्वापरे चैव वेदव्यासः प्रजापतिः ॥ ११॥
तृतीये चोशना व्यासश्चतुर्थे च बृहस्पतिः।
सवितापञ्चमेव्यासो मृत्युःषष्ठेस्मृतःप्रभुः ॥१२॥
सप्तमे च तथैवेन्द्रोवसिष्ठश्चाष्टमे स्मृतः।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारस्वतश्च नवमे त्रिधामा दशमे स्मृतः ॥१३॥
एकादशे तु त्रिवृषा भरद्वाजस्ततःपरम् ।
त्रयोदशे त्वान्तरिक्षोवप्री वापि चतुर्दशे ॥१४॥
त्रय्यारुणःपञ्चदशे षोडशे तु धनंजयः ।
कृतंजयःसप्तदशे ऋणज्योष्टादशे स्मृतः ॥१५॥
ततोव्यासोभरद्वाजो(१९)भरद्वाजात्तु गोतमः(२०)
गोतमादुत्तमो(२१) व्यासोहर्य्यात्मायोभिधीयते
१६अथहर्यात्मनोवेनः(२२)स्मृतोराजस्त्रवास्तुयः
सोमः(२३)शुष्मायणस्तस्मात्तृणविन्दुरितिस्मृतः
॥ १७ ॥ ऋक्षो (२४) भूद्भार्गवस्तस्माद्वाल्मी-
किर्योभिधीयते । तस्मादस्मतूपिता (२५)शक्ति-
र्व्यासस्तस्मा (२६) दप्यहं मुने ॥१८॥ जातू (२७)
कर्णोऽभवन्मत्तः कृष्णद्वैपायन(२८) स्ततः ।
अष्टाविंशतिरित्येते वेदव्यासाःपुरातनाः ॥१९॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्णुपुराण में,	देवीभागवत में	विष्णुपुराण में,	देवीभागवत में
१ ब्रह्मा	..	१५ त्रय्यारुणि	..
२ प्रजापति	..	१६ धनञ्जय	..
३ उशना	..	१७ कृतञ्जय	=मेधातिथि
४ बृहस्पति	..	१८ ऋणज्य	=व्रती
५ सविता	..	१९ भरद्वाज	=अत्रि
६ मृत्यु	..	२० गोतम	..
७ इन्द्र	..	२१ उत्तमहर्यात्मा	..
८ वसिष्ठ	..	२२ वेन राजस्रवा	..
९ सारस्वत	..	२३ सोमशुष्मायण	..
१० त्रिधामा	..	२४ ऋक्षवाल्मीकि	=तृणबिन्दु
११ त्रिवृषा	..	२५ शक्ति	=भार्गव
१२ भरद्वाज	..	२६ पराशर	=शक्ति
१३ अान्तरिक्ष	..	२७ जातूकर्ण	..
१४ वप्री	=धर्म	२८ कृष्णद्वैपायन	..

पाठकों को यह भी अवगत हो कि देवीभागवत और विष्णुपुराण के व्यासों में भी भेद है। संख्या १ से १३ तक कुछ भेद नहीं आगे १४ वें का नाम विष्णुपुराण वप्री कहता है, देवीभागवत धर्म, १७ वें का विष्णुपुराण कृतंजय, देवीभागवत मेधातिथि इत्यादि भेद ऊपर देखिये॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस का उत्तर हम पाठकोंपर ही छोड़ते हैं। इन सब प्रमाणों से यह भले प्रकार सिद्ध हो चुका है कि १८ पुराण जो अब माने जाते हैं इस कलियुग ही के लिये बनाये गये हैं, जिस से लोग धर्मानुकूल चलें, परन्तु हम जहां तक देखते हैं पुराणों में ऐसी २ घिनौनी शिक्षा पाई जाती हैं कि उन से धर्मको महाहानि पहुंचती है। श्राद्ध करना सब पुराणों का सिद्धान्त हैं। परन्तु विष्णुपुराण अंश ३ अध्याय १६ में लिखित धर्मका पालन करने से धर्म भ्रष्ट होना पड़ता है॥

हविष्यमत्स्यमांसैस्तु शशस्य शकुनस्य च॥
सौकरच्छागलैणेयरौरवैर्गवयेन च॥१॥
औरभ्रगव्यैश्च तथा मासवृद्ध्या पितामहाः।
प्रयान्ति तृप्तिं मांसैस्तु नित्यं वार्ध्रीणसामिषैः॥२॥

श्राद्ध में पितरों की तृप्ति हविष्य अन्न से एक मास, मच्छी के मांस से २ मास, शश (खरगोश) के मांस से ३ मास, शकुन के मांस से ४ मास, सूवर के मांस से ५ मास, बकरे के से ६ मास, ऐणेय (भेड़) के से ७ मास,

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुरु के से ८ मास, गवय (नील गाइ) के से ९ मास, शरभ के से १० मास, गौ के से ११ मास तक और वा. ध्रीणस के मांस से नित्य ही तृप्ति होती है ।

भला इन के मांस से श्राद्ध करे तब ब्राह्मण खावें, या कुत्ते आदि ? यह भी ध्यान रहे कि श्राद्ध में ब्राह्मण भी बड़े विद्वान् शुद्ध पवित्र ही जिमाने पुराणों ने माने हैं भला फिर वह कैसे खा सकते हैं ॥

दो अध्याय आगे इसी अंश में अध्याय १८ में भली भांति वेदधर्म की निन्दा की है और वेदधर्म को राक्षसी धर्म बताया है । देखो नीचे लिखे श्लोकः—

विष्णुपुराण अंश ३ अध्याय १८ असुरों और मायामोह का संवाद

जगदेतदनाधारं भ्रान्तिज्ञानार्थतत्परम् ॥ १८ ॥
मैत्रेय ! तत्यजुर्धर्मं श्रुतिस्मृत्युदितं परम् ॥२१॥
नैतद्युक्तिसहं वाक्यं हिंसा धर्माय नेष्यते ।
हवींष्यनलदग्धानि फलायेत्यर्भकोदितम् ॥२५॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यज्ञैरनेकैर्देवत्वमवाप्येन्द्रेण भुज्यते । शम्या-
दि यदि चेत्काष्ठं तद्वरं पत्रभुक्पशुः ॥२६॥ नि-
हतस्य पशोर्यज्ञे स्वर्गप्राप्तिर्यदीष्यते । स्वपिता
यजमानेन किन्नु तस्मान्न हन्यते ॥ २७ ॥ तृ-
प्तये जायते पुंसो भुक्तमन्येन चेत्ततः । दद्या-
च्छ्राद्धं श्रद्धयान्नं न वहेयुः प्रवासिनः ॥ २८ ॥

असुरों और माया मोह का संवाद

यह जगत् बे सहारे अनाधार है, मिथ्या ज्ञान के अ-
र्थों में तत्पर है ॥१८॥ हे मैत्रेय! यह सुन राक्षस लोगों ने
श्रुति और स्मृति में कहा परमधर्म छोड़ दिया ॥ २१ ॥
यह वचन युक्ति के सहने वाले नहीं हैं और न धर्म
के लिये हिंसा इष्ट है । आग में फूंके हुवे हवि
फलदायक हैं, यह बालवचन है ॥ २५ ॥ और यह भी
कि अनेक यज्ञ से इन्द्र पदवी मिलती है जिस को
देवता हो कर इन्द्र भोगता है । यदि शमी आदि
काष्ठ इन्द्र खाता है तो इस से पत्ते खाने वाला पशु
अच्छा है ॥ २६ ॥ यदि यज्ञ में मारा हुवा पशु स्वर्ग को

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्त होता है यह ठीक है तो यजमान अपने पिता हो को मार कर स्वर्ग को क्यों नहीं पहुंचाता ॥ २७ ॥ यदि अन्य का भोजन किया अन्य पुरुष की तृप्ति के लिये हो सके तो श्रद्धापूर्वक श्राद्धान्न ही देदिया जाय किन्तु परदेश को जाने वाले अपने साथ अन्न लेकर न चला करे ॥२८॥

इत्यादि प्रमाणों से सिद्ध होता है कि यह मायामोह चार्वाक का मत भली भांति कहता है। हिन्दी बंगवासी ने अपने तर्जुमे में भी साफ़ २ चार्वाक का नाम लिया है। जिस समय वाममार्गियों ने यज्ञ में पशुवध चलाया और श्राद्ध के बहाने मांस का पिण्ड दिवाया और मृतपितरों का नाम लेकर ब्राह्मणों को भी जिमाया तब बौद्ध चार्वाक मत आर्य्यावर्त्त में आया था। उस में वेदों के तत्वज्ञाता न हुवे, केवल युक्तिसिद्ध हुवे। उन्होंही ने मांस होम तथा श्राद्ध का खण्डन भली भांति किया है। जब उन के सामने वामियों ने वेद के मन्त्रों का अर्थ का अनर्थ कर प्रमाण दिया तब उन्होंने ईश्वर और ईश्वरी विद्या वेद को कहदिया कि " त्रयो वेदस्य कर्त्तारो धूर्त्तभण्ड निशाचराः " अर्थात् वेदों के कर्त्ता धूर्त्त भांड और राक्षस

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। इसका विशेष वर्णन सत्यार्थप्रकाश के १२ समुल्लास में श्री स्वामीजी ने आरम्भ में ही चार्वाक मत दर्शाते हुवे लिखा है। उन श्लोकों और इन विष्णुपुराण के श्लोकों के अर्थ में बिल्कुल भी फ़र्क़ नहीं है ।।

हमारी सम्मति में तो यह सब पुराण जिनमें कि बुद्ध को अवतार माना है, बौद्धों ने बनाये हैं अथवा हों तो प्रथम बहुत ही स्वल्प रूप में हों। बौद्धों ने इन में खूब ही घिनौनी कथा मिलाई हैं जिनमें वेदों को राक्षसी धर्म्म बताया है जैसा कि हम पूर्व इस विष्णुपुराण के विषय में दिखा चुके हैं और हिन्दुओं के समस्त देवतों की निन्दा की है परन्तु अपने बुद्ध को निर्दोष अवतारों में गिना दिया है। जिस की मूर्त्ति जगन्नाथ में बताते हैं और वहां सब हिन्दू एक होकर भात खाते हैं।।

पुराणों में देवनिन्दा

श्रीमद्भागवत

पुस्तकालय ... काँगड़ी

नैतत्पूर्वैः कृतं त्वद्य न करिष्यन्ति चापरे।
यस्त्वं दुहितरं गच्छेरनिगृह्याङ्गजं प्रभो ॥२१॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मरीच्यादिक पुत्र कहते हैं कि हे पिता ! ऐसा नीच काम पूर्वकाल में व वर्त्तमान व भविष्यत् में किसीने नहीं किया, न करता है, न करेगा। जो तुम काम को वश में न करके दुहिता (पुत्री) से गमन करते हो ॥

प्रजानाथं नाथ प्रसभमभि कं स्वां दुहितरं, गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषुमृक्षस्य वपुषा। धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्राकृतममुम्, त्रसन्तं तेद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः ॥ २२ ॥

भाषाटीका अङ्गद शास्त्रिकृत छापा मुं० नवलकिशोर सचित्र स्तोत्र श्लोक २२ भाषाटीका पण्डित हरिवंशलाल जी देहली निवासीकृत--

हे नाथ! तुमारा बाण ब्रह्मा को आज तक नहीं छोड़ता, ब्रह्मा अपने शरीर को त्याग के हरिण का शरीर धारण करके आकाश में जा बैठा, और कामदेव जिस को बाधा कर रहा है, अपनी जो पुत्री है उस के साथ रमण करने की जा की इच्छा है, और बेटीने वास्ते अपने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बचने के हिरनी का स्वरूप धार लिया है। ब्रह्मा कहने लगे कि तू हिरनी होगई तो मैं भी हरिण होकर प्राप्त हुआ हूं। तब पुत्री कहने लगी कि कोई ऊपर है वा नहीं। हे नाथ! धनुष वाण हाथ में ले आप का तीर खोटे कर्म की इच्छा करने वाले ब्रह्मा जी के बदन को फाड़ कर साफ़ निकल गया। सो आज तक ब्रह्मा उस बाण से त्रास को प्राप्त हो रहा है। हे शिवजी! संध्या-नाम करके जो ब्रह्मा की बेटी है उसकी फ़र्याद, तुमने ही सुन कर यह सज़ा ब्रह्मा को दी ॥ २२ ॥

पद्मपुराणान्तर्गत कार्त्तिक माहात्म्य अ० १६ श्लोक २४। २५। २६। २७।

वृन्दामालिङ्ग्य तद्वक्त्रं चुचुम्बे प्रीतिमानसः।
अथ वृन्दापि भर्त्तारं दृष्ट्वा हर्षितमानसा ॥ २४ ॥
रेमे तद्वनमध्यस्था तद्युक्ता बहुवासरम्।
कदाचित्सुरतस्यान्ते दृष्ट्वा विष्णुं तमेव हि॥२५॥
निर्भर्त्स्य क्रोधसंयुक्ता वृन्दा वचनमब्रवीत्॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृन्दोवाच—

धिक् त्वदीयं हरे शीलं परदाराभिगामिनः।
ज्ञातोऽसि त्वं मया सम्यक् मायी प्रत्यक्षतापसः
॥ २६ ॥ २७ ॥

भाषा टीका केशवप्रसाद शर्मा द्विवेदी कृत छापा वेङ्कटेश्वर मुम्बई। देखो यहां विष्णु भगवान्ने जलन्धर के रूप में वृन्दाके पतिव्रत धर्म को बिगाड़ा और परस्त्रीगमन किया॥

वृन्दा को आलिङ्गन करके प्रसन्न मन हो, चुम्बन करते भये, अनन्तर वृन्दा पतिको देख मन में हर्षित होती भई ॥२४॥ उस बाग़ में रहकर पति समेत बहुत दिनों तक विहार करती भई॥ (नारद बोले) कभी भोग के अन्त में उसी पति को विष्णु के रूप में देखती भई ॥२५॥ फिर क्रोधित हो धमका के वृन्दा वचन बोलती भई (वृन्दा बोली) हे हरि! पराई स्त्री के साथ भोग करने हारे जो तुम हो, तिनके शील (आदत) को धिक्कार है। प्रत्यक्ष में तपस्वी रूप के धारण करने हारे तुम भली भांति मायावी जाने गये २६।२७ इस के बाद वृन्दा शाप देकर मरगई, और उस की भस्म में विष्णु लोटने लगे॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततोहरिस्तामनुसंस्मरन् मुहुर्वृन्दाचिताभस्मरजोऽवगुण्ठितः। तत्रैव तस्थौ मुनिसिद्धसंघैः प्रबोध्यमानापि ययौ न शान्तिम् ॥ ३१ ॥

भावार्थ—ता पीछे हरि वृन्दा का बारम्बार स्मरण करते हुए उस की चिता की भस्म में लोटते भये वहीं स्थित रहे और मुनियों तथा सिद्धों के समूह करके समझाये गये भी शान्ति को प्राप्त न हुवे॥३१॥ शिवपुराण अध्याय ४१ में-

एवं सेवां प्रकुर्वन्तो ध्यानमार्गपरायणाः।
ते कदाचिद्वने याताः समिदाहरणाय च ॥ ८ ॥
एतस्मिन्नन्तरे साक्षाच्छंकरो नीललोहितः।
विरूपं च समास्थाय परीक्षार्थं समागतः॥ ९ ॥
दिगम्बरोऽतितेजस्वी भूतिभूषणभूषितः ॥ चेष्टां
चैव कटाक्षं च हस्ते लिङ्गं च धारयन् ॥ १० ॥
मनांसि मोहयन् स्त्रीणामाजगाम हरःस्वयम् ॥
तं दृष्ट्वा ऋषिपत्न्यस्ताःपरं त्रासमुपागताः॥ ११ ॥
विह्वला विस्मिताश्चैव समाजग्मुस्तथा पुनः ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलिलिङ्गुस्तदा चान्याः करं धृत्वा तथा
पराः ॥१२॥ एतस्मिन्नेव समये ऋषिवर्याः
समागमन् । विरुद्धं वृत्तकं दृष्ट्वा दुःखिताः क्रो-
धमूर्छिताः ॥ १३ ॥ तदा दुःखमनुप्राप्ताः कोऽयं
कोऽयं तथाऽब्रुवन् ॥ यदा च नाक्तवान् किञ्चि-
त्तदा ते परमर्षयः ॥ १४ ॥ ऊचुस्तं पुरुषं ते
वै विरुद्धं क्रियते त्वया । त्वदीयं चैव लिङ्गं च
पततां पृथिवीतले ॥ १५ ॥ इत्युक्ते तु तदा
तैस्तु लिङ्गं च पतितं क्षणात् ॥ १६ ॥

भाषा टीका—एक दारु नामक वन था । उस में शिवभक्तिपरायण ऋषि लोग शिवजी की पूजा किया करते थे। एक दिन वे ऋषि लोग समिधा लेने के लिये जङ्गल को गये । इसी वक्त परीक्षा करने के लिये नीललोहित साक्षात् शङ्कर भयानक रूप बनाये हुए नंगे बदन, तेजस्वी, भस्म रमाये, हंसते हुए, नेत्रों से कटाक्ष करते हुए ०० को हाथ में पकड़े हुए, ऋषिस्त्रियों के मनों को मोहित करते हुए उस वन में आये, जहां वे ऋषि रहते थे। उन को देख ऋषियों की स्त्रियां बड़े त्रास को प्राप्त हुईं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

९६22.G
१५-५-२००९ 2.9/63
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे स्त्रियां घबराईं और विस्मित हुईं । आये हुए पुरुष को देख, हर्ष के साथ वे ऋषियों की स्त्रियां हाथ से हाथ मिलाकर सब आलिङ्गन करने लगीं । इतने में ऋषि लोग आ गये और शिव जी के विरुद्ध वृत्त को देख दुःखित हुए, क्रोध से विह्वल हो कहने लगे कि "ये कौन है" २ जब (शिव जी) कुछ न बोले, तब ऋषियों ने शाप दिया कि तुमने बहुत बुरा किया, तुम्हारा ०० कट कर गिर पड़े । इतना कहते ही क्षण मात्र में ०० पृथिवी पर गिर पड़ा ॥

अब अन्त में सर्व सज्जनों से प्रार्थना है कि आर्य लोग तो ब्रह्मा विष्णु व शिव को पवित्र निष्पाप और ज्ञानी बताते और इसी वास्ते संसार को पुराणों के जाल से बचाते हैं और कहते हैं कि १८ पुराण व्यास जी कृत नहीं हैं । परन्तु अब पौराणिक भाइयों से भी प्रश्न है कि आप देवनिन्दा के पाप से बचने का क्या उत्तर देते हैं और उक्त वचनों का क्या अर्थ करते हैं । इत्यलम् ॥

और महाभारत के आदि पर्व में समस्त भारत की कथा पर्व सूची श्लोक बद्ध पाई जाती है जिस से साफ़ ही प्रतीत होता है कि पुराणों ही में नहीं महाभारत में भी बहुत ही कमी और अधिकता और बढ़ाना घटाना ख़ूब ही मनमानी शुद्धि "करेक्शन" हुवे हैं ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्राद्धपर्व ततो ज्ञेयं कुरूणामूर्ध्वदैहिकम्।
चार्वाकस्य वधः पर्व रक्षसो ब्रह्मरूपिणः।
ततः परं श्राद्धपर्व ॥

भारत आदि पर्व २। ९५

अर्थ—इस से आगे ब्राह्मणरूपी राक्षस चार्वाक का वध पर्व है, फिर श्राद्ध पर्व है। इस को यह पद देख बड़ी चिन्ता हुई कि चार्वाक का नाम श्राद्धपर्व के पास क्यों है, क्या चार्वाक भारत से पूर्व था?

सूत शौनक जनमेजय वैशम्पायन के वचन चार्वाक का वध वर्णन करैं, यह क्यों? हमने महाभारत की खोज की तौ यह चार्वाकवध पर्व कहीं भी नहीं मिला। तब यही अनुमान होता है कि कभी किसी ने यह पर्व भी शामिल किया होगा, तभी यह सूची बनाई है। परन्तु जब कुछ २ बुद्धि आई तौ जाना कि इस से यह पुस्तक नवीन सिद्ध होगी, तब पीछे निकाल दिया है, इस का विशेष वर्णन हम "भारतविचार" नामक पुस्तक में लिखेंगे कि भारत में कैसी २ कमी बेशी की है॥

पौराणिकों का प्राचीन प्रेमी एक आर्य

परीक्षितगढ़ निवासी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूल्य घटाये हुवे पुस्तक ।

सामवेदभाष्य का पूर्वार्ध समस्त हो गया । कमीशन छोड़कर डाकसहित ४) मनुभाषानुवाद स० १॥) सजिल्द १॥।) सुनहरी छापा ५) श्वेताश्वतरोपनिषद्भाष्य दर्शनीय भाष्य है अबतक संस्कृत और भाषामें ऐसा भाष्य दूसरा नहीं बना है मूल्य ।-) दयानन्दतिमिरभास्कर का उत्तर "भास्करप्रकाश" १। २। ३ समुल्लास ।=) ४। ५। ६ समुल्लास ॥-) ७ ; ८। ९। १० समुल्लास ॥।≡) ११ वां समुल्लास ॥) संपूर्ण २।=) कमीशन छोड़कर २) विदुरनीति सरल भाषा टीका सहित ।-) कपड़े की जिल्द ।≡) श्लोकयुक्त वैदिक निघण्टु ≡) वेदप्रकाश मासिकपत्र के प्रथम भाग १ वर्ष का ॥=) द्वितीयभाग ॥=) तृतीय भाग ॥=) तीनों भाग एक साथ नक़द १॥) मात्र । संस्कृत स्वयं सिखाने वाली संस्कृतभाषा प्रथम पुस्तक)॥ द्वितीय पुस्तक -) तृतीय पुस्तक =)॥ चतुर्थ ।=) चारों की कच्ची जिल्द।≡) पक्की जिल्द ॥।) ऋगादिभाष्यभूमिकेन्दुपरागे प्रथमोंशः-)॥द्वितीयोंऽशः -)॥। नियोगनिर्णय =) अज्ञाननिवारण (पादरीसाहब का उत्तर) मूल्य -)॥ मुक्ति और पुनर्जन्म पर प्रसिद्ध व्याख्यान -)॥सत्यार्थप्रकाशसङ्ग्रह बालकों को पढ़ाने योग्य है ≡)शास्त्रार्थकिराणा -)वैदिकदेवपूजा प्रसिद्ध व्याख्यान -)ईश्वर औरउसकी प्राप्ति—यह भी प्रसिद्ध व्याख्यान है -)चाणक्यनीतिसार

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषा टीका -)।प्रश्नोत्तररत्नमाला -) भजनेन्दु-नये खड़ताली भजनों सहित -) नालिकाविष्कार-जिस में प्राचीन तोप बन्दूक आदि के प्रमाण हैं)॥। आर्यसमाज के नियम नागरी ≡)। सैंकड़ा, अंग्रेज़ी में ।) सैंकड़ा। व्याख्यान का विज्ञापन जो चार जगह ख़ानापुरी कर के सब उपदेशकों के काम में आता है =) सैंकड़ा। भजन इक्कीसी)॥ विवाह समय वर वधू के पठनीय मन्त्र अर्थसहित-इस में आर्यविवाहमङ्गलाष्टक और विवाह तथा हवन की सामग्री भी छपी है)॥ पञ्चकन्याचरित्र नियोग विषय में)॥ अक्षरप्रदीप वर्णमाला)। नमस्ते पर व्याख्यान)। रामायण का आल्हाछन्द १ भाग)। दूसराभाग)॥ लावनी फूट)। सन्ध्योपासन जो आर्यप्रतिनिधि सभा को भेंट किया ट्रैकूट है)। १०० का १।) ५०० का ५) पञ्चमहायज्ञ मूलमात्र)। में दो, ।।=) के १०० और २।।) के ५०० तथा ४) के १००० इकट्ठे लेकर बांटने योग्य हैं। आर्यचर्पटपञ्जरिका प्रसिद्ध भजन)। के दो। एक पुस्तक में ३ आरती)।के३पुस्तक।=) के १०० सत्यबोध-)शास्त्रार्थरानीगंज)।।ऋषिचरित्र-)भजनपुष्पावली।)टकेसेरमुक्ति)।।भोजनविवेक -)। सन्ध्योपासन-मीमांसा-) ईसाईमतपरीक्षा)।। वृद्धविवाहनाटक -) नागरीरीडर नं०२मूल्य -)

☞सस्ता कमीशन-ऊपर मूल्य घटाने पर भी कमीशन और छोड़ा जायगा २॥) में ।।) और १०) में ३) छोड़े जायंगे। सर्वसाधारण को सामवेद उपनिषद्वा-व्यादि पारमार्थिक और लौकिक सुधार के पुस्तक लेने का अच्छा अवसर है।

पता-तुलसीराम स्वामी-मेरठ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

2.1/62

नालिकाविष्कार ॥

अर्थात्

तोप बन्दूक और बारूदकी विधिका प्राचीन आर्य्यावर्त्तमें आविष्कार (ईजाद)

जिसको

श्रीयुत बा० गङ्गाप्रसाद एम. ए. प्रोफ़ेसर मेरठ कालिजने सङ्ग्रह किया.

और

पं० तुलसीराम स्वामी सम्पादक वेदप्रकाशने

अपने

स्वामियन्त्रालय मेरठ

में मुद्रित और प्रकाशित किया ॥

संवत् १९५३ वि० । १००० ॥ १५ । २ । ९७ ई०

मूल्य १ प्रति)॥।

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आविष्कर्ता एरिस्टाटल् समझा जाता है) का सबसे पहिले आविष्कार भारत में ही हुआ था। यह बात प्रसिद्ध है कि एरिस्टाटल (अरस्तू) जगद्विजयी सिकन्दर का शिक्षक था और वह सिकन्दर के साथ आर्य्यावर्त्त में आया था बहुधा इतिहासों के कई स्थलों में ऐसा लेख है कि अरस्तू आर्य्यावृत्तके अनेक विज्ञानवित्तों (फ़िलासफ़रों)से मिला और विज्ञान (फ़िलासफ़ी) की बहुतसी पुस्तकें यहां से लेगया। क्योंकि आर्योंका न्यायदर्शन बहुत प्राचीन है और यूनानमें अरस्तूसे पहले तर्कशास्त्र (लाजिक मंतिक) को कोई जानता भी नथा और संस्कृत और यूनानी तर्क शास्त्रोंके वादक्रम भी लगभग एक ही प्रकारके हैं इस कारण इस विषयमें कोई सन्देहनहीं रहता कि अरस्तू आर्य्यावर्त्तसे तर्कशास्त्रके कुछ ग्रन्थ ले गया और अपनी बुद्धि बलसे उनको यत्किञ्चित सुधारकर यूनानमें प्रचरित किया। इस लेखमें हम यह सिद्ध करनेका साहस करेंगे कि तोप और बन्दूक सबसे पहले आर्य्यावर्त्तमें ही आविष्कृत हुई थीं॥ थोड़े दिन हुए कि योरोपमें बारूदका आविष्कर्त्ता एक जर्मनी माना जाताथा परन्तु वर्त्तमान समयकी जांचसे यह बात अमूलक ठहर गईहै। सुप्रसिद्धग्रन्थ एनसाइक्लोपीडिया ब्रटेनिकामें बारूद विषय पर विचार करते हुये मे-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जर जनरल डवलिउ, एच, वार्डेल लिखते हैं:—

"यह बात विचारणीय है कि बारूदकी आविष्कृतिके विषयमें लोगोंको सन्देहहै (कि कहांसे इसकी आविष्कृति हुई)—एवं सन्देहही इसकी प्राचीनताका प्रमाणहै परन्तु इसमें कुछभी सन्देह नहीं है कि इसको जर्मनीके मांक-वरथोलडस् शवाटरनने १३२०ई० में आविष्कृत नहीं किया था जैसा कि समझा जाताहै ॥

लगभग १८७५ ई० तक संस्कृतमें कोई ऐसी पुस्तक नहीं मिलीथी कि जिसमें स्पष्टतः तोपका कुछ वर्णन हो। इसमें कुछ सन्देह नहीं कि वाल्मीकीयरामायण तथा महाभारत और तैत्तरेय संहिता तथा अन्यान्य प्राचीन पुस्तकोंमें शतघ्नी आदि बड़े २ अस्त्रोंका वर्णनहै कि जिनसे एकही बारमें शतशः मनुष्योंका काम तमाम होजाता था परन्तु क्योंकि उक्त पुस्तकोंमें उन अस्त्रोंके बनानेका नियम अङ्कित नहीं है अतएव अनेक लोग उन ग्रन्थोंके कथनको अप्रामाणिक तथा अत्युक्ति समझतेथे तिस पर भी योरोपके विज्ञानवित्तोंका यही विचार था कि बारूदकी आविष्कृति आर्य्यावर्त्त वा चीन में हुई थी। जिसके विषयमें निम्नलिखित लेख उपरोक्त एनसाइक्लोपिडिया ब्रटेनिकामें मुद्रितहै—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"उन सब पुरुषोंकी जांचका झुकाव जिनकी सम्मति प्रामाणिक मानीजाती है इस ओर मालूम होताहै कि बारूद जैसी किसी उड़ाने वाले पदार्थका आविष्कार दूरस्थ पूर्वी देशमें हुआथा वह वहां अति प्राचीन समयसे कार्यमें लाया जाता था, यद्यपि इसमें सन्देह नहीं कि उसका उड़ानेके लिये प्रयोग करना बहुत पीछे आरम्भ हुआ। सम्भव है कि इस विद्याका आविर्भाव शोरेके अद्भुत गुणोंके अकस्मात् मालूम होजानेसे हुआ हो जो भारत और चीन के सुविस्तृत मैदानोंमें बहुतायत के साथ मिट्टीमें मिला हुआ पाया जाताहै। भोजन बनानेमें जो लकड़ी काममें लाई जाती है उसके जलते हुए कोयलोंसे बारूदके दो विशेष अवयव सुगमतासे इसमें मिल सक्तेहैं और तब गरमी के कारण थोड़ी ज्वाला पैदा होगी। वस्तुतः कोयलों पर कच्चे शोरेके अकस्मात् गिरजाने से उसकी आग पैदा करने और भड़कानेकी अद्भुतशक्ति प्रकट हो जायगी। अतएव शोरे और कोयलेका मिलजाना और न्यूनाधिक शक्ति सम्पन्न एक मिश्रित पदार्थका बनजाना सहजही अनुमानमें आसक्ताहै। गन्धक पश्चात् मिलाई गई होगी और उड़ानेके लिये उसका होना अत्यावश्यक भी नहीं है। हमारी वर्त्तमान बारूद उस मिश्र पदार्थकी केवल एक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वाङ्ग पूर्ण उन्नतरूप है"।

इसके अतिरिक्त उक्त पुस्तकमें यह भी लिखा हुआ है—

"राकेट (एक प्रकारका अग्निबाण) यूनानके महाराज लीयोके समय ८८० ई० के लग भग काममें लाया गया था और भारतमें निस्सन्देह अति प्राचीन समयसे मालूमथा और इन राकेटोंमें कोई २ बहुत बड़े २ बनाये जाते थे। १८७५ ई० के पूर्व भी योरोप वालोंका बारूदकी आविष्कृतिके विषयमें ऐसाही विचार था, यद्यपि उस समय तकभी संस्कृतमें बारूदके बनानेकी सुविस्तृतरीति नहीं मिलीथी, परन्तु १८७५ वा १८७७ ई० में एशियाटिक सोसायटी के सुप्रसिद्ध और सुयोग्य सभासद् डाकटर राजेन्द्रलाल मित्रको बङ्गालके किसी ग्राम में संस्कृतकी एक प्राचीन पुस्तक शुक्रनीति मिली। इस ग्रन्थके रचयिता शुक्राचार्य्यहैं, जिनका नाम नीतिके पुस्तकोंमें प्रायः पाया जाता है, इसमें तोप बन्दूक और बारूदके बनाने आदिका ऐसा सुविस्तृत वर्णन है कि जिससे इस बातमें किञ्चित् भी सन्देह नहीं रहता कि प्राचीन आर्य्यावर्त्तमें तोप और बन्दूकका सुरीत्या प्रचारथा॥ हम अपने कथनकी पुष्टि में शुक्रनीतिके कुछ श्लोक अर्थ सहित पाठकोंके अवलोकनार्थ प्रकाशित करते हैं :—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नालिकं द्विविधं ज्ञेयं वृहत्क्षुद्रविभेदतः ॥

अर्थ—नालिक अस्त्र दो प्रकार का होताहै एक बड़ा (तोप) दूसरा छोटा (बन्दूक) ॥

नोट—संस्कृतमें तोप और बन्दूक इन दोनोंका नाम नालिक अस्त्रहै क्योंकि इन दोनों में एक नाल (नल) लगाई जातीहै ।

तिर्यगूर्द्धच्छिद्रमूलं नालं पञ्चवितस्तिकम् ।
मूलाग्रयोर्लक्ष्यभेदि तिलबिन्दु युतं सदा ॥

अर्थ—बन्दूककी नाल पांच बित्तेकी होनी चाहिये। और इसमें एक सिरेसे दूसरे सिरे तक सीधा छिद्र होना चाहिये। लक्ष्य बनानेके लिये नालके दोनों सिरों पर एक २ तिलबिन्दु अर्थात् मक्खी होनी चाहिये—

यन्त्राघाताग्निकृद्ग्राव चूर्ण धृक् कर्णमूलकम्।
सुकाष्ठो पाङ्ग बुध्नञ्च मध्याङ्गुलविलान्तरम्॥

नाल के पिछले सिरे में गोली और बारूद रखने और चोट से अग्नि पैदा करने के लिये एक यन्त्र होना चाहिये, नाल की रक्षा के लिये उत्तम लकड़ी काठ लगाना चाहिये और बीचमें एक अंगुल का छिद्र होना चाहिये ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वान्तेऽग्निचूर्ण सन्धातृ शलाकासंयुतदृढम् ।
लघुनालिकमप्येतत् प्रधार्यंप्रति सादिभिः॥

अन्दर बारूद रखकर गज से अच्छी प्रकार ठोंक देना चाहिये यह लघु नालिक अर्थात् बन्दूक कहलाती है। उसको पदाति काम में लावें।

यथायथातुत्वक् सारं यथास्थूलविलन्तरम् ।
यथादीर्घवृहद्गोलं दूरभेदो तथा तथा ॥

जितनी अधिक नाल दृढ़ और लम्बी और छिद्र चौड़ा और गोली बड़ी होगी गोली उतनी ही अधिक दूर तक जायगी।

मूलकीलभ्रमाल्लक्ष्य सम सन्धानभाजियत् ।
वृहन्नालिकसंज्ञतत काष्ठबुघ्न विवर्जितम् ।
प्रवाह्य शकटाद्यैस्तु सुयुक्तं विजयप्रदम् ॥

वृहत्—अर्थात् बड़ी नालिक (तोप) उसको कहते हैं जिसके जड़ में एक कील होती है और इस कील पर घुमा कर लक्ष्य को लगाते हैं, तोप की नाल में काठ नहीं लगता इसको गाड़ी इत्यादि पर रखकर लेजाते हैं और अच्छी तरह प्रयोगमें लानेसे विजय को देनेवाली है

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुवर्चिर्लवणात्पञ्च पलानि गन्धकात् पलम्।
अनिर्धूम विपर्कार्कस्नुह्याद्यङ्गारतः पलम् ॥

पांच भाग शोरा एक भाग गन्धक और एक भाग आक या थोर का ऐसा कोयला कि जिसके जलाने से धूम न निकले।

शुद्धात्संग्राह्यसंचूर्ण्य सम्मेल्य प्रपुटेत्रसैः। स्नुह्यर्काणांरसोनस्य शोषयेदातपेन च पिष्ट्वाश-र्करवच्चैतदग्निचूर्णं भवेत् खलु ॥

इन सबको लेकर और साफ करके सफूफ (बुकनी) बना ले और आकया थोड़ के रस (दूध) में भिगोदे और फिर धूप में सुखावे और फिर उसको पीसकर बूरे की तरह बनाले यह अग्नि चूर्ण यानी बारूद बन जावेगी ॥

गोलो लोहमयो गर्भधुटिकः केवलोऽपि वा।
सीसस्य लघुनालार्थेह्यन्यधातुभवोऽपि वा ॥

अर्थ—गोला लोहे का होना चाहिये चाहे भीतर से ख़ाली हो वा उसके भीतर कुछ अन्य पदार्थ गोली आदि जैसे भरे हो लघुनाल (बन्दूक) के लिये गोली सीसे वा किसी अन्य धातुकी होनी चाहिये ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोहसारमयं वापि नालास्त्रं त्वन्यधातुजम् ।
नित्यं संमार्जनस्वच्छमस्त्रपातिभिरावृतम् ॥

(अर्थ) नाल अस्त्र लोहे के होने चाहियें वा किसी अन्य धातुके—अस्त्रपातियों को चाहिये कि इसको सर्व्वदा माज और ढक कर उज्वल रक्खें ॥

अङ्गारस्यैव गन्धस्य सुवर्चिर्लवणस्य च ।
शिलाया हरितालस्य तथा सीसमलस्य च ॥
हिङ्गुलस्य तथा कान्तरजसः कर्पूरस्य च ।
जतोर्नील्याश्च सरलानिर्यासस्य तथैव च ॥
समन्यूनाधिकैरंशैरग्निचूर्णान्यनेकशः । कल्पयन्ति च वेत्तारश्चान्द्रिकाभादिमान्ति च ॥

(अर्थ) इस विद्या के जानने वाले कोयला, गन्धक, शोरा, पत्थर, हरताल, शीशे का मैल हिंगुल, लोहचून, कर्पूर, लाख, नील, और साल का गोन्द इन सब पदार्थों को न्यूनाधिक लेकर चान्द्र (महताबी) और अन्य प्रकार की रौशनी देने वाली बारूद बनाते हैं ॥

क्षिपन्ति चाग्निसंयोगाद् गोलं लक्ष्ये सुनालगम्

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(अर्थ) अग्नि के प्रबल वेग से नाल से निकलते हुए गोले को लक्ष्य पर मारते हैं ॥

नालास्त्रं शोधयेदादौ दद्यात् तत्राग्निचूर्णकम् ।
निवेशयेत् तद्दण्डेन नालमूले यथादृढम् ॥

(अर्थ) प्रथम नाल को शुद्ध करे, पुनः उसमें बारूद रक्खे और उसको गज़ से अच्छी प्रकार ठोक कर नालके पिछले भाग में पहुंचादें ॥

ततः सुगोलकन्दद्यात्ततः कर्णेऽग्निचूर्णकम् ।
कर्णे चूर्णाग्निदानेन गोलं लक्ष्ये निपातयेत् ॥

(अर्थ) फिर एक अच्छी गोली वा गोला डाले और पुनःछिद्र में बारूद डाले, पुनःछिद्र की बारूद में अग्नि प्रवेश करके गोले को लक्ष्य पर फेंके ॥

उक्त प्रमाणों के अतिरिक्त नीतिप्रकाशिका नाम ग्रन्थ में भी बन्दूक़ का वर्णन है ॥ यह ग्रन्थ डाक्टर ग-स्टैन्ओपर्ट को वर्त्तमान ही में मद्रास के निकट मिला था

नलिका ऋजुदेहा स्यात् तन्वङ्गी मध्यरन्ध्रिका ।
ग्रहणं ध्मापनं चैव स्यूतञ्चेति गतित्रयम् ।
तामाश्रितां विदित्वा तु जेतासन्नान् रिपून् युधि ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(अर्थ) बन्दूक की नाल सीधी और मध्य में छिद्रयुक्त होनी चाहिये ॥ ग्रहण करना, भरना और चलाना, बन्दूक सम्बन्धी तीन कार्य्य हैं, जिनको जानकर युद्ध में शत्रु को पराजित करे ॥

पाठक गणो! उक्तप्रमाणोंसे यह स्पष्ट है कि प्राचीन आर्य्यावर्त में बारूद ही नहीं, बरन तोप और बन्दूक का भी भली भांति प्रचार था। परन्तु हमारे बहुशः भोले भाले भाई जिनकी सम्मति में प्राचीन भारतवासी निरे विद्याहीन थे, इस बात पर विश्वास नहीं लाते उनका विचार यह है कि यह श्लोक पण्डितोंने वर्तमान ही में घड़कर पुस्तकोंमें मिला दिये हैं। इनका प्रथम आक्षेप यह होता है कि यदि प्राचीन आर्य्यावर्तमें तोपें थीं तो सिकंदर के सहचारी और यूनान के अन्य इतिहासवेत्ताओं ने अपनी पुस्तकों में इनका वर्णन क्यों नहीं किया है ॥ अतएव हम निम्नलिखित कुछ प्रमाण पुरानी पुस्तकों से उद्धृत करके पाठक गणों के अर्पण करते हैं ॥ इनसाईक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में तोप सम्बन्धी लेखका सम्पादक यह लिखता है कि थेमिस्टोक्लिस के कथनानुकूल (देखो व्याख्यान संख्या २७ पृ० ३३७) ब्राह्मणों के पास ऐसेही अस्त्र थे ॥ उक्त लेख में यह भी लिखा है कि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"फिलोसट्रेटस् यूनानी ग्रन्थकर्त्ता, अपनी पुस्तक एपोलोनस् टाइनेकस् के जीवनवृत्तान्त भाग २ खण्ड १४ में जो अनुमान २०० शताब्दी में लिखी गई थी, आर्य्यावर्त्त की एक ऐसी जातिके विषय में जो सतलज और भागीरथी के मध्य में निवास करती थी, और जिनके देश में सिकन्दर ने कभी जाने का साहस भी नहीं किया, इसप्रकार लिखता है कि वह उनके नगरों को कदापि जीत नहीं सक्ता था, चाहे वह सहस्र*एकिलीज़ और तीन सहस्र एजेक्स*जैसे वीरों की सेना लेकर आक्रमण करता। क्योंकि यह लोग अपने आक्रामक से युद्धके लिये बाहरमैदानमें नहीं आते, वरन यह देवताओंके प्रिय पवित्रजन अपनी दुर्ग की दीवारोंसे आंधी और (१)वज्र फेंक कर अपने शत्रुओं का नाश कर देते हैं।

(नोट) (१)क्योंकि यूनान निवासी तोपोंसे जानकारी नहीं रखते थे इसलिये तोप के शब्द और चमक को बादल की कड़क और विद्युत् की चमक और उत्पातादि समझते थे।

*यह दोनों यूनान के प्राचीन इतिहास में वीरता के लिये ऐसे विख्यात हैं जैसे हमारे यहां भीमसेन, अर्जुन वा ईरान में रुस्तम व अस्तमक्यार

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोर्टसेकन साहबका भी ऐसा ही विचार है जिनकी सम्मति हम उद्धृत करेंगे ॥ उक्त लेखकर्त्ता भी स्वयं अपनी सम्मति यही प्रकट करते हैं (देखो इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका तोप सम्बन्धी लेख) तोपका सबसे प्राचीन वर्णन हिन्दुधर्मशास्त्रमें मिलता है (देखो हेल्हेड साहब का अनुवाद) जो अनेक विद्वानोंकी सम्मति अनुसार मूसा के समयका समझा जाता है । वह प्रमाण यह है कि :- राजकर्म्मचारी युद्धमें कोई धोकेका अस्त्र विषसे बुझे हुये अस्त्र तोप और बन्दूक और अन्य प्रकारके आग्नेय अस्त्र (अग्निवाण) का प्रयोग न करें ॥ अनुवादक लिखते हैं कि इस श्लोकसे यह सन्देह जो बहुत कालसे पोच समझा जाता था फिर प्रबल होता है कि विजयशाली सिकन्दर को आर्य्यावर्त्तमें निस्सन्देह इन अस्त्रोंका सामना करना पड़ा, और इस ही प्रकार क्विन्टस कर्टियस् (एक यूनानी ग्रन्थकर्त्ता) के एक वाक्यसे सिद्ध होताहै ॥

दूसरा आक्षेप बहुशः लोग यह करते हैं कि यदि प्राचीन आर्य्यावर्त्तमें तोपें थीं तो उनका प्रचार कैसे जाता रहा—यह किस प्रकार सम्भव है कि एक जाति एक ऐसे आवश्यक वस्तुको नितान्त भूल जाय ॥ इसके उत्तर में हम केवल इतना ही लिखना चाहते हैं कि कालचक्र

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में आकर बड़े २ राज्य नष्ट होगये हैं बहुत सी जातियें जिनकी उन्नतिका सूर्य्य मध्य गगनमण्डलमें प्रकाशित हो रहा था आज उनकी दशा अकथनीय है उनकी सन्तान उनके पुरुषाओं की विद्या को सर्वथा भूल गई ॥ इसमें कोई भी सन्देह नहीं कि प्राचीन आर्य्य लोग लोपके अतिरिक्त भी ऐसी बातों को जानते थे कि जिनको आजकल हमारे देशवासी इस प्रकार सीखते हैं कि मानो उनके पुरुषाओं ने इन बातों को कभी स्वप्न में भी नहीं देखा था ॥ युरोप में भी यूनान और रोमके इतिहाससे हमारे इस कथनका प्रमाण मिलता है। कदाचित् बहुतसे मनुष्य हमारे इस कथनको दृढ़ और प्रामाणिक न समझें अतएव हम इंग्लैण्डके एक सुप्रसिद्ध और सुयोग्य फ़िलोसफ़र (दार्शनिक विद्वान्) की सम्मति लिखते हैं:—

सुलेमान का वचन है कि संसार में कोई वस्तु नवीन नहीं है। अतः जैसा कि अफ़लातून का विचार था कि सब विद्यायें केवल प्राचीन बातों का पुनः स्मरण हैं इसही प्रकार सुलेमान अपनी सम्मति प्रकट करते हैं कि सब नई बातें प्राचीन भूली हुई बातें हैं जिससे स्प-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ह विदित होता है कि लेथी*नदी केवल पृथ्वी के नीचे ही नहीं वरन ऊपर भी वहती है॥ उल्कापात और भूकम्प दो बड़े कफ़न [पिधान] हैं जिनमें सब वस्तुओं का तिरोभाव [मदफ़ून] होजाता है॥ इसके आगे वेकन साहब विविध पदार्थोंका दृष्टान्त देते हुये अस्त्रोंके लुप्त होने का वर्णन इस प्रकार करते हैं:—

(१) अस्त्रोंका लोप दृष्टिगोचर नहीं होता तौ भी देखा जाता है कि इनमें भी हेरफेर होते हैं और नये सिरे से प्रचार में आते हैं। जैसे कि यह बात सिद्ध है कि तोप आर्य्यावर्त्त में ओक्सी ड्रेसस नाम जाति के नगर में थीं और उन्होंको सिकन्दरके सहचारी मेसीडोनीया वाले

*यूनानिओं के विचारमें " लेथी " एक नदी का नाम है जो पृथ्वीके नीचे या पातालमें है जिसमें गोते खानेसे आत्मा की स्मरणशक्ति बिलकुल जाती रहती है यह शब्द " लेथी " अंग्रेज़ी भाषामें साधारणतया भूलजानेके अर्थ में प्रयोग किया जाता है॥

(१) यह लेख वेकन साहबके " विसीसीट्यूड्स ओफ़ थिन्गज़्" नामक लेखमेंसे उद्धृत करके अनुवाद किया है

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बादलकी गरज और बिजलीकी कड़कके नामसे पुकारा करते थे ॥ हमारे उक्त लेखसे यह स्पष्ट है कि किसी जातिका अपने पुरुषाओंकी विद्याको भूलजाना और किसी विद्या का इस तरह पर लुप्त होजाना सम्भव है और इतिहाससे भी यह बात सिद्ध है ॥ इसके अतिरिक्त आर्य्यावर्त्तमें तोपोंके प्रचार न रहनेका कारण भी प्राचीन ग्रन्थोंसे मालूम होसक्ता है ॥ मेजर जेनरेलवाईल साहबने धर्म्मशास्त्रके किसी एक ऐसे श्लोक का अनुवाद दिया है जिसमें कि स्पष्टतया लिखा है कि मेजिस्ट्रेट् धोकेके और विष से बुझे हुवे अस्त्र तोप बन्दूक आदि युद्धमें काममें न लाया करे ॥ ऐसा मालूम होता है कि आर्य्य लोग तोपादिके प्रयोगको युद्ध व्यवहारमें अधर्म्म समझते थे और कदाचित् इसही कारण तोप बन्दूककी धोके और विष से बुझे हुये अस्त्रों की कोटिमें गणना की है। हम इस बातकी पुष्टिमें कुछ श्लोक महाभारतसे भी उद्धृत करते हैं

शुद्धात्मानः शुद्धवृत्ता राजन् स्वर्गपुरस्कृताः ।
आर्य्ययुद्धं प्रकुर्वन्तः परस्परजिगीषवः ॥
शुक्लाभिजनकर्म्माणो मतिमन्तो जनाधिपाः।
धर्म्मयुद्धमयुध्यन्त प्रेप्सन्तो गतिमुत्तमाम् ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न तत्रासीदधर्मिष्ठस्मशस्त्रं युद्धमेव वा ।
न तत्र कर्णी नालीको न लिप्तो न च वञ्चकः ॥
इषुरासीन्न संश्लिष्टो न धूर्त्तो न च जिह्मगः ।

अर्थ—हे राजन् ! शुद्धात्मा सदाचारी स्वर्गप्राप्तिके अभिलाषी और बुद्धिमान् राजा एक दूसरे पर जयप्राप्तिकी इच्छा करते हुये आर्य्ययुद्ध और धर्म्मयुद्ध करते थे। इनमें कोई भी अधर्म्मयुक्त व्यवहार नहीं होता था और न वह धर्म्मविरुद्ध अस्त्रों का प्रयोग करते थे जैसे कर्णी (एक प्रकारका अस्त्र) नालक, तोप और बन्दूक और विषके बुझे हुये वाणादि ॥

इससे ऐसा मालूम होता है कि तोप और बन्दूक केवल विशेष समय पर अन्यदेशीय आक्रामकके रोकनेके लिये प्रयोग किये जाते थे। स्वदेशीय प्रबन्ध और साधारण युद्धोंमें इनका प्रयोग धर्म्मबाह्य समझा जाता था। सिकन्दरके समयसे लेकर मुसल्मानोंके समय तक इस देश पर किसी अन्यदेशीय शत्रुका घोर तथा भयानक आक्रमण नहीं हुआ इस कारण इन अस्त्रोंका प्रयोग भी नहीं करना पड़ा। अतएव इनका प्रचार और भी जाता रहा॥ इसके अतिरिक्त नालिकास्त्रका वर्णन संस्कृतके बहुतसे प्राचीन पुस्तकोंमें जैसे वाल्मीकीयरामायण, महाभारत

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा धनुर्वेदादिमें भी पाया जाता है। हम अभी कुछ श्लोक महाभारतके उद्धृत कर चुके हैं जिनमें नालिक शब्द आया है तथापि हम पुनः उस ही ग्रन्थसे दो अन्य श्लोक जिन में भी नालिक शब्द है नीचे उद्धृत करते हैं :-

कार्णिनालिकनाराचान् निर्हरन्ति शरीरतः।
वाक्शल्यस्तु न निर्हर्तुं शक्यो हृदिशयोहि सः॥

अर्थ—कर्णि बन्दूककी गोली और नाराच (एक प्रकारका बाण) को शरीरसे निकाल सक्ते हैं परन्तु कटुवचनरूपी बाण नहीं निकल सक्ता। वह हृदयमें चुभ जाता है (महाभारत उद्यो०)

ब्राह्मणार्थे यतन्तस्ते शीघ्रमन्वगमन् मृगम्।
कार्णिनालिकनाराचानुत्क्षिपन्तो महारथाः॥
नाविध्यन् पाण्डवास्तत्र पश्यन्तो मृगमान्तिकात्

अर्थ—तब पाण्डव उस ब्राह्मणके (यज्ञसमिधादिके छुड़ानेके लिये) लिये यत्न करते हुये शीघ्र हिरणके पीछे हुये और कर्णी बन्दूककी गोली और नाराच उस पर छोड़े परन्तु उसको मार न सके यद्यपि हिरण पास ही था। (महाभा० वनपर्व अ० ३१० श्लोक १७)

वाल्मीकीय रामायणमें भी लङ्काकाण्डके अध्याय २० में नालिक शब्द आया है। उपरोक्त समस्त श्लोकोंमें ना-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिक शब्द बन्दूककी गोलीके लिये आया है। यहां कोई यह न समझे कि नालिक भी कर्णी और नाराचकी तरह एक प्रकारका बाण था जोकि धनुष् द्वारा फेंका जाता था किन्तु यहां आशय बन्दूककी गोलीसे है यह नालिक इस कारण कहलाती है कि वह नलयन्त्रसे फेंकी जाती है। इस ही कारण शार्ङ्गधर धनुर्वेदमें लिखा है किः—

नालिका लघवो बाणाः नलयन्त्रणनोदिताः ॥
अत्युच्चदूरपातिषु दुर्गयुद्धेषु ते मताः ॥

अर्थ—नालिक बाणकी तरह फेंककर मारनेकी एक वस्तु है जो लम्बी नहीं होती और नलयन्त्रसे फेंकी जाती है। यह बहुत ऊंचाई वा दूरस्थ स्थान पर फेंकने के लिये वा दुर्गयुद्धके काममें लाई जाती है॥

इन प्रमाणोंसे स्पष्टतया सिद्ध है कि शुक्रनीतिमें जो तोप और बन्दूकका वर्णन है वह प्रक्षिप्त नहीं हो सक्ता इस कारण हमारे लेखसे यह अच्छे प्रकार सिद्ध होता है कि प्राचीन आर्य्यावर्त्तमें तोप और बन्दूक अवश्य थीं॥

शुभमिति॥

गङ्गाप्रसाद एम० ए०

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये पुस्तक स्वामियन्त्रालय मेरठसे मिलेंगे।

गीताभाष्य भाषा व संस्कृत २।) लघुकौमुदी भाषाटीकासहित २) सुश्रुतमूल १॥।) न्यायदर्शनवात्स्यायन भाष्य सहित १) वाजसनेय्यादि ७ उपनिषद् भाषा और संस्कृत दोनों टीका ३) भिन्न २ का मूल्य इस प्रकार है—ईश ≡) केन ।) कठ ॥।) प्रश्न ॥=) मुण्डक ॥।) माण्डूक्य ≡) तैत्तिरीय ॥।) भर्तृहरिशतक तीनों भाषाटीकासहित ।=)॥ केवल नीतिशतक ≡) गणरत्नमहोदधि संस्कृतवृत्तिसहित कोष १॥) अष्टाध्यायीमूल ≡) आयुर्वेदशब्दार्णव कोष वैद्योंको उपयोगी ॥=) दशोपनिषद् बड़े मूल मोटा अक्षर काशीके छपे १।) छोटे १० उपनिषद् मूल गुटका ।-) प्रबन्धार्कोदय। मिडिलक्लासके छात्रोंको लेख सिखानेवाला ।-) सीताचरित्र नावल [प्रथमभाग हिन्दीभाषा] ॥।) पं० गुरुदत्त एम. ए. का ईशोपनिषद्भाष्य ।) कात्यायनसूत्र पूर्वार्ध ॥।) वेश्यानाटक ।)॥ आर्य्यसमाजके नियम मोटे अक्षर पुष्टकागज़ पर।) सैंकड़ा, २॥) हज़ार। भर्तृहरि शृङ्गारशतक भाषाटीका =)॥ पं० भी० श० नीतिशतक ≡) वैराग्यशतक ।) विदुरनीति मूल =) यमयमीसूक्त संस्कृत भाषा दोनों टीकासहित =) प्रश्नोत्तरशतक =) जीवनयात्रा ≡) दमयन्तीस्वयंवरनाटक ≡) पाखण्डमतकुठार =) विवाहव्यवस्था =) ऐतिहासिकनिरीक्षण =) मांसभोजनविचार प्रथमभाग

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का खण्डन -)॥ द्वितीय भागका खण्डन =)॥ धर्मप्रचार)॥ वायुमण्डल)। हारमोनियमगाइड ।=) वैदिकट्रैक्ट अंग्रेज़ी १ नं०)। २ नं०)। ३ नं०)॥ सत्यदर्पण =) ज्योतिषदर्शन=) व्याख्यानसागर ॥) योगानुसार सन्ध्याविधि ≡) बालोपकारी शिक्षा =) दानकरणविधि =) पदार्थविद्या ॥) सभाप्रसन्न ।) स्वामीजीकाचित्र (रङ्गीन) -)॥ पं० गुरुदत्तका चित्र (रङ्गीन) -)॥ सादेचित्र दोनों प्रत्येक -) खेतीकी विद्याके मुख्य सिद्धान्त ॥=) रामायणका आह्लखण्ड)। पुत्रेष्टिपद्धति =)

विना गुरुके संस्कृत व्याकरणमें प्रवेश और संस्कृत बोलने लिखनेका सामान्य बोध कराने वाली—संस्कृतभाषाप्रथमपुस्तक)॥। द्वितीय -)। तृतीय =)॥। चतुर्थ छपरहा है। चाणक्यनीतिसार भाषा टीकास० -)। प्रश्नोत्तररत्नमाला भाषाटीका सहित इसीमें आर्य्यविवाहमङ्गलाष्टक -) आर्य्यचर्पटपञ्जरी)। भजनेन्दु -) महन्त ब्रह्मकुशलके उत्तरमें—ऋगादिभाष्यभू० उपराग प्रथम -)॥ द्वितीय -)॥। शास्त्रार्थकिराणा =) अक्षरप्रदीप (बालकोंको) १) में १०० एकमति)। यह पुस्तक नये ढंगसे बहुत उपकारी शिक्षा वाक्योंसे युक्त शुद्ध सरल भाषामें बालकोंके अभ्यासार्थ छपा है ॥ " दयानन्द तिमिरभास्करका खण्डन " शीघ्र

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छपेगा अग्रिममूल्य १।) यह पुस्तक पं० ज्वालाप्रसाद मुरादाबाद निवासीके उत्तरमें है जो उन्होने सत्यार्थप्रकाशके १२ समुल्लासोंके खण्डनमें बनाकर मुम्बईमें छपाया था वह पुस्तक ४०० पृष्ठमें था उत्तर भी अनुमान ३०० वा ३५० पृष्ठका ही होगा। यदि ग्राहक महाशय अग्रिम मूल्य भेजकर सहायक बनें तौ उतना ही शीघ्र छपे॥

"वेदप्रकाश" (मासिकपत्र) १) वार्षिक॥

पता—पं० तुलसीरामस्वामी—सम्पादक वेदप्रकाश मेरठ

॥ सुधाञ्जनसुरमा ॥

(१) आजकल बारीक अक्षर पढ़ने वालों को तथा नेत्रके सब रोगोंमें अतिलाभदायक है ॥) तोला शेल॥-)

(२) ज्वरघ्न भस्म नित्य, तेइया, जाड़ेसे ज्वरमें, खांसी में अतिलाभदायक १) तोला।

(३) अतीसारारि चूर्ण—॥) डिब्बी।

(४) खांसी की गोली—८ घड़ी में आराम लिखा है १०८ गोली १)

(५) अर्क प्रसूतारि— प्रसूत में लाभदायक १) बो०

(६) ददुघ्न दादकी दवा ३ दिनमें आराम।) डिब्बी

छुट्टनलालस्वामी—परीक्षितगढ़ जि० मेरठ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* ओ३म् *

पतितों के प्रति हमारा कर्तव्य।

जिसको
सद्धर्मप्रचारक पत्र से उद्धृत कर

जानकीप्रसाद गुप्त हल्दौर
जि॰ बिजनौर निवासी ने

चौ॰ बुद्धासिंह के प्रबन्ध से
दीनबन्धु प्रेस बिजनौर में
मुद्रित करा प्रकाशित किया।

सन् १९१३ ई॰

प्रथम वार १०००] [मूल्य ⸗)॥

2.9/63

पुस्तका
गुरुकुल कां

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निवेदन

सज्जन गण !

प्राय: समाचारपत्रों में उत्तम २ लेख निकलते रहते हैं और सब पत्रों की आज कल सर्व साधारण में पहुंच होना कठिन है इस से बहुत प्रेमी उन लेखों से वंचित रह जाते हैं। इसी कारण हमने विचार किया है कि ऐसे२ उत्तम लेखों को पुस्तकाकार छपा कर सर्व साधारण के हाथ में पहुंचाये जावें। मैं बड़ा कृतज्ञ हूंगा यदि पाठक इस पुस्तक को अपना कर मेरे उत्साह को बढ़ावेंगे।

मैं श्री सम्पादक जी सद्धर्म्मप्रचारक का बड़ा धन्यवाद करता हूं। जिन्होंने आज्ञा देकर कृतज्ञ किया है।

ह० जानकीप्रसाद गुप्त

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९६२२ ... २५-५-२००९ गुरुकुल ग्रन्थालय काँगड़ी

॥ ओ३म् ॥

अछूत जातियों को उठाओ

(लालचन्द फलक की 'ज़र और ज़ोर वालों' उर्दू नज़म की छाया पर)

जाति अभिमान वालों सुनलो वचन सयानों !
मैं सत्य ही कहूंगा चाहे तुम बुरा भी मानो ।
इन दीन भोले भाले लोगों के स्वत्व छीने,
दी थी क्या, इस लिये ही बुद्धि परम पिता ने ॥
इन दीनों पर तुम्हें था समुचित दया दिखाना ।
सत्प्रेम से उठा कर हृदय इन्हें लगाना ॥
'यथे मामू(१)वाचम् गीता(२)को तुम भुलाने ।
अन्याय के अनोखें ऊधम लगे मचाने ॥
धिक्कार इस मनुष्यता, धिक्कार इस धरम को ।
धिक्कार इस तुम्हारे मित्रों पवित्र-पन को ॥
स्याने होके तुम हो इंसां पै ज़ुल्म करते ।

(१) यथेमाम् वाचम् कल्याणी ... यजु० वे०
(२) दरिद्रान् भर कौन्तेय मा प्रच्छेपवरेधनम् ... गीता

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छूना तक उन्हों का महापाप हो समझते ॥
पत्थरों और ईंटियों के तो दास तुम बने हो ।
कुत्ते और बिल्लियों के सहचारी तुम बने हो ॥
किन्तु इन भाइयों से इस क़दर बिदकते ।
शायद प्लेग से भी न इस क़दर हो डरते ॥
समता का अब समय है मित्रों ! ज़रा निहारो ।
हृदय-कपाट अपने अब तो ज़रा उघारो ॥
शीशा पिलाते इन के जब कान में दीवाने ।
वह दिन गुज़र गये अब वह लद गये ज़माने ॥
दुनिया से उठ गए वह अन्याय के खज़ाने ।
चलते नहीं हैं सिक्के बाज़ार में पुराने ॥
मानव-धर्म(१) से हम को यह होगया है प्रकट ।
पैदा किया है सब को यकसां परम पिता ने ॥
समता की आज होती घर २ में हैं कथाएं ।
उस ऊंच नीच की सब हैं मिट चुकीं प्रथाएं ॥
आर्य-धर्म को मित्रो ! गर तुम बचाना चाहो ।
इन बन्धुओं की नौका को पार अब लगाओ ॥
अथवा अछूत जाति है बन्धु ही तुम्हारे ।

(१) जन्मना जायते शूद्रः [मनु०]

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनको लगाओ सीने हैं मित्रवर तुम्हारे ॥
भारत के अय वकीलों ! क्यों सुस्त तुम हो बैठे ।
बन जाओ लाजपत(२) से भारत के सच्चे बेटे ।
भारत के ताल्लुकेदारों प्रताप तुम दिखाओ ।
राजा महेन्द्र से (३) बन कर्मज्ञता दिखाओ ॥
छोटे से भूमिहारों ! गर तुम कुछ करना चाहो ।
ठाकुरदास(४)जी को अपना आदेश तुम बनाओं ॥
नहिं तो लहराएगा फिर ईसा मसीह का झंडा ।
घूमेगा बाइबिल का वैदिक-धर्म पै डंडा ।

---

(२) श्रीमान् लोकमान्य लाला लाजपतराय जी ।

[३] श्रीमन् मान्य राजा महेन्द्रप्रतापसिंह जी ताल्लुकेदार हाथरस । आपने तन मन धन से प्रेममहाविद्यालय स्थापित किया है जिसमें अनेक प्रकार की शिल्पशिक्षा दी जाती है ।

[४] ला० ठाकुरदास जी रईस [जमींदार] निवासी कस्बे हल्दौर [बिजनौर] जिन्होंने एक पतितोद्धारणी-पाठशाला [जिसमें अछूत जाति के बालकों को बिना कुछ फीस आदि लिए प्रत्युत पाठशाला की ओर से उपर्युक्त छात्रों को पाठन सामग्री दी जाती है] मात्र अपनी उदारता से दो वर्ष से खोल रक्खी है । जिसका व्यय अनुमानतः ३०) रु० मासिक होगा । यदि ऐसा ही सर्व ज़मीदार करें तो सम्भव है कि भारत शीघ्र ही मूर्खता गर्त्त से निकल जावें

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्तित्व आपका फ़िर रहना नहीं है सम्भव ।
जब नींव उखड़ चुकी हो, तो महल कब है सम्भव ॥
विद्या और मालवालों हिम्मत ज़रा दिखाओ ।
दो खोल पाठशाला शिक्षा इन्हें दिलाओ ॥
दो.-टीकाराम की है विनय, कहता हूं कर जोड़ ।
हे देश भक्तो सज्जनों ! देखो देश की ओर ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

हमारी सामाजिक स्थिति ।

पतित जातियों के प्रति हमारा व्यवहार ।

जाति अनेकन करी ऊंच अरु नीच बनायो ।
खान पान सम्बन्ध सवन सों बरजि छुड़ायो ॥
भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र

इस में सन्देह नहीं कि इस समय सभ्यता की आदि और जन्मभूमि भारतवर्ष सामाजिक अत्याचारों का केन्द्र स्थल हो रहा है आज कल हमारे अनेक सामाजिक अत्याचारों में से एक पतित जातियों (यदि दुर्भाग्यवश हम उन को पतित जातियां कह सकते हों तो) के प्रति हमारा व्यवहार भी है। जिसका प्रभाव हमारे सामाजिक और राज नैतिक जीवन पर भी बहुत बुरा पड़ रहा है।

भङ्गी, चमार, कोली, नाई, धोबी आदि अछूत जातियों को पतित जातियां कहा जाता है, पर विचारना यह है। कि ये जातियां वास्तव में पतित हैं या नहीं। देखा जाय तो यह जातियां पतित नहीं हैं, यह तो हमारी सेवाएं करती हैं हमारी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक आवश्यकता की पूर्ति कर रही है तब हम इन को पतित जातियां कैसे कह सकते हैं। वास्तव में पतित जातियां तो हम हैं जो इनकी सेवाओं का कुछ भी मूल्य न समझ कर अपने स्वार्थ वश इनके प्रति निष्ठुर और पाशविक अत्याचार कर रहे हैं। खेद है कि हम लार्ड मोर्ले के चांद 'स्वराज्य' प्राप्ति के लिये तो चेष्टा करते हैं किंतु अपने आधीन इन जातियों पर कड़ाई करने में तनिक भी नहीं हिचकते हैं। भला सोचना चाहिये कि जब अछूत जातियों के भी हमारे भांति ही हाथ पैर आंख आदि सब कुछ हैं तब हम इनको पतित कैसे कह सकते हैं परमात्मा की सृष्टि का नियम जो हमारे लिये है वही इनके लिए है। जब मेह बरसता है तो उसका पानी बड़े २ राजा महाराजाओं के महलों पर भी पड़ता है और अछूत जातियों की झोपड़ियां पर भी पड़ता है सूर्य्य का प्रकाश जैसे राजा महाराजाओं के महल में पहुंचता है वैसे ही पतित जातियों को भी उसकी कुछ रोक नहीं है। मौत उच्च जातियों को भी आती है और पतित जातियों को भी। जिस

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरह से हम पैदा हुए हैं उस तरह अछूत जातियों ने भी जन्म धारण किया है। तब हम कैसे इन अछूत जातियों को 'पतित कह' सकते हैं। याद रहे कि कर्म ही प्रधान है। परमात्मा की अलौकिक सृष्टि में छुटाई बड़ाई अपने गुणों से ही होती है। इस के विपरीत हिन्दुओं में छुटाई बड़ाई गुण स्वभाव से नहीं केवल जन्म से है। प्रायः देखा गया है कि हिन्दूओं की सब ही उच्च जातियों में कितने ही व्यक्ति घोर अनर्थ करते हुए भी अच्छे कुल में जन्म लेने के कारण पतित नहीं समझे जाते हैं परन्तु नीच जातियों में से कितने ही व्यक्तियों को ईमानदार और सच्चे होने पर भी घृणा की दृष्टि से देखते हैं। वाहरे स्वार्थ! वह ब्राहण पतित नहीं, समझा जाता है जो किसी आदमी के नौजवान लड़के की मौत हो जाने पर उसकी तेरहवीं के दिन मजे से भोजन करता है, दक्षिणा लेता है। एक ओर उस मृतक व्यक्ति के घर वाले शोक से विह्वल होकर छाती मूड कूटते हैं और दूसरी ओर ब्राह्मण पकड़े लत्ते लेकर चलता बनता है। परंतु वह भंगी पतित समझा जाता है जो सदैव हमारी आज्ञा के आधीन होकर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धूप मेंह आदि की परवाह न करके हमारे स्वास्थ्य के लिये हमारे पयखानों को साफ करता है हमारे मुहल्लों में से कूड़ा करकट उठाता है । जा हमारी इतनी भारी सेवा करता है । अफसोस इस से बढ़ कर और क्या होगा कि जो हमारी इतनी सेवा करे वह तो पतित है और जो दिन दहाड़े हमारी आंखों में धूल झोंकते हैं वह पतित नहीं है वाहरे अन्धेर ! जो गुरु, गोस्वामी 'तन मन धन श्रीगुसाईं जी के अर्पण' का उपदेश दे कर हमारी बेटियों के सतीत्व तक नष्ट करने की चेष्टा करते हैं ! मुर्दाओं की छाती पर अपने चरण रखने के बीस २ हजार रुपये लेकर स्वर्ग का टेका लेते हैं वह तो पतित नहीं है पर वह विचारा चमार पतित है जो अनेक कष्ट उठा कर हमारे लिये जूता बनाता है जिस को पहन कर हम सुख से विचरते हैं । भला सोचने की बात है कि यह भी कहीं का इन्साफ है कि जो हमको हर तरह से आराम पहुंचावें हम उनको पतित समझें और जो हम को धर्म की आड़ लेकर नाच नचावें वे पतित न समझे जावें !

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम ऊपर कह चुके हैं कि कर्म ही प्रधान है कर्म ही से मनुष्य ऊंचा नीचा है। तब तो हमारे पाठक यह शंका किये बिना नहीं रहेंगे कि जब अछूत जातियां जघन्य वृत्ति का अवलम्बन करती हैं तब उनको पतित कहा जाय तो क्या बुराई है इसका उत्तर यह है कि हमने इन अछूत जातियों को अच्छे कर्म करने का मौका ही कहां दिया है। हम तो मान्यवर गोखले के शब्दों में कुत्ते बिल्ली या किसी जानवर को छू सकते हैं परन्तु इन अछूत जातियों को छूना पाप है कितने ही बड़े आदमी जाड़े के दिनों में अपने कुत्ते, बिल्ली को बड़े प्यार से अपने लिहाफों में सुलाते हैं। देखा गया है कि गुजराती, दाक्षिणी आदि जातियां जो छूत छात की बहुत पावन्द हैं वे भी अपने कुत्ते, बिल्ली को बड़े लाड प्यार से अपनी गोदी में बिठाते हैं परन्तु किसी अछूत जाति की परछाईं भी पड़ जाय तो उसी वक्त स्नान करते हैं। युक्त प्रदेश में ही ऐसी दशा नहीं है। बल्कि मदरास भी जो विद्या का घर है, वहां तो अछूत जातियों के प्रति बड़े ही अत्याचार हो रहे हैं। वहां पर कितनी ही जातियां उच्च जातियों के मुहल्ले तक में होकर नहीं निकलने पाती हैं! यह

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मदरास की दशा है जहां अंगरेजी शिक्षा का खूब प्रचार है। मदरासियों के इस बुरे बर्ताव को देख कर ही स्वर्गीय स्वामी विवेकानन्द जी ने अपने व्याख्यान में में कहा था कि क्या इससे बढ़ कर भी संसार में कुछ मूर्खता होगी जो कि मैंने मालावार देश में देखी कि बिचारा पेटारिया उस मुहल्ले में होकर नहीं निकल सकता है जिस में उच्च जाति के हिन्दू रहते हैं लेकिन अगर वह अपना नाम बदल कर अङ्गरेजी या मुसलमानी ढंग का नाम रख ले तो मज़े से जा सकता है। देखिये पाठक! इस से बढ़ कर और क्या पागलपन होगा कि कि हम अपने यहां की जातियों से तो घृणा करें पर जब वह विदेशी भाव बिदेशी ढंग ग्रहण कर लें तब हम उन को आदर की दृष्टि से देखने लग जायं। बंगाल में भी इन पतित जातियों के प्रति ऐसा ही निष्ठुर और पाशविक व्यवहार हो रहा है। वहां के ब्राह्मण जो बेल पत्र महादेव जी पर चढ़ाते हैं वह शूद्रों द्वारा मगाये जाते हैं इस का कारण यह है कि बेल पत्रों के वृक्षों में कांटे होते हैं। उन के तोड़ने में कांटे लग जाने का डर रहता है। इस प्रकार बिचारी अछूत जातियों के उन्नति के सब द्वार बन्द कर रखे

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं । केवल पुराने ढङ्ग के व्यक्ति ही इन जातियों के प्रति घृणा प्रकाशित नहीं करते हैं किन्तु अपने स्वार्थ वश वर्त्तमान शिक्षा दीक्षा प्राप्त व्यक्ति भी अछूत जातियों का सुधार नहीं चाहते हैं 'प्रचारक' परिवार को विदित होगा कि पिछले हिन्दी साहित्य सम्मेलन में आर्य्यभाषा के प्रसिद्ध लेखक पं० अमृतलाल जी चक्रवर्ती ने मि० गोखले के शिक्षा-बिल का विरोध केवल इस लिये किया था कि अछूत जातियां लिख पढ़ कर उच्च जातियों की सेवा नहीं करेंगी। याद रहे कि इस स्वार्थ के कारण एक दिन इस संसार में हिन्दू जाति का नामोनिशान तक मिट जायगा । इसका बहुत बुरा असर हमारे सामाजिक जीवन पर पड़ रहा है। अब वह समय नहीं रहा है कि हम इन जातियों को दबायें चलें जायें। यदि हम इस तरह का बुरा बर्त्ताव इन के साथ करते रहे तो एक दिन ये जातियां अपने आप सम्हलने की चेष्टा करेंगी। तब तो बड़ी मुश्किल आवेगी।

हमारे कथन का प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि अभी थोड़े दिन की बात है कि पूर्व बंगाल में नाम शूद्रों ने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक सभा की जिस में उन्होंने तय किया कि हमको अपनी भलाई की आशा कदापि हिन्दूओं से नहीं करनी चाहिये। पतित जातियों की वर्त्तमान दशा को देख कर ही गत वर्ष मर्दुमशुमारी के सुपरिन्टेन्डेएट मिस्टर गेट ने एक सरक्यूलर निकाला कि हिन्दुओं की नीच जातियां, हिन्दूओं में नहीं हैं। वह मुसलमानों की फेहरिस्त में लिखी जावें। यद्यपि हमको मिस्टर गेट के इस सरक्यूलर से सहानुभूति नहीं थी तथापि कर्त्तव्य वश कहना पड़ता है कि इस सरक्यूलर के निकलते ही हिन्दुओं में खलबली मच गई। और यहां तक खलबली मची कि काशी के पण्डित शिरोमणि श्री शिवकुमार शास्त्री तक को यह व्यवस्था देने की आवश्यकता आन पड़ी कि अछूत जातियां हिन्दू ही हैं। भला अब कोई इन हिन्दुओं से पूछे फिर तुमने इन अछूत जातियों के प्रति ऐसी कौन सी भलाई की है जिस से तुम्हारी जाति में रहें। तो शायद कोई हिन्दू इसका उत्तर नहीं दे सकेगा। इस के विपरीत ईसाई लोग इन अछूत जातियों को अपने में मिलाने जा रहे हैं। क्रिश्चियन लोगों का उद्योग अछूत जातियों के प्रति सराहनीय है और यही कारण है कि भारतवर्ष

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में ईसाई मत का जितना प्रचार हुआ है वह अछूत जातियों में ही हुआ है यदि आर्य्यसमाज ईसाइयों के मुकाबले में खड़ा न होता तो शायद आज भारत-वर्षीय अछूत जातियों में से कोई भी हिन्दू रहता कि नहीं। इस में सन्देह है। इन सब बातों को देखते हुए अनुमान करना पड़ता है कि एक दिन वह आवेगा कि जिनको आज हिन्दू अछूत जातियां कहते हैं वे जातियां हिन्दुओं से अपना सम्बन्ध परित्याग करके, हिन्दुओं को घृणा की दृष्टि से देखेंगी। अतएव शिक्षित हिन्दुओं को इस समय अछूत जातियों को अछूत नीच म्लेच्छादि न कह कर, उन में शिक्षा प्रचार करना चाहिये। जिस से उन का हिन्दुओं से सम्बन्ध बना रहे और वे अलग न हों। अब सङ्कीर्णता को त्याग कर के उदारता पूर्वक अपने भाइयों को अपनाना चाहिये। हम ऊपर कह चुके हैं कि परमात्मा की अलौकिक सृष्टि में केवल गुण, स्वभाव ही से मनुष्य ऊंच नीच हो सकता है। अन्यथा न कोई ऊंचा है न नीचा है। जिस जाति में गुणों का विचार न करके केवल जन्म से ही ऊंच नीच का विचार किया जाता

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है उस जाति का शीघ्र ही अधःपतन होता है। वर्त्तमान समय में हिन्दुओं के अधःपतन का कारण भी यह ऊंच नीच ही है। इंगलैण्ड आदि देशों में जो व्यक्ति अपने पुरुषार्थ से विद्या, धनादि लाभ करके परोपकार की वृत्ति धारण करता है। उसका बहुत सत्कार होता है। वह चाहे जितनी नीच जाति का क्यों न हो। परन्तु उस के अध्यवसाय के कारण उसकी प्रतिष्ठा होती है। हमारे यहां यह बात नहीं है मिस्टर चैम्बरलेन इंगलैण्ड के जो एक नामी राज़नैतिक पुरुष है। पहले जूतों का व्यापार करते थे, पीछे पेच बनाने वाले (स्क्रू मेकर) थे। परन्तु आज अपने अध्यवसाय के कारण, इंगलैण्ड के राजनैतिक विशारदों में प्रधान पुरुष समझे जाते हैं। उनका मिलना झुलना, खान पान केवल प्रतिष्ठित अङ्गरेजों के साथ ही नहीं है परन्तु राजघराने के साथ तक है अग़र कोई सौभाग्य वश भारतवर्ष में जूता बेचनेवाला इतनी प्रतिष्ठा प्राप्त भी करले तो कभी उसका हिन्दू जाति में आदर नहीं होगा। बल्कि समय २ पर उस के खान्दान की याद दिला कर उसको नीचा दिखा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की चेष्टा की जायगी। नित्य प्रति ऐसी बातों को देखते हुए ही एक बार 'इंडियन नेशन' के सम्पादक स्वर्गीय मिस्टर एन्० एन्० घोष ने कहा था कि कृष्ण दास पाल तेली है और उन के साथ आज बड़े लाट तक खाना खाने तक को तैयार हैं पर अफसोस कोई उच्च जाति का बङ्गाली तैयार नहीं है। इस अज्ञानता का जो भयङ्कर परिणाम हो रहा है। वह हम नित्य प्रति देखते ही नहीं हैं बल्कि भुगतते हैं। अतएव सब में पहले शिक्षित हिन्दुओं का कर्त्तव्य यह है पतित जातियों की दशा सुधारने की चेष्टा करें, जिससे हिन्दू (आर्य्य) जाति की संख्या घटने न पावे।

(२)

क्या कहें पतित जातियों के प्रति हमारा जैसा बर्त्ताव है उसके स्मरण मात्र से ही हृदय में चोट लगती है और अत्यन्त दुःख होता है। कि हाय! मनुष्य मनुष्य के साथ कैसा व्यवहार कर सकता है। ये बिचारी अछूत जातियां हमारे आराम के लिए अपने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी सुख की परवाह नहीं करती है और हम ऋषि मुनियों की सन्तान होकर उन के सुख में विघ्न पहुंचाने को तैयार हो जाते हैं। ये विचारी अछूत जातियां हाथ पैर और मुख होते हुए भी गूंगे वहिरे पशुओं के समान हैं। इन पर सामाजिक अत्याचारों की जो मात्रा वढ़ रही है उस से हमारी भारतमाता के नाम पर धब्बा लगता है। हम अपने सामाजिक वल से अछूत जातियों को मनुष्य होते हुए भी पशुओं के समान हांक रहे हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि जो वंगाल विद्या और शिक्षा का केन्द्र स्थल है उस में भी इन अछूत जातियों के प्रति अच्छा व्यवहार नहीं किया जाता है। वंगाल के प्रसिद्ध वाग्मीश्वर वाबू अम्बिकाचरण मज़ुमदार ने अपने लेख में वहां की अछूत जातियों की शोचनीय दशा का जो वर्णन किया है उसको पढ़ने से रोमांच खड़े हो जाते हैं और मुंह से यही शब्द निकलते हैं कि क्या सच मुच हम उन्हीं ऋषि मुनियों की सन्तान हैं जिन्होंने अपना जीवन मनुष्यमात्र की सेवा के लिये समर्पण कर दिया था। पाठक सुनियेगा वाबू अम्बिकाचरण मज़ुमदार कहते हैं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि बङ्गाल प्रांत में हिन्दू तुलसी और बेलपत्र दोनों को ही पवित्र समझते हैं, दोनों को ही अपने देवताओं की मूर्ति पर चढ़ाते हैं। पर बङ्गाल की उच्च जातियों की कुटिलता देखियेगा, कि नाम शूद्रों से बेलपत्र तो मंगाते हैं पर उनको तुलसी के वृक्षों को भी छूने तक की मनाई है। इस का कारण यह है कि बेलपत्रों का तोड़ना टेढ़ी खीर है। वे कांटेदार बड़े दरख्तों में लगे होते हैं उन पर चढ़ना मुश्किल होता है। पर तुलसी के पत्तों के तोड़ने में कष्ट नहीं होता है। ब्राह्मण देवता तुलसी के पत्ते शीघ्र ही तोड़ लेते हैं पर बेलपत्र के दरख्त पर चढ़ना तो बड़े साहस और कष्ट का काम है सो इसके लिये बिचारे नामशूद्रों सस्ते हैं। यहीं तक बङ्गाल में नामशूद्रों के प्रति निष्ठुर व्यहवार नहीं किया है, यदि यहां तक भी पाशविक अत्याचारों की समाप्ति हो जाती तो कुछ खैर भी थी पर आगे इस से भी ज्यादा मर्मभेदी कठोर वर्त्ताव बिचारे नामशूद्रोंके साथ किया जाताहै। वहां पर पूजाके लिये कमलपुष्पों की जरूरत हुआ करती है, यह कमल पुष्प नदी में होतेहैं उस में सांप रहा करते हैं। नाम-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शूद्रों को आज्ञा है कि वे कमलपुष्पों को तोड़ कर लावें तब पूजा हो, पर गेंदा के फूलों को तोड़ने की नामशूद्रों को आज्ञा नहीं है। इस का कारण भी तुलसी और बेलपत्रों के समान ही प्रत्यक्ष है। क्योंकि कमल के पुष्प तोड़ने में सांप के काटने का डर रहता है और गेंदा का फूल बाग में सड़क के किनारे ही होता है। उस के तोड़ने में कुछ अड़चन नहीं होती है। ठीक ही है कि "कड़वा कड़वा थू थू और मीठा २ गुप चुप"। इतना ही नहीं और भी ज़रा इन उच्च कहलाने वाली जातियों की सङ्कीर्णता और स्वार्थ परायणता देखियेगा कि बङ्गाल में उच्च से उच्च ब्राह्मण को भी नाम शूद्र या मुसलमानों के हाथ से लाये हुए खजूर के रस को नित्य प्रति सुबह और शाम पीने में कुछ शङ्का नहीं होती है मज़े से सबही जातियां नित्य प्रति खजूर का रस मुसलमान और नामशूद्रोंके हाथोंका लाया हुआ पीती हैं पर उस में कुछ बुराई नहीं समझती हैं। परन्तु यदि वही नामशूद्र वा मुसलमान गंगाजी से जल लावे तो अपवित्र समझा जाता है! भला सोचने की बात है कि नाम शूद्र के हांथ से छुआ हुआ गङ्गा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जी का पवित्र जल तो अपवित्र हो जाय और खजूर का रस अपवित्र न हो। इस खजूर के रस की पवित्रता और गङ्गा के जल की अपवित्रता का कारण भी प्रत्यक्ष है कि ब्राह्मण देवता स्वयं खजूर का रस सुगमता पूर्वक प्राप्त नहीं कर सकते हैं। इस लिये वह पवित्र है और गङ्गाजल लाने मे कुछ अड़चन नहीं है सो वह नामशूद्र के छूने से अपवित्र हो जाता है। पाठक इन घटनाओं को पढ़ कर सोच देखें कि जिस देश के लोगों का धर्म अपने स्वार्थ के लिये यों कलाबाजियां खाया करता है, उस देश की जितनी अधोगति हो उतनी ही थोड़ी है।

बङ्गाल की भांति युक्तप्रदेश के भी कई ज़िलों में देखा गया है कि वहां के लोग नाई से हजामत (बाल) बनवाने में तो कुछ बुराई नहीं समझते हैं। पर उस के हाथ से कुओं में से खींचा हुआ जल पीने में बहुत बुराई समझते हैं। आगरा मथुरादि स्थानों में देखा गया है, कि विवाहादि में लड्डू, कचौरी खाने वगैरह: की चीज़े नाई पर ले जाई जाती हैं। लोग

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मज़े से खाते हैं ; पर उस के हाथ का छुआ जल अपवित्र समझते हैं । युक्त प्रदेश और पञ्जाब के कितने ही स्थानों में तो यहां तक देखा गया है कि जिन कुओं से उच्च जातियां जल खींचती हैं । उन कुओं से अछूत जातियां जल तक नहीं खींच सकती हैं । सच पूछिये तो इन सब बातों को देख कर कहना पड़ता है कि दक्षिण अफ़रीकादि में हमारे भारतवर्षीय भाइयों के साथ जैसा बुरा वर्त्ताव हो रहा है वैसा ही वर्त्ताव हम अपने भाइयों के साथ यहां पर सर्वांश नहीं तो कई अंशों में अवश्य कर रहे हैं । पाठक ! हमारी इस बात को सुन कर सहमिये नहीं, घबड़ाइये नहीं; नाराज़ मत हूजिये हमारे इस कथन में कुछ भी अत्युक्ति नहीं है । आप स्वयं सोच देखियेगा कि अछूत जातियों को अपने कुओं पर जब आप पानी भरने तक की आज्ञा नहीं देते हैं और आप जिस रास्ते होकर निकलते हैं, उस रास्ते तक होकर उन को निकलने तक की मनाई है । तब तो और उन की दक्षिण-अफ़रीका प्रवासी भारतवासियों के साथ कुछ अंशोंमें तुलना करना अत्युक्ति कैसे कहा जा सकता है ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस सामाजिक अत्याचार के कारण जो परिणाम हुआ है और भविष्य में जिस के होने की स्थों बना है, उसका सङ्केत हम पिछली बार कर चुके हैं। सोच देखियेगा कि इस समय भारतवर्ष में ईसाई और मुसलमानों की जितनी संख्या बढ़ी है वह आपके इन भाइयों को ही लेकर बढ़ रही है। मत समझियेगा कि आकाश से इतने मुसलमान और ईसाई गिर पड़े हैं। बाबू अम्बिकाचरण मजुमदार अपने पूर्व बङ्गाल की बात कहते हैं कि यहां पर रिफार्म्स स्कीम में जिन मुसलमानों ने अपने हिन्दू भाइयों पर अपनी ज्यादा संख्या होने के कारण जो विजय प्राप्त कर ली थी, उन मुसलमानों में अरब अफ़गान मुग़ल और पठान नहीं। उन में से फी सैकड़ा ७५ हिन्दू हैं। जो मुसलमान कर लिये गये थे। अब इस समय ईसाई क्यों चूकने लगे वे भी इनको अपने मत की दीक्षा दे रहे हैं। मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट इस बात की साक्षी है।

याद रहे पतित जातियों की दशा सुधारेगा अपनी दशा सुधारना है। ये सब मानते और जानते

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं, कि चाहे जितना सुन्दर और विशाल भवन क्यों न हो। पर जब उसकी शिलाधार (नींव) मज़बूत न होगी तो वह शीघ्र ही बिगड़ेगा। बस इस न्याय के अनुसार जो समाज अपनी आधीनस्थ जातियों के उठाने की चेष्टा नहीं करता है वह अपने हाथों से ही अपने पैरों में कुल्हाड़ी मारता है। पतित जातियों की दशा न सुधारना अपनी अवनति करना है। क्यों कि अछूत जातियां हमारी बहुत सी सेवाएं कर रही हैं जो लोग यह समझते हैं कि इन के ईसाई मुसलमान हो जाने से हमारा कुछ नहीं बिगड़ेगा वह भूलते हैं। मान लीजिये कि जिन को आप आज अछूत पतित शूद्र चाण्डाल आदि जो कुछ कहते हैं, वे सब के सब ईसाई या मुसलमान हो जायं तो फिर जो सेवाएं हमारी ये जातियां करती हैं वह कौन करेगा। इस लिये समाज की रक्षा के लिये पतित जातियों के उठाने की बहुत ज़रूरत है। ये अछूत या पतित जातियां हमारे ही तो भाई हैं कोई ग़ैर नहीं हैं तब हम इन पर निष्ठुर पाशविक अत्याचार करके अपनी जाति को क्यों नष्ट कर रहे हैं। अपनी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अपने समाज की भलाई के लिये इन पतित जातियों के उठाने की बहुत ज़रूरत है।

(३)

पाठक इस लेख को पढ़ते पढ़ते उकता गये होंगे और सोचते भी होंगे कि हम पतित ज़ातियों के दुःखड़े को क्यों रोरहे हैं ? पर वास्तव में ये पतित ज़ातियों का ही दुःख नहीं, हमारा अपना है। पिछली वार हम कह चुके हैं कि पतित जातियों का उठाना अपनी उन्नति करना है। पतित जातियों के लिये उन्नति के सव द्वार बन्द करना अपने पैरों में आप कुल्हाड़ी मारना है। यदि विचार पूर्वक देखा जाय तो हमारे इस कथन में कुछ भी अत्युक्ति नहीं है क्या महलों में रहने वाले, घोड़ों की गाड़ी में सवार होने वाले, चटकीली, भड़कीली पोशाक पहनने वालों की ही जाति होती है। क्या गरीव कंगाल लोग जाति में शामिल नहीं हैं। नहीं नहीं, यह बात नहीं है। ज़ाति हमारे वड़े २ शहरों के आलीशान मकानों मेंही नहीं रहती है, लेकिन गांवों से बहुत दूर जंगल में झोंपड़ों में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी रहती है। तब फिर जाति के उस बड़े अंश को त्याग करना कहां की बुद्धिमानी है? अगर सचमुच आपको जाति की स्थिति देखना हो आइये इन विचारी पतित जातियों की दशा देखियेगा और विचारियेगा कि आप अपनी जाति के प्रति कैसा व्यवहार कर रहे हैं आप के सामाजिक अत्याचारों के कारण इन बिचारों को कहीं कहीं न्यायालयों तक में स्वतन्त्रता पूर्वक अपने मुक़दमें पेश करने और विचार सुनने तक का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता है। ट्रावन्कोर जैसी सुप्रसिद्ध देशी रियासत में भी * पञ्चामा नामक जाति का कोई मनुष्य अदालत तक नहीं पहुंच सकता है। अगर वहां पञ्चामा जाति के किसी व्यक्ति को अदालत में गवाह होकर जाना पड़ेगा वा स्वयं ही किसी बात की अर्जी देनी हो तो उस बिचारे को अदालत से सैकड़ों ग़ज के फ़ासले पर खड़ा होना

---

* मदरास, मालावार, कोचीन, ट्रावन्कोरादि की ओर अछूत जातियों के कितने प्रकार के नाम हैं। उस में से एक पञ्चामा जाति भी है। मालावार में पेरिया और पञ्चामा दोनों जातियों के साथ अच्छा वर्त्ताव नही होता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

 2.9/63

पड़ता है कि कहीं उसकी शक्ल देखने से ब्राह्मण जज या वकील पतित न हो जावें। उस विचारे से सवाल पूछने और इज़हार लेने के लिये हरकारों की पंक्ति उसके और अदालत के बीच में खड़ी हो जाती है, उस पंक्ति के आदमी अदालत और उसके सवाल जवाबों को एक दूसरे से पूछ कर पहुंचाता है। कहिये यह कैसा न्याय है ? और सुनिये मि० वी० डे० की "इण्डियन रिव्यू" की किसी पिछली संख्या में एक लेख छपा है, जिसमे वह लिखते हैं कि मदरास प्रेसीडेन्सी, मैसूर, हैदराबाद, ट्रावन्कोर और कोचीन में १९,२९४,०२१ व्यक्ति पांच जातियों के हैं। जिनमें एक जाति का अन्य पांच जातियों से छूजाना पाप समझा जाता है। और दूसरी चार जातियों में भी छूजाना पाप समझा जाता है। केवल एक ही जाति है जिस में ७,७५५ ९०१ व्यक्ति है ये बिना स्पर्श के ही पतित हो जाते हैं। मि० अनथा कृष्ण अय्यर ने कोचीन की जातियों का वर्णन करते हुए लिखा है कि यहां एक जाति नय्यड़ होती है जिस को चाण्डाल कहा जाता है। वह पबलिक सड़क पर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी मुश्किल से निकलने पाती है। उसके साथ यहां तक कड़ाई है कि उसका ब्राह्मण से तीन सौ कदम दूर रहना भी ब्राह्मण को पतित कर देता है अर्थात् वहां पर जब कभी उस जाति का कोई आदमी ब्राह्मण के सामने आ जाता है तब तो उस विचारे को ब्राह्मण से तीन सौ फुट से भी ऊपर दूर रहना पड़ता है। वहां एक और जाति होती है जिसको उलादन कहते हैं। उस जाति के मनुष्य का ब्राह्मण तथा अन्य सब उच्च जातियों के व्यक्ति यहां तक कि शूद्रों के सामने तक ८४ फीट के फासले पर आना भी उच्च जातियों को पतित कर देता है। यानि उलादन जाति के आदमियों को उच्च जातियों के सामने ८४ फीट से भी ज्यादा दूर रहना चाहिये। वहां पर परायण नामक एक जाति और होती है जिसकी संख्या ८८४१ है। उस ज़ाति के मनुष्य उच्च जातियों से आधे फ़रलाङ्ग की दूरी पर रहते हैं इस जाति के लोग भी न तो आम रास्ते से हो कर निकल सकते हैं न उच्च जातियों के मकानों के पास हो कर जा सकते हैं। लण्डन "टाइम्स" के रिपोर्टर मि० शिरोल

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने अछूत जाति और उच्च जातियों के व्यवहार को को देख कर एक स्थल पर लिखा है कि कई वर्ष हुए कि मैं कोचीन में एक पुल पर जा रहा था और उस समय एक प्रतिष्ठित भारतवासी (नेटिव) मेरे सामने आरहा था, वह नदी के किनारे पीछे की ओर शीघ्र ही दौड़ गया जहां से हम आरहे थे और सड़क पर से जंगल में चला गया। उस ने पुल के दूसरे सिरे पर ब्राह्मण को आते हुए देख लिया था। अगर वह वहां से न भागता तो इतनी दूर से ब्राह्मण को आते हुए देखने के कारण पतित समझा जाता। भला इस से बढ़ कर और अज्ञानता क्या हो सकती है कि हम अपने भाइयों से इतना परहेज़ करें? सोचना चाहिये कि जब हम अपने भाइयों से इतनी घृणा करते हैं तो वे कैसे हमारा साथ दे सकते हैं?

यह तो प्राय सब ही को मालूम है कि पेरिया, भङ्गी, चमारादि नीच जातियों को यहां तक सङ्कट है कि कोई वैद्य या डाक्टर भी उन के यहां बीमारी में इलाज करने तक छूने के पाप के भय से नहीं जाता है आयुर्वेद की शिक्षा प्राप्त देशी वैद्य रोगी की नाड़ी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देख कर ही सब रोगों की चिकित्सा करते हैं, परन्तु इन अछूत जातियों की नाड़ी देखना तो दूर रहा कोई कोई डर से दवा देना भी बुरा समझते हैं। मानों इन के प्राण ही नहीं है। ऐसे कितने ही हृदय-वेधक दृश्य हैं, जिन को कहां तक गिनावें? पंजाब और युक्त प्रदेश के कितने ही स्थानों में देखा गया है कि जब दुकानदार लोग इन अछूत जातियों को सौदा देते हैं तब उन से पैसा लेते हैं। अछूत जातियों के पैसा लेने में कुछ बुराई नहीं समझते हैं पर उन के हाथ में सौदा देने में पाप समझते हैं। इस अज्ञानता के कारण हिन्दूओं की जो क्षति हुई है; उनका सङ्केत पिछली दो संख्याओं में कर चुके हैं कि अन्य मतावलम्बी किस भांति आपकी इस अज्ञानता से लाभ उठा रहे हैं। और हम आंखें होते हुए भी इतने अंधे हैं। कि हमें अब तक अपनी अज्ञानता का ज्ञान नहीं हुआ है। वह देखियेगा कि मदरास के बिशप आपको ताना मारते हुए क्या कहते हैं कि हमने चालीस वर्ष के भीतर अकेले तेलगू देश में २५००० ढाई लाख पंचमाओं को ईसाई बना लिया है और

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ट्रावन्कोर मे ७००००० सात लाख की । सोचो तो सही चालीस वर्ष के भीतर आप के सामाजिक अत्याचारों के कारण एक ही प्रदेश में से आप के साढ़े नौ लाख भाई आपको त्याग करके ईसाईयों की शरण में गये हैं । भला विचारो तो सही महाभारत के महायुद्ध में कितने मनुष्य मरे थें । इस समय पतित जातियों के प्रति जो सामाजिक अत्याचार हो रहा है । वह महाभारत के संग्राम से कम नहीं है मत समझो कि एक पंचामा जाति के साढ़े नौलाख मनुष्यों के चले जाने से हमारा कुछ विगाड़ नहीं है । नहीं २ ये साढ़े नौलाख एक रोज़ साढ़े नौकिरोड़ का नम्बर पहुंचावेंगे । विचार देखो किसी चीज में से नित्य खर्च ही होता रहे और उसकी आमदनी न हो, तो उसका क्या परिणाम होगा ? हिमालय पर्वत के समान भी चाहें जैसी कोई वस्तु क्यों न हो परन्तु नित्यप्रति घटने से एक रोज़ उसका भी अन्त हो जायगा । क्या सचमुच हिन्दुओं ! हिन्दू नाम धारण करने से ही तुम्हारी हड्डियों में से आर्य्य ऋषि मुनियों का खून सूख गया है । जो इन बिचारी अछूत जातियों की

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर तुम्हारा ध्यान नहीं गया है। जिस आर्य्यसमाज को आप अपना दुश्मन समझते हो, वह इन अन्त्यजों को आप के समाज की रक्षा के लिये उठा रहा है। क्या देखते नहीं हो कि स्यालकोट के मुट्ठी भर आर्य समाजी सज्जनों ने वहां किस भांति मेंघों का सुधार किया है। दो वर्ष से आर्य्यसमाज ने मदरास में भी वैदिकधर्म की ध्वजा फहराय दी है। यद्यपि आर्य-समाज के पास धन जन दोनों का अभाव है परन्तु वह अपने आत्मिक बल के सहारे, अन्य मतावलम्बियों के चुङ्गल में आपके भाई फंसने न पावें, इस बात की प्राणपण से चेष्टा कर रहा है। आपका श्री भारत धर्म महामण्डल जिस के कितने ही स्वाधीन नृपतिगण संरक्षक हैं, वह इस काम में अगुआ क्यों नहीं बनता है? क्या इन अन्त्यजों का उद्धार करना जाति अथवा धर्म की रक्षा करना नहीं है?

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी की उपयोगी पुस्तकें।

सत्यार्थप्रकाश	१)	ऋद्धि	१।)
श्रीधर भाषा कोष	२)	जापान दर्पण	।।।)
सत्यधर्म विचार	~)	जल चिकित्सा	।)
दृष्टान्तसागर	१)	सुखमार्ग	।)
सीताचरित्र	१।)	हिन्दी व्याकरण बा० गङ्गा प्रसाद कृत	≡)
सन्ध्या	)।	निबन्ध माला	।~)
कृषिविद्याकी प्र. पु.	=)।।	भूगोल की पहली किताब	≡)
कर्मयोग	।=)	" दूसरी	।)
नाट्य शास्त्र	।)	भाषा सार संग्रह पहला भाग	≡)
बाल विनोद प्र० भाग	~)	" दूसरा	।≡)
दूसरा	~)।।	कर्त्तव्य शिक्षा	१)
तीसरा	।~)	गारफ़ील्ड	।।)
चौथा	।=)	जर्मनी का इतिहास	।~)
पांचवा	।≡)	स्त्री उपदेश	≡)
बाल रामायण	।।)	सीताचरित्र	१।।~)
चरित्रगठन	।।।)		
अमरीका के निर्धन विद्यार्थियों के परिश्रम	।)		

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्यसमाज ने क्या किया	,॥	नागरीलिपि पुस्तक	-,
आर्यभजन संग्रह	।-,	पोपप्रदीप	-,॥
अमरीका दिग्दर्शन	।॥,	दयानन्द चरित्र	१॥,
ज़ातिय शिक्षा	-,	भारतवर्ष की वीर और विदूषी स्त्रियां प्र° भाग	।=,
आश्चर्यजनक घंटी	।=,	दूसरा भाग	=,॥
ऋषि गायन	,॥	आर्य ललना	।,
सीतादेवी	।=,	भारत की सच्ची देवियां	।=)
उत्तर रामचरित्र छाया	॥)	सच्चा पतिप्रेम	।-)॥
गृहणी	।॥))	भजन स्त्री ज्ञानप्रकाश	
छोटीवहू	।॥)	दूसरा भाग	=)॥
प्रेमलता	।≡)	अनपढ़ स्त्री की यात्रा	))⁚
आदर्शवहू	≡)	**उर्दू की पुस्तकें।**	
राधीरानी	=)॥	ख्यालात स्याजी	।)
सेवा जी व रोशनआरा	।=))	,, घोष	।)
स्त्री भजन भंडार	।=))	तकरीर वनर जी	।))
उपदेश मंजरी	॥)	स्वदेशी तहरीक	॥)
रामगीतावली	=))॥	हिन्दूस्तान की कहानी	।))
		जेलखाने की कहानी	।))

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दौलतकमानेका ढंग =))	घर का हकीम -)
भारत और जापान ।)	नल और दमयंती ।)॥
ला. लालचन्द जी फलक कृत महाभारत (नाविल) १)	धर्मवीर हकीकत =)
कलाम फ़लक १)	धर्मवीरों के दर्शन ।=)
ईश्वरचन्द्रविद्यासागर =)	भगवान बुधका संन्यास -)॥
औरत की बुजुर्गी ।)	ख्यालात दादा भाई ।)
अछूत जाति उद्धार व्याख्यानलालालाजपतराय	स्वामी रामकृष्णपरमहंस ।=
गुरुकुल कांगड़ी मेला सं० १९१३ ई० -)	आर्यन अजमत ।।।)
दुनिया के नौ महापुरुष ।-)	सुनहरी उपदेश -)॥
सुन्दर नीति -))	बच्चों की तरबियत ।-)
	स्वामी रामदास =)
	हिन्दू कौम मर रही है
	ऋषि दयानन्द के दरबारमें
	दुखी सरला कीपुकार -)॥
	नौ कुमार शिक्षा ।-)

इस के अतिरिक्त हिन्दी की और भी बहुत सी पुस्तकें रहती हैं।

पता:—

जानकीप्रसाद गुप्त

हल्दौर—(जि० बिजनौर)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या आप दिमाग से काम लेना

चाहते हैं ? तो

असली हुसन बहार तैल का इस्तेमाल कीजिएगा यह तैल दिमागी काम करने वालों का सच्चा मित्र है इस तैल के सेवन से सर दर्द, खुशकी, थकावट आदि दूर होकर तरो ताजगी आती है बालों को स्याह कर के जड़ों को पक्की करता है हुसन को दूना करता है सुगन्धी एक बार के इस्तेमाल से मालूम होती है बतौर नमूना एक शीशी मंगा कर देखियेगा मूल्य एक ॥=) तीन का १॥)

देखिये लोग क्या कहते हैं !

प्रियवर महाशय जी ! नमस्ते

आप ने जो एक शीशी गुरुकुल कांगड़ी पर दी थी बन्दे ने उसको खुद इस्तेमाल किया और तैल मज़कूर को इस्म बामुसमी पाया । दरअसिल यह तैल सर दर्द खुशकी और थकावट दूर करने में लासानी है । (वक़्त उर्दू । २४ । ४ । १३)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(एस॰ डी.) गौरीशंकर नायर सब ओवरसियर
कैनाल डिपार्ट--नहटौर

२ जनाबमन तसलीम

शीशी तैल इजाद करदा जनाब को मैंने इस वक्त तक इस्तेमाल किया मुझे दर्द सर की एक अर्से से शिकायत थी और यह मरज़ करीब २ लाइलाज हो चुका था मैं आप का मसकूर हूं कि आप के तैल ने मुझे उम्मैद से ज्यादा फ़ायदा बख्शा (उर्दू नं० १८५ १४।२।१३ ई०)

मुंशी अजुध्याप्रसाद साहब मुख्तार
अदालत बिजनौर

३ मेहरबान ला० जानकीप्रसाद जी तसलीम

शीशी तैल मुरसले पहुंचा इस म शक नहीं कि आप ने पबलिक पर बड़ा भारी अहसान किया है मैंने एक मंतबे के ही इस्तेमाल से आप के ईजाद करदा तैल को इस्म बामुसम्मी पाया।

ला. प्यारेलाल साहब रईस
व आनरेरी मजिस्ट्रेट
धनोरा-ज़ि० मुरादाबाद

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे पास और ऐसे कितने ही पत्र है हम ज्यादह नहीं लिख सकते ।

अर्क बालसफा

इस के लगाने से दो मिनिट में सारे बाल साफ़ होकर जिल्द साफ़ निकल आती है । जिल्द पर दाग़ आदि कुछ नहीं आता मुल्य भी छोटी शीशी ≈) बड़ी शीशी ।)

दवाई बवासीर

इस से कैसा ही बवासीर क्यों न हो थोड़े ही दिनों में आराम हो जाता है मूल्य ४० गोली १) २० का ।।≈)

हमारी कुल दवाइयों के यदि आप नमूने चाहें तो ।) के टिकट भेजिएगा ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खुजली की दवा

यह खुजली की दवा हमने बड़ी मेहनत व कोशिश से त्यार की है। और बहुत ही फायदेमन्द साबित हुई है इसकी सैकड़ों पुड़िया हाथों हाथ बिकती हैं ज्यादह तारीफ की जरूरत नहीं। आराम न हो तो कीमत वापिस। मूल्य भी =) फ़ी पुड़िया १ रुपये की १० मिलेगी व साईनबोर्ड हाथ का बड़ा उत्तम बना हुआ बिल्कुल मुफ्त। ३ माह तक न बिके तो डाक महसूल काट कर कीमत वापिस

पता:—जानकीप्रसाद गुप्त, हल्दौर—(बिजनौर)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेत्र सुखदायक

इस सुर्मे से गुब्बार, धुन्ध, जाला, आंखों में पानी आना बन्द होकर एक दम ठंडक पड़ जाती है। मूल्य ≡)

कुल पुस्तकें व औषधि मिलने का ठिकाना:—

जानकीप्रसाद गुप्त

हल्दौर—जि. बिजनौर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ ओ३म् ॥

पुराणों की शिक्षा॥

अर्थात्

पुराण क्या सिखलाते हैं

—□*×÷*+÷*□—

जिसे

बाबूराम शर्मा

अध्यक्ष आर्यपुस्तकालय इटावा

ने

वेदप्रकाश यन्त्रालय-इटावा में

छपाकर प्रकाशित किया॥

नवनवार २००० } संवत् १९६३ { मूल्य)॥

धर्मार्थ बांटने वालों को १०० इकट्ठी लेने पर ॥।) सैकड़ा

पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ ओ३म् ॥

पुराणों की शिक्षा ॥

सर्वन्तु समवेक्ष्येदन्निखिलं ज्ञानचक्षुषा,
श्रुतिप्रामाणयतो विद्वान् स्वधर्मैनिंविशेतवै।

विद्वान् को उचित है कि सब बातों को ज्ञाननेत्र से देख कर वेद के प्रमाण से अपने धर्म को स्वीकार करे ॥

तिलकों में विरोध ॥

ऊर्ध्वपुण्ड्र विहीनस्य स्मशानसदृशं मुखम्।
अवलोक्य मुखं तेषामादित्यमवलोकयेत् ॥१॥
ब्राह्मणः कुलजो विद्वान् भस्मधारी भवेद्यदि।
वर्जयेत्तादृशंदेवोमद्योच्छिष्टंघटंयथा।२।पद्म

जो लम्बा तिलक (त्रिफङ्का वैष्णवी मार्ग का) धारण नहीं करता उसका मुंह श्मशान (मरघटा) के तुल्य है अतएव देखने योग्य नहीं कदाचित् देख पड़े तो इस का प्रायश्चित्त करे अर्थात् तुरन्त सूर्य का दर्शन कर लेवे॥१॥ ब्राह्मण कुलोत्पन्न जो विद्वान् होकर भस्मधारण करे उस को शराब के जूंठे बासन की नाईं (तुल्य) त्याग देवे॥२॥ अब देखिये इसके विरुद्ध शिवपुराण में क्या लिखा है:—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभूतिर्यस्यनो भाले नाङ्गे रुद्राक्ष धारणम्।
नास्येशिवमयी वाणीतंत्यजेदन्त्यजं यथा॥

विभूति (भस्म) जिस के माथे पर नहीं और अङ्ग में रुद्राक्ष नहीं पहिने मुंह से शिव शिव ऐसा न कहे उस को अन्त्यज की नाईं त्यागदे है॥

(इसी तरह पृथिवी चन्द्रोदय मेंभी वैष्णवोंको लताड़दीहै:-

यस्तु सन्तप्तशङ्खादिलिङ्गचिन्हधरो नरः।
स सर्वयातनाभोगी चाण्डालो जन्मकोटिषु॥

जो मनुष्य तपे हुए शङ्खादिकों के चिन्हों को धारण करता है वह सब नरक यातनाओं दुःखोंको भोगता हैऔर कोटि जन्मपर्यन्त चाण्डाल होता है॥

ऊपरके श्लोकों से स्पष्ट विदित होता है कि तिलक धारण करने के विषय में पुराणोंमेंसर्वथा परस्पर विरोध है अर्थात् शैवसम्प्रदायी चक्राङ्कित सम्प्रदायियों के तिलक को बुरा कहते हैं और वैष्णव सम्प्रदायी—शैवादि सम्प्रदायियों के तिलक को भ्रष्ट बताते हैं इस से यह निश्चित हुआ कि यदि पुराणों को सत्य माना जाय तो सर्वप्रकार के तिलकधारीभ्रष्ट पतित और नरक के अधिकारी ठहरते हैं-अतएव पुराण भ्रमजालमें फंसाने वाले हुए जैसाकि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पद्मपुराण में स्पष्ट लिखा है —

व्यामोहायचराचरस्य जगतश्चैते पुराणागमास्तां तामेव हि देवतां परत्रिकां जल्पन्ति कल्पावधि। सिद्धान्ते पुनरेक एव भगवान्विष्णुस्समस्तागमो व्यापारेषु विवेचनंव्यतिकरं नितयेषु निश्चीयते ॥

अर्थात्-जितने पुराण हैं सब मनुष्य को भ्रम में डालने वाले हैं उन में अनेक देवता ठहराये गये हैं एक ईश्वरका निश्चय नहीं होता केवल एक भगवान् विष्णु पूज्यहैं ॥

हे पौराणिक भक्तो ! जब सभी पुराण भ्रम में डालने वाले हैं जैसा कि ऊपर के वचन से स्पष्ट है तो तुम्हें भ्रम से बचाने वाला आर्यसमाज के अतिरिक्त और कौन है॥

पुराणों में देवताओं की निन्दा

भागवत् में लिखा है:-

भवव्रतधरा ये च ये च तान् समनुव्रताः ।
पाखण्डिनस्ते भवन्तु सच्छास्त्रपरिपन्थिनः ॥

मुमुक्षवो घोररूपान् हित्वा भूतपतीनथ ।
नारायणकलाः शान्ता भजन्ति ह्यनसूयवः ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो शिव के भक्त हैं और उन की सेवा करते हैं सो पाषण्डी और सत् शास्त्र के विरोधी हैं इसलिये जो कि मोक्ष की इच्छा रखते हैं सो भयानक वेष वाले भूतों के स्वामी अर्थात् महादेव को छोड़ें और मन स्थिर और शान्ति करके नारायण की पूजा करें ॥

अब पद्मपुराण में शिव की स्तुति में ये श्लोक कहे हैं:—

विष्णुदर्शनमात्रेण शिवद्रोहः प्रजायते ।
शिवद्रोहान्न सन्देहो नारकं याति दारुणम् ॥
तस्माद्धि विष्णुनामापि न वक्तव्यं कदाचन ॥

अर्थ यह है कि—विष्णु के दर्शन मात्र करने से महादेव जी क्रोधित होते हैं और उन (शिव) के क्रोध से दर्शनकर्ता निस्सन्देह महानरक में जाता है इस कारण विष्णु का नाम कभी नहीं लेना चाहिये ॥

उसी पुराण में ये श्लोक हैं:—

यस्तु नारायणं देवं ब्रह्मरुद्रादिदैवतैः ।
समः सर्वैर्निरीक्षेत स पाषण्डो भवेत्सदा ॥
किमत्र बहुनोक्तेन ब्राह्मणा येप्यवैष्णवाः ।
नस्प्रष्टव्या न द्रष्टव्या न वक्तव्याः कदाचन ॥

अर्थ—यह है जो कहते हैं कि और देवता अर्थात् ब्रह्मा महादेव इत्यादि नारायण के समान हैं सो पाषण्डी हैं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन के विषयमें हम और बात न बढ़ावेंगे क्योंकि जो ब्राह्मण विष्णुको नहीं मानते उन को न कभी छूना न देखना और न उनसे बोलना चाहिये ॥

फिर पद्मपुराण में विष्णु को स्तुति में यह श्लोक हैं-

येऽन्य देवं परत्वेन वदन्त्यज्ञानमोहिताः ।
नारायणं जगन्नाथं ते वै पाषण्डिनो नराः ॥

अर्थ-यह है कि जो लोग किसी दूसरे देवता को नारायण से जो जगत का स्वामी है बड़ा करके मानतेहैंसो अज्ञानी हैं और लोग इनको पाषण्डी कहते हैं ॥

फिर इसी पुराण में परस्पर विरोध देखो जैसे:—

एष देवो महादेवो विज्ञेयस्तु महेश्वरः ।
न तस्मात्परमङ्किञ्चित् पदं समधिगम्यते ॥

अर्थ-यह है कि महादेव को महेश्वर जानना चाहिये और यह मत समझो कि उससे कोई बड़ा है ॥

फिर इस से विरुद्ध देखो:—

वासुदेवं परित्यज्य योऽन्यं देवमुपासते ।
तृषितो जाह्नवीतीरे कूपं खनति दुर्मतिः ॥

अर्थ यह है कि-जो विष्णु को छोड़कर दूसरे देव को मानता है सो उस मूर्ख के समान है जो कि गङ्गा के तीर (किनारे) प्यासा बैठा कुआ खोदता है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी प्रकार ब्रह्मा, विष्णु, श्रीकृष्ण, पराशर' शिव,चन्द्रमा, बृहस्पति, इन्द्र आदि महानुभाव जो कि प्राचीन काल में अत्यन्त प्रसिद्ध विद्वान् राजा महाराजा हुएहैंऔर सत्शास्त्रों में इन का बड़ा सत्कार किया गया है और जिन्हें ऋषिमुनी देवताओं की पदवियां दी गईं हैं पुराण उन्हीं की निन्दा करतेहैं और कोई ऐसा दोषइलजाम नहींउठा रक्खा जो इन देवताओं पर नहीं लगाते हैं ॥ (१) ब्रह्मा जी को पुत्री पर मोहित होने का(२)विष्णुको धोखे से जालन्धर की स्त्री वृन्दा के सङ्ग भोग करके उसके पातिव्रतधर्म को नष्ट करने का(३)श्रीकृष्ण जी को १६०००गोपियों और कुब्जा कुबरीके साथ भी भोगबिलास करनेका, (४) पराशरमुनि पर एक कैवर्त्त की लड़की के सङ्ग व्यभिचार करने का, द्रौपदी पर पांच पतियों से विवाह करने का, शिव जी पर ऋषियोंकी स्त्रियों पर मोहित होनेका, और उनके लिङ्ग कट जाने का(५)देवी पर मस्तक पर खाल बांधे नग्न शरीर गर्दभ पर सवार होने और मद्य मांस भक्षण करने का६चन्द्रमा पर अपने गुरु बृहस्पति की स्त्री तारा पर मोहित [illegible] वर्षों तक काम चेष्टा करने का, इन्द्रपर गौतम की [illegible] सङ्ग व्यभिचार करने का७ पुराणों में पूर्वजों [illegible] कलङ्क लगाये हैं !!! ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचारशील पुरुष विचार सकते हैं कि पुराणों में प्राचीन महर्षि देवताओं की किस प्रकार निन्दा की गई है, हिन्दू लोग प्रायः कहा करते हैं कि आर्यसमाजी देवताओं और बड़ों की निन्दा करते हैं परन्तु उनका यह कथन सर्वथा मिथ्या है क्योंकि आर्यसमाज सब प्राचीन महर्षियों और देवताओं को अत्यन्त श्रद्धा और मान की दृष्टि से देखता है और उनके पवित्र वेदानुकूल सराहने योग्य जीवनों को सर्व प्रकार के कपोलकल्पित कलङ्कों से (जो कि पुराणों के मानने वाले हिन्दूलोग बड़े फखरकेसाथ उन को लगाते हैं) सर्वथा रहित बतलाता सा विलकुल ता और मानता है

हे पुराणमतावलम्बी महाशयो! यदि अपने पूर्वज पुरुषाओं और देवताओं के निन्दक बनना नहीं चाहते हो, यदि धर्म का हित रखते हो तो इन मिथ्या, देव निन्दक और अपवित्रताप्रवर्त्तक अष्टादश १८ पुराणों के भ्रम जाल से अपने ताईं स्वतन्त्र करके पूर्ण सत्य भ्रमरहित वेदों को मानों और तदनुकूल अपना आचरण बनाकर और आर्यपदवी को प्राप्त होकर वैदिक धर्म के प्रचार से संसार को स्वर्गधाम बनाओ। ओ३म् शान्तिः ३

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* ओ३म् *

पुराण किसने बनाये

जिसे

WHO WROTE THE PURANAS?

धर्मवीर पं० लेखराम शर्मा आर्य्यपथिकने
संवत १९५१में लिखा था ॥

BY

* वही *

P. Lekh Ram Sharma the Martyr

१६२२
१८.५.२०

प० बाबूराम शर्मा इटावास्थने
प्रकाशित किया।

Printed by Brahm Dew Sharma at the
Brahm Press—Etawah.

नवमवार २००० } सन् १९१० संं० १९६७ { मूल्य)। १) रु० सैकड़ा

धर्मार्थ बांटने वालोंको ८) रु० हज़ार

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सजीवनबूटी।

यह बूटी मूर्छितोंकी मूर्छा दूरकर श्री-लक्ष्मणयती, शूरवीर, रणधीर, बनाती है, एकमात्र इसीके सेवनसे ऋषि, मुनि, योगी, संन्यासी, महावीर, योधा, बलधारी, जगत्गुरु, परिव्राट् सम्राट्, दिग्विजयी जगत् प्रसिद्ध अमर नाम कर गये हैं।

केवल इसीके बल बालब्रह्मचारी भीष्मपितामह महामृत्युञ्जय कर शरशय्यापर सुखासीन हो धर्मोपदेश करते रहे।

यह बूटी सत्यार्थप्रकाशके प्रकाशमें तृतीय खण्डपर जगमगा रही है क्या चाहिये ?

यह अमरबूटी =) निछावरमात्र करनेसे मिलेगी।

मिलनेका पता—बाबूराम शर्मा इटावा॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ ओ३म् ॥

पुराण किसने बनाये ?

हमारे भोले हिन्दू भाई यह समझ बैठे हैं कि १८ पुराण *१८ उपपुराण व्यासजीने ‡ ही बनाये हैं जो कि पाराशरजीके पुत्र थे और जो महाराजा युधिष्ठिरके समय में विद्यमान थे, जिस समयसे कि वर्त्तमान कलियुगका आरम्भ होता है, जिसको आज तक ४९९४ वर्ष होते हैं परन्तु पुराणोंके पढ़नेसे विदित होता है कि यह निश्चय उनका ठीक नहीं है । यह बात निम्न लिखित प्रमाणोंसे सिद्ध हो जायगी-आशा है कि धर्मान्वेषी लोग पक्षपात छोड़ कर इस पुस्तकको पढ़ेंगे।

---

* १८—पुराणोंके नाम—(१) मार्कण्डेय (२) भविष्य (३) भागवत (४) ब्रह्मवैवर्त्त (५) ब्रह्माण्ड (६) शिव (७) विष्णु (८) बाराह (९) लिङ्ग (१०) पद्म (११) नारद (१२) कूर्म्म (१३) अग्नि (१४) मत्स्य (१५) ब्रह्म (१६) वामन (१७) स्कन्द (१८) गरुड़ ॥

१८—उपपुराणोंके नाम (१) आदि (२) नृसिंह (३) वायु (४) शिवधर्म (५) दुर्वासा (६) कपिल (७) नारद (८) नन्दिकेश्वर (९) शुक्र या उशनस् (१०) वरुण (११) साम्ब (१२) कल्कि (१३) महेश्वर (१४) पद्म (१५) देव (१६) पाराशर (१७) मरीचि (१८) भास्कर ॥

‡ "अष्टादश पुराणानां कर्त्ता सत्यवती सुतः"

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१)प्रमाण--१८ पुराणोंमें बुद्धको विष्णुका अवतार माना है, और जिन वाक्योंमें यह कथन है उनमें भूत काल पड़ा है भविष्यत् नहीं है, और जो उनका स्वरूप वर्णन है वह आज कलके जैनियोंके पूज्यों अथवा गुरु लोगों से ठीक २ मिलता है, इससे स्पष्ट है कि जिस समय १८ पुराण बनाये गये थे-उससे पूर्व बुद्धदेव हो चुके थे जिसको प्रायः लोग बुद्धावतार कहते हैं (शिव पु० पूर्वार्द्धखण्ड अध्याय ५ श्लोक ३से ९ तक)

परन्तु इतिहासवेत्ताओंने जयस्तम्भ अथवा स्तूपों और बुद्धमन्दिरों और आर्यावर्त्त, लङ्का, ब्रह्मा, चीन और तिब्बतकी पुस्तकों और अजायबघरकी मूर्त्तियोंसे सिद्ध किया है कि बुद्ध विक्रमी संवत्से ६१४ वर्ष पूर्व हुये थे और ८० वर्षकी आयुमें उनका देहान्त हो गया थाजिसकोआजतक२५६५वर्षहोते हैंऔरव्यासजीको ४९९४ वर्ष हुये हैं अर्थात् बुद्ध २४२९ वर्ष व्यासजीसेपीछे हुए हैं-

अतएव व्यासजी पुराणोंके कर्त्ता नहीं हो सकते॥

(२)-रामानुज विक्रमकी १२ वीं शताब्दीमें हुए थे, इसमें सब इतिहासवेत्ताओंकी सम्मति है और रामानुजने वैष्णवमत चलाकर शंख,चक्र, गदापद्मसे लोगोंकोचक्राङ्कितबनाया,परन्तुवैष्णव मतकाखण्डनलिङ्गपुराणमेंहै।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शंखचक्रैतापयित्वा यस्य देहः प्रदह्यते ।
सजीवन्कुणपस्त्याज्यः सर्वधर्मबहिष्कृतः ॥

जिसके शरीर पर तपाकर शंख, चक्रकी ये छापें लगाई गई हैं वह जीते जी मुर्दा और सर्व धर्मोंसे पतित के समान त्यागने योग्य है। इससे स्पष्ट है कि रामानुजके मतके पीछे उसका खण्डन लिङ्गपुराणमें हुआ ॥

"प्राप्तौ सत्यान्निषेधः" अर्थात् जो वस्तु है उसही का निषेध होता है, और लिङ्गपुराणका नाम १८ पुराणोंमें है रामानुज विक्रमी १२ वीं शताब्दीमें हुये थे अर्थात् आज तक उनको हुए ७५१ वर्ष होते हैं और व्यासजीको जैसा ऊपर कहा है ४९९४ वर्ष हुए हैं, अतएव व्यासजीसे रामानुज ४२४३ वर्ष पीछे भये, इसलिये व्यास जी लिङ्गपुराणके कर्ता नहीं हो सकते हैं ॥

(३) "तौजुक जहांगीरी नामकी पुस्तकमें जहांगीर बादशाह लिखता है कि आलू, तम्बाकू, गोभी तीनों वस्तु मेरे पिताके समय अमेरिकासे एक पादरी लाया था। इसमें सब इतिहासवेत्ताओंकी सम्मति है परन्तु "ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है किः—

प्राप्ते कलियुगे घोरे सर्ववर्णाश्रमेतराः ।
तमालं भक्षितं येन स गच्छेन्नरकार्णवे ॥२॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घोर कलियुगमें जो तम्बाकू पीता है वह नरकको जाता है, और " पद्मपुराण " में लिखा है॥

धूम्रपानरतं विप्रं दानं कुर्वन्ति ये नराः।
दातारो नरकं यान्ति ब्राह्मणो ग्रामशूकरः ॥३॥

जो मनुष्य तम्बाकू पीने वाले ब्राह्मणको दान देते हैं वे नरकको जाते हैं और ब्राह्मण ग्रामके शूकरका जन्म लेता है॥

हिन्दुओंकी किसी धर्म्म पुस्तकमें तम्बाकूका निषेध नहीं है और इस शब्दको अमेरिकाकी भाषामें टुबैकू Tobacco (कहते हैं गुरु नानकजीसे लगा ९ बादशाहीतक किसीने इसका खण्डन नहीं किया क्योंकि तम्बाकू उनके समयमें नहीं थी, जब जहांगीर बादशाह के समयमें आई और उसका प्रचार हुआ तो औरङ्गजेब बादशाहके समयमें १० वें बादशाह (गुरु) ने उसका निषेध किया—अतएव ब्रह्माण्ड और पद्मपुराण दोनों जहांगीरके पिता अकबरसे पीछे बनाये गये हैं और अकबर बादशाहका राज्य विक्रमके संवत् १६१३ से १६६२ तक अर्थात् सन् १५५६ से १६०५ ई० तक हुआ था, इसलिये ब्रह्माण्ड तथा पद्मपुराण व्यासजीके बनाये नहीं हैं क्योंकि उनको हुये ४९९४ वर्ष व्यतीत हुए और इन

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुराणोंको बने (१९५१–१६९२)–२८९ वर्ष हुए हैं।

४–शङ्कराचार्य रामानुजसे पूर्व हुए क्योंकि शङ्कर भाष्यका खण्डन रामानुजने किया है-सब विद्वान् जानते हैं कि शङ्कराचार्य सारे जगत्को माया और अपने आप को ब्रह्म कहते थे। हिन्दू लोग शङ्करको महादेवका अवतार मानते हैं, और उनका होना निस्सन्देह बुद्धके पूर्व नहीं होसकता क्योंकि उन्होंने बुद्धका खण्डन किया। अब पद्मपुराणमें पार्वतीजीके उत्तरमें महादेवजी कहतेहैंकि–

मायावादमसच्छास्त्रं प्रच्छन्नं बौद्धमेव च।
मयैव कथितं देवि ! कलौ ब्राह्मणरूपिणा ॥४॥

हे देवि ! कलियुगमें मैंने ब्राह्मणका रूप धरके मायावाद प्रवर्तक असच्छास्त्र (जो छिपा हुआ बौद्धमत है) रचा है। सो पद्मपुराण बुद्ध, शङ्कर और रामानुजसे पीछे बना है। व्यासजीका बनाया कदापि नहीं होसकता

(५)–जगन्नाथजीका मन्दिर १२३१ विक्रमी संवत् उड़ीसाके राजा अनङ्ग भीमदेवने बनाया था। उससे पूर्व नहीं था इसमें सब इतिहास वेत्ताओंकी सम्मति है। और मन्दिर पर भी यही संवत् लिखा है परन्तु मन्दिरका माहात्म्य स्कन्दपुराणमें लिखा है। अतएव

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्कन्दपुराण १२३१ संवत्से पीछे बना और वह व्यासकृत कदापि नहीं हो सकता है ॥

(६)—सर्व विद्वानोंकी सम्मति है कि १८ पुराण महाभारतके पीछे बनाये गये हैं और पुराणोंमें महाभारत का नाम है परन्तु महाभारतमें पुराणोंका नाम नहीं है।

और सब जानते हैं कि भागवत शुकदेवजीने परीक्षितको सुनाई थी। इतिहाससे विदित होता है कि कौरव पाण्डवके युद्धके पश्चात् महाराजा युधिष्ठिर गद्दी पर बैठे थे। उन्होंने ३६ वर्ष ८ मास २५ दिन राज्य किया। उनके मरनेके पीछे राजा परीक्षितने ६० वर्ष राज्य किया। भागवतमें लिखा है कि परीक्षितके राज्यकी समाप्ति पर अर्थात् महाभारतके ९६ वर्ष पीछे शुकदेव जीने उनको भागवत सुनाई थी।

परन्तु महाभारत शान्ति पर्व अध्याय ३३२ व ३३३ से विदित होता है कि जब युद्ध समाप्त हुआ और भीष्म जीके अन्त समय युधिष्ठिर उनसे उपदेश लेने गये, तब उन्हों ने शुकदेव जीका वर्णन किया और कहा कि बहुत काल हुआ कि वे मर गये हैं उनके मरने पर व्यास जीका शोकातुर होना भी लिखा है। युधिष्ठिर इस प्रकार पूंछते हैं कि मानों उन्होंने देखा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही नहीं था, इस समय परीक्षित गर्भमें थे, जब परीक्षितके जन्मसे पूर्व ही शुकदेव जी मर गये थे तो उनका ९६ वर्ष पीछे भागवत सुनाना असम्भव है। और यह सच है जैसा कि देवी भागवतके टीकाकारने लिखा है कि वास्तवमें भागवत वोपदेवने बनाई है और जब भागवत शुकदेव जी ने सुनाई नहीं और परीक्षितने सुनी नहीं, जिनसे व्यास बहुत पूर्व हो चुके थे तो सिद्ध हुआ कि व्यासने उसको नहीं बनाया ॥

(७)-पद्मपुराणके भागवत माहात्म्यमें लिखा है कि नारद व्याकुल होकर सनकादिकको मिले और कहा कि यवनोंने सोमनाथ, बनारस, रामेश्वर, मथुरा, इत्यादि तीर्थोंकी मूर्त्तियोंको तोड़ डाला और आश्रमों पर अधिकार कर लिया "आश्रमायवनैरुद्धाः" ब्राह्मण और पुजारी लोग बड़े दुःखित हैं (देखो उत्तर खण्ड अ० १ श्लोक २७ से ३३ तक छपी बम्बईकी) परन्तु सब जानते हैं कि ऐसा हाल मन्दिरोंका महमूद के समयसे औरङ्गजेबके समय तक होता रहा अर्थात् सन् १००० से १७०७ ई० तक इसलिये पद्मपुराण किसी रीति पर व्यासकृत नहीं हो सकता ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(८)-१८ पुराणोंमें सब ऋषि मुनियों और देवताओंकी निन्दा लिखी है, और उन पर मिथ्या कलङ्क लगाये हैं यथा ब्रह्माजीको पुत्रीसे, कृष्ण जीको कुब्जा और राधासे, महादेवजीको ऋषिकी पत्नियोंसे, विष्णुको जलन्धरकी स्त्री वृन्दासे, इन्द्रको गौतमकी स्त्रीसे, सूर्यको कुन्तीसे चन्द्रमाको अपने गुरु बृहस्पति की स्त्री, तारासे, वायु देवताको माता उर्वशीसे, बृहस्पतिको अपने भाईकी स्त्री उतथ्यासे, विश्वामित्र को उर्वशी से, पाराशरको मत्स्योदरीसे, व्यासको दासीसे, द्रौपदीको ५ पतियोंसे, देवियोंको मांस भक्षणका, वामनको छलका, बलदेव को सुरापानका, रामको छलसे बालिके मारने का । इत्यादि २ कलङ्क ऋषि, मुनि, देवताओं पर लगाये गये हैं परन्तु बुद्ध पर कोई कलङ्क नहीं लगाया गया और उसने नास्तिक मत को याथातथ्य प्रकट किया है, इससे भली भांति स्पष्ट है कि पुराणोंके कर्त्ता बुद्ध मत वाले हैं न कि व्यास जी ॥

९-व्यासजीके बनाये हुए वेदान्तसूत्र, मीमांसाकी व्याख्या, योगभाष्य, जगत विख्यात हैं उनका धर्म्म भी सब विद्वानों पर प्रकट है, परन्तु यह १८ पुराण उनसे अत्यन्त विरुद्ध हैं इनका कोई सिद्धान्त पूर्वोक्त शास्त्रों

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से नहीं मिलता जिससे अच्छे प्रकार ज्ञात होता है कि ये ग्रन्थ उनके बनाये हुये नहीं हैं ॥

१०–देवी भागवतमें लिखा है कि आर्य्यावर्तके एक राजाका लड़का १ यवनवेश्या (रंडी) पर आसक्त हो कर धर्मसे पतित होगया था। यह प्रत्यक्ष है कि जब यवन नहीं आये थे तब यवन रंडियां भी न थीं और जब मुसल्मानी रंडियां न थीं तब उन पर कोई आसक्त भी न होता था इससे निश्चय है कि देवी भागवत मुसल्मानोंके समयमें बनी है और व्यासकृत नहीं है। धर्म्म शास्त्रके अनुसार ब्राह्मणका काम पढ़ना और पढ़ाना है यथा मनुस्मृतिमें लिखा है कि:–

योनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम् ।
सजीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः ॥५॥

जो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य वेदोंको नहीं पढ़ता और अन्यग्रन्थोंमें परिश्रम करता है वह जीते ही कुटुंब सहित शीघ्र शूद्र हो जाता है और देखो अत्रिकी स्मृति में क्या लिखा है ॥

वेदैर्विहीनाः प्रपठन्ति शास्त्रं शास्त्रेणहीनाश्च पुराणपाठाः ।
पुराणहीनाः कृषिणो भवन्ति भ्रष्टास्ततो भागवता भवन्ति ६

वेदसे हीन लोग शास्त्र पढ़ते हैं शास्त्रसे हीन पु-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राण बांचते हैं पुराणोंसे हीन हल जोतते हैं। और सबसे पतित भागवत होते हैं॥

जहांगीरके समयमें गोस्वामीतुलसीदासजी मरेथे यथाः—"संवत् सोलासौ असी, असी गङ्गके तीर।

श्रावण शुक्ला सप्तमी, तुलसी तज्यो शरीर॥

जहांगीर संवत् १६८४ में मरा। सोरामायणको बने (१९५१=१६८४) २६७ वर्ष हुए हैं। इस प्रकार सबपुराण नवीन हैं केवल वेद ही सनातन हैं॥ इति॥ (संवत् १९५१] ह० लेखराम शर्मा आर्य पथिक)

पूर्ण वृत्तान्त ऐतिहासिक निरीक्षणमें मूल्य ।-) पढ़ो।

विशेष पुस्तक बड़ा सूचीपत्र मंगा कर देखिये।

मिलनेका पता—बाबूराम शर्मा इटावा।

उत्तमोत्तम उपदेश भरे भजन पुस्तक।

सांगीतरत्नप्रकाश पांचों भाग ॥।) संगीतरत्नप्रकाश १ भाग ।) संगीतरत्नप्रकाश २ भाग =) संगीतरत्नप्रकाश ३ भाग -)॥ संगीतरत्नप्रकाश ४ भाग =)॥ संगीतरत्नप्रकाश ५ भाग ≡) सत्यसंगीत)॥ संगीतस्वरोदय -) गं·

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाफ़ीनींद)। सत्योपदेशभजनावली (पं० रामप्रकाश-कृत) देखने योग्य -)॥ स्त्री भजनमाला)॥ अबला भजन -) आर्यमनरोचक -) ठाकुर बलदेवसिंह सवार कृत भजन—बनिता बिनोद =) संगीत शिक्षावली ठा० बलदेवसिंह कृत =)॥ क्षत्रियधर्म प्रकाश उत्तमोत्तम कवित्त ठा० बलदेवसिंह कृत -) फागुनगीता परम पुनीता निर्मल छन्द कबीर)॥ भजन पचासा २ भाग =) भजनमाला)। भजन पचासा १ भाग -) भजन चालीसा -) भजन इक्कीसी)॥ ज्ञानभजनावली (घीसासिंहकृत) १ भाग =) दूसरा भाग =) तीसराभाग =) चौथा भाग =) अवलासुधार भजन बत्तीसी तीनों भाग ≡) भजनामृतसरोवर =)॥ शान्तिसरोवर =) सांगीतोपदेश १ भाग)। सांगीतोपदेश २ भाग)। वेश्यादोषदर्पण =)॥ भजन बत्तीसी (पं० वासुदेव कृत)—२ भाग -)॥ प्रेमसरोवर भजन)॥। कुरीतिनिवारण -)॥ मद्यदर्पण [बलाकट कृत])। संगीतसुधार्णव =) भजन नगरकीर्त्तन १ तथा २ भाग ≡) तेजसिंह भजन शतक ।) दादरा बत्तीसी)॥। ग़ज़लसंग्रह)॥ भजनबिलबिलाहट)। भजन गुलदस्ताचिमन)। स्त्रीगीतसागर)॥ गोपुकार चालीसी)॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ी सजीवनबूटी-(वीर्यवर्णन)

इसकी प्रशंसा पाठकगण ! स्वयं पढ़कर ही जान सकेंगे=हम केवल इतना ही कहेंगे कि यदि आपको अपनी सन्तान व इष्टमित्रोंसे कुछ भी स्नेह है तो उन को यह बूटी अवश्य पान कराइये सुनाइये पढ़ाइये मूल्य केवल न्योछावर मात्र =) ही है इसे सर्व साधारणने इतना उपयोगी समझा कि २०००० कापी हाथों हाथ विकगईं अधिक प्रचारार्थ मूल्य ।) से घटाकर =) करदिया और १८) रु० सैकड़ा ।

सजीवनबूटी, बनी है अनूठी, सभीने लूटी, मन भाय.

धर्मबलिदान-(पथिकवियोग)

इसमें धर्मदुर्दशा देख पं० लेखराम शर्माका घरवार छोड़ना एक यवन द्वारा धोखेसे लेखरामका मारा जाना आदि २ बीरछन्दमें वर्णन किया गया है मूल्य =) आतिशबाजी आल्हा)। वेश्यालीला १ भाग- इसमें वेश्याओंकी प्रायः सब ही लीलायें लिखी हैं इसकी भी ८००० कापी बिकगईं मूल्य)॥ और १।) सैकड़ा=

कुरीतिनिवारण ॥

(स्वामी=मङ्गलदेवजीने) इसमें मनोहर दोहा चौ-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाइयोंमें दुःखदायी कुरीतियोंका खण्डन किया है= यदि कुरीतियों और—पापोंसे अपना धन—बल धर्म कर्म बचाना है और देशका सुधार करना है तथा ऋषि मुनियोंका नाम निशान स्थिर रखना और अपनी सन्तानका भला चाहना है तो १०० सौ काम छोड़ इसे अवश्य पढ़िये पढ़ाइये—सुनिये सुनाइये -)॥

ग़ाज़ीमियांकी पूजा [हिन्दुओंको क्या सूझा ?] मू०)॥ सत्यभास्कर—वेदशास्त्र पुराण स्मृति उपनिषदादिके प्रमाणों और प्रबल युक्तियों सहित दोहा चौपाई छन्दोंमें जड़ पूंछ उखाड़ मूर्त्ति पूजा खण्डन =) मूर्त्तिपूजाविचार)।

धर्मार्थ बांटने योग्य सस्ते पुस्तक ॥

निम्नस्थ पुस्तक मेले प्रचारादि उत्सवों पर बांटने को बड़े ही सस्ते तैयार हैं जो सैकड़ेके भाव दिये जाते हैं। २५ पुस्तक भी सैकड़ेके ही भाव हैं; २५ से कम पूर्ण दाम पर मिलेंगे यथाशक्ति पुस्तकें बांटिये ॥

☞ हज़ार पुस्तक इकट्ठे लेनेपर और भी सस्ते मिलेंगे।

बड़ी सञ्जीवन बूटी =) सैकड़ा १०) पञ्चयज्ञविधि सन्ध्या)। सैकड़ा १) धर्मप्रचार शुद्धि विषय पं० लेखराम कृत)॥ सकड़ा १॥) मांसभक्षण निषेध)। सैकड़ा ॥।) पु-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजशिक्षा)। सैकड़ा ।।।) मृतकश्राद्ध विषयक प्रश्न)। सैकड़ा ।।।) आरती–ईश्वरस्तुति नित्योत्सवोंपर गानेयोग्य)। सैकड़ा ।।) मूर्त्तिपूजाविचार)। सैकड़ा ।।।) तथा उर्दू ।) सैकड़ा मद्यदर्पणभजन)। सैकड़ा ।।।) ससुराललीला)। और ।।) सैकड़ा भजनमाला)। और ।।।) सैकड़ा आर्यसमाज के नियम संस्कृत ।।।) सैकड़ा स्त्रीभजनमाला २) रु० सैकड़ा।।

स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश ।

श्रीस्वामी दयानंन्द सरस्वतीजीका मुख्य सिद्धान्त यदि संसारको स्वर्गधाम बनाना है तो इन सर्वतन्त्र शान्तिप्रद सिद्धान्तोंको शीघ्र फैलाओ मूल्य)।। सैकड़ा १।।)

पांचपैरकी गौ महादेवका नादिया।

नादिया वाले गाय बैलके दूसरी टांग काटकर जोड़ देते हैं इस पशुहत्याके भागी भिक्षादाता ही होते हैं पूर्णवृत्तान्त)। में पढ़ो १) रु० सैकड़ा और ८) रु० हज़ार।

विशेष पुस्तक बड़ा सूचीपत्र मंगाकर पढ़िये।

सूचीपत्रादि मिलनेका पता:–

बाबूराम शर्म्मा इटावा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसे दयालु धर्मात्मा धर्मार्थ बांट दयाधर्म बढ़ावें

॥ ओ३म् ॥

"अहिंसा परमो धर्मः"

Not to kill any one is the supreme virtue.

दया धर्मका मूल है, दया रूप भगवान् ।
शर्म्मा दया न छोड़िये, जब तक घटमें प्रान ॥

मांसभक्षणनिषेध

प्रथम भाग

Evils of Flesh-Eating.

जिसे

बाबूराम शर्मा इन्द्रावली निवासी इटावा प्रवासीने अहिंसापरमधर्मप्रचारार्थ प्रकाशित किया ॥

Printed by B. D. S. at the Brahm Press Etawah.

त्रयोदशवार १०००० } संवत् १९६८ { मूल्य)। ।।।) सैकड़ा

मिलनेका पता—बाबूराम शर्मा—इटावा ॥

2.1.63 १६२२J १७.८.२

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सजीवनबूटी

यह बूटी मूर्छितोंकी मूर्छा दूरकर श्री-लक्ष्मणयती, शूरवीर, रणधीर बनाती है; इसके सेवनसे चिरप्रतापी, तेजस्वी, वर्च-स्वी, यशस्वी, ऋषि, मुनि, योगी, संन्या-सी, महावीर, योधा, बलधारी, जगत्गुरु, परिब्राट् तथा सम्राट् जगत् प्रसिद्ध अमर नाम कर गये हैं। केवल इसीके बल ब्राल-ब्रह्मचारी भीष्मपितामह महामृत्युञ्जयकर शरशय्यापर सुखासीनहो धर्मोपदेश करते रहे यह बूटी सत्यार्थप्रकाशके प्रकाशमें त-तीय खण्ड पर जगमगा रही है। यह अम-रबूटी ≈) निछावरमात्र करनेसे मिलेगी। मिलनेकापता—बाबूराम शर्मा इटावा॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ओ३म् परमात्मने नमः ॥

मांसभक्षण निषेध १ भाग ॥

(१)–मांसाहारी–ईश्वरने पशु पक्षी मनुष्यके खाने ही को बनाये हैं फिर आप मांसखाना क्यों वृथा रोकते हैं? पण्डित–भाईजी! मांसनिषेध करना वृथा नहीं है--लाभ कारक है बड़े २ डाक्टर हकीम वैद्य साक्षी देते हैं कि मांस बीमारीकी जड़ है और जो ईश्वर पशुओंको तुम्हारे खानेके लिये ही बनाता तो अन्न फल फूल दूध दही मिठाई आदिको न बनाता–देखो गाय भैंस हाथी घोड़ा छागादि घासपात खाते मांस नहीं खाते और सिंह बाघ मांसखाते घास नहीं खाते जबकि वे एक दूसरेका आहार नहीं खाते तब फिर आप अपना आहार छोड़कर हाड़ मांस क्यों खाते हो?

(२)–मांसाहारी–और भी कुछ दोष है-पण्डित–हां जीवहत्या हुए विना मांस नहीं मिलता और हत्या दयाको मिटाती है वह दया मनुष्यका अतिउत्तम गुण है–इसलिये दया गुण मिटाने वाले मांसको कदापि नहीं खाना चाहिये कहावत है कि–(मांसाहारिणःकुतो दया)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाऽकृत्वाप्राणिनांहिंसांमांसमुत्पद्यतेक्वचित् ।
न चप्राणिवधःस्वर्ग्यस्तस्मान्मांसंविवर्जयेत ॥

प्राणियोंकी हिंसा किये विना मांस कहीं कभी (भी) उत्पन्न नहीं होसकता और प्राणियोंका वध स्वर्गका देने वाला नहीं अतः मांसको वर्ज देवे ॥ (मनु० ५ अ०४८ श्लोक)

समुत्पत्तिं च मांसस्य वधवन्धौचदेहिनाम् ।
प्रसमीक्ष्यनिवर्तेतसर्वं मांसस्यभक्षणात् ॥

मांसकी (घिनौने शुक्र शोणितसे) उत्पत्ति और प्राणियों-के वध और वन्धन (क्रूरकर्मों) को देखकर सब प्रकारके मांस भक्षणसे बचे—(मनुस्मृति ५ अध्याय श्लोक ४९)

(३) मांसाहारी–इन जीवोंको ज्ञान नहीं है--परिडत-जो आपको ज्ञान है तो आपही शेर भेड़ियाका आहार न खाओ--देखो मांस शब्दका अर्थ यह है कि जिसके मांस को इस लोकमें मैं खाता हूं वह परलोकमें मुझको खायगा–यदि आप ज्ञानी ध्यानी हो तो मांस न खाओ ॥

मां स भक्षयिताऽमुत्रयस्यमांसमिहाद्म्यहम् ।
एतन्मांसस्यमांसत्वंप्रवदन्ति मनीषिणः॥मनु:०५।

इसलोकमें जिसका मांसमैं खाता हूं परलोकमें(मां सः)वह-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे खायगा। विद्वान् लोग यह मांसका मांसत्व कहते हैं॥

(४)—मांसाहारी—अच्छा मांस न खावें पर शिकार खेलनेमें क्या दोषहै ? पण्डित—शिकार खेलना राजधर्म है सो भी हिंसक दुष्ट पशुओंका शिकार करना जो प्रजाको सताते हैं और उपकारी पशुओंको दुख देने वाले हैं—जैसे सिंह बाघ तेंदुआ भेड़िया चीता आदि—जैसे भले मनुष्योंको दुःख देने वाले डाकुओंको मारनेमें राजाको कुछदोष नहीं वैसे ही सिंह भेड़ियाका मारना है पर उनके मांसको खाना नहीं चाहिये॥

(५)—मांसाहारी-जब मारडाला तब मांस खानेमें क्या दोष है ? पण्डित तबतो उन्हींसे आप भी हो गये जैसे वे मांसके लोभसे दूसरोंको मारते थे वैसे ही आपने भी उसी लोभसे मारा न्यायसे नहीं—फिर मांसकी चाट लगजानेसे भेड़ बकरी गवादिको भी मार मांससे थोंद फुलाना मांस बढ़ाना चाहोगे॥

(६)—मांसाहारी-मनुष्योंके दांत पैने (मांस खानेयोग्य) हैं फिर क्यों न खावे—पण्डित देखो बन्दरके दांत मनुष्य कैसे होते हैं और उनका शरीर भी आपसे बहुत मिलता हुआ है परन्तु वह मांस नहीं खाता फल फूल खाता है आपको भी उस पशु बन्दरसे शिक्षा लेनी चाहिये॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(७)-मांसाहारी-मांस खाने वाले बलवान होते हैं इसलिये मांस खाना चाहिये-पण्डित-मांसाहारी बलवान भी नहीं होते देखो मथुराके चौबे जो अन्न दूध घी मिठाई खाते हैं मांस खाने वालोंको पछाड़ते हैं और अन्न घासखाने वाले दो बैल जिस गाड़ीको खींचते हैं उसे सदैव मांसभक्षी चार या छः शेर नहीं खींच सकते !!!

(८)-मांसाहारी-मांस खाने वाले अधिक साहसी और बीर होते हैं-पण्डित कदापि नहीं, देखो शेर, भेड़िया मांस खाते हैं और गेंड़ा, भैंसा, सुअर, घास पात खाते हैं पर उन्हें देखकर शेर भेड़िया दुम (पूंछ) दबा कर भागजाते हैं कभी सामना नहीं करते हैं ॥ अधिकांश भांड़ भंडुआ रंडी, हिजड़ा महिरा धीमर खटीक चिकुआ गन्दे अंडे मांस मछली आदि २ खाते हैं फिर इनमें क्या साहस बीरता आगई ?

(९)-मांसाहारी-जिस देशमें मांसके सिवाय और कुछ भी नहीं मिलता वहां तो खाना चाहिये (पण्डित)-जहां मनुष्य रहते होंगे वहां पेड़ घास खेती अवश्य होती होगी और जहां ये नहीं होते वहां मनुष्य भी नहीं रह सकते जो रहते भी हैं तो पशु प्रकृति वा जं-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गली होते हैं आपतो अपनेको सभ्य मानते हो इस-
लिये मांसभक्षी पशु न बनो जंगलियोंको भी सभ्य बनाओ
और आप भी सभ्य दयालु धर्मात्मा बनो—

(१०)--मांसाहारी-आपत्काल और रोगादि नि-
वृत्तिके लिये क्या दोष है? पण्डित—आपत्कालमें भी
किसी और उपायसे निर्वाह हो सकता है जैसे कि मांस
के न खाने वाले करते हैं और विना मांसके औषधि-
योंसे रोगोंका निवारण होता रहता है (मांससे तो और
भी रोग दोष बढ़ते हैं) देखो मनुस्मृति अध्याय ५
श्लोक ५० ॥

न भक्षयति यो मांसं विधिंहित्वापिशाचवत् ।
सलोकेप्रियतांयाति व्याधिभिश्चनपीड्यते ॥

जो विधि (शास्त्रीयाऽहिंसाधर्म पालनाऽज्ञा) छोड़
कर पिशाचवत् मांसभक्षण नहीं करता वह लोगोंमें
प्यारा होता और रोगोंसे कभी पीड़ित नहीं होता
(इससे मांसभक्षण रोगकारकभी समझना चाहिये और
प्रत्यक्ष जबसे मांसभक्षणादि दुराचार फैले हैं तबसे रोग
भी अधिक देखे सुनेजाते हैं) ॥

(११)-मांसाहारी जो मांस न खायं ता पशु इतने बढ़-
जायं कि पृथ्वी पर न समासकें-पण्डित-मनुष्यका मांस तो

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई भी नहीं खाता फिर मनुष्य इतने क्यों न बढ़गये॥

(१२)-मांसाहारी-जब पशु और कामके न रहैं तब खानेमें क्या हानि? पण्डित-कामके तबही न रहेंगे जब वे बूढ़े व रोगी होंगे ऐसोंका मांस खाना और भी बुरा है जवानीमें जिस पशुकी कमाई खाई, सवारी चढ़ी, दूध पिया, फिर बुढ़ापेमें हाड़मांस और चामके लाल-चवश उन्हींकी गुधी (गर्दन) कटादी वाहरी कृतघ्नता स्वार्थता !!! क्या यह मनुष्यताका काम है? क्या कोई अपने बढ़े माता पिता को काम न करनेसे मार डालेगा?

(१३ मांसाहारी-अच्छा जो कामके पशु हैं उनको न मारनाचाहियेपरन्तुमुर्गासुअरइनकेमारनेमेंक्या दोष है?

पण्डित- यह भी बड़े कामके जीव हैं यह ईश्वरीय ताजीरातकी दफ़ा ३४ हैं देखो १०० भंगीजो मैला उठा ते हैं उससे अधिक मुर्गा सुअर उठाते हैं भंगी तो इधर से उठाकर उधर फैंक आते हैं जिसकी दुर्गन्धि वैसीही बनी रहती है परन्तु ये मैला खाकर हमारे पास ही खड़े रहें और दुर्गन्धि नहीं आती है ऐसे ही औरभी पशुओंसे अनेक लाभ हैं-चाहे स्वार्थतावश आज आप की समझमें भले ही न आवे॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१४) मांसाहारी--जो पशुको आप न मारे विक्रता मांस लेलें तो क्या दोष? पण्डित=खाने वालों ही के लिये तो पशु काटे मारे जाते हैं जो कोई मांस खावे ही न तो वे मारे ही क्यों जावें इसलिये खानेमें बड़ादोष-पाप है॥

(१५)--मांसाहारी-जो देवीके मन्त्र या ईश्वरके कलमासे मारकर प्रशाद लेलें तो कुछ भी पाप नहीं लगेगा पण्डित--देवीका नाम जगदम्बा और ईश्वर जगत्पिता है पशु भी जगत्के बाहर नहीं हैं तो क्या देवी और ईश्वर अपने बच्चोंको ही मरवाते और खाते हैं? कभी नहीं यह तो वाममार्गी, नीच, नावने, स्याने दिवाने मांसाहारियोंका देवी और ईश्वरका बहाना करके मुफ्ती मांस उड़ाना-खून बहाना है॥

(१६) मांसाहारी-पण्डित जी क्या आप इन प्रमाणोंके सिवाय और भी इस विषयके युक्तिसिद्ध प्रमाण दे सकते हो? पण्डित-हां सुनिये, मनुष्यकी शारीरिक बनावटही इस बातका पुष्ट प्रमाण है कि वह मांसाहारियोंमें नहीं है वनस्पति सागपात फलफूल खाने वालोंमें है जैसा कि अच्छे पण्डित और विद्वान् सरइबटसहोम, बैरन क्वीवर, रे, प्रोफैसर लारेंस लार्डमिन्वुड मिस्टर टामसवैल

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदिने बड़े २ प्रमाणोंसे प्रकट किया है कि मनुष्य शा-रीरिक बनावटसे मांसाहारियोंमें पैदा नहीं हुआ है॥

(१७)-महाशय लार्ड बुक और मिस्टर सिगलट जो रसायन विद्यामें बड़े निपुण हैं लिखते हैं कि पेड़ोंऔर पशुओंकी बनावटमें बहुत सी वस्तुयें एकसी हैं लाई-का पुस्तक एम, एल, आर, लेटर्स ओनकेमिसट्री देखो॥

(१८) मांसमें १०० भागमें केवल ३६ भाग वह मत र-हता है जिससे मनुष्य पुष्ट रहता है शेष ६४ भाग पानी रहता है और अन्नमें ८० तथा ९० भाग उस सतका र-हता है, ऐसा ही हाल और सतोंका भी है--(समझे)

(१९) मांसमें मीठा खट्टा आदि स्वाद (ज़ायका) कुछ भी नहीं है उसमें घी मसालेका स्वाद आजाताहै अब यही घी मसाला चना सौंठ आदि अन्नमें मिलाया जाता है तब मांससे अधिक स्वादिष्ट मज़ेदार होजाताहै॥

(२०)--वनस्पति खाने वालोंका ईश्वर रचित स्वभाव है कि वे बहुधा रात सोने और आराम करनेमें बिता-ते हैं और मांसाहारी रातको जागकर शिकार खेलतेऔर पशुओंको मारते हैं इसलिये मनुष्य मांसाहारीनहींहै॥

(२१)--मनुष्यके शरीरसे और बनस्पति खाने वाले

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पशुओंके शरीरसें पसीना निकलता है परन्तु मांसभक्षी पशुओंके शरीरसे नहीं निकलता इसलिये मनुष्य बनस्पति खाने वालोंमें है मांस खाने वालोंमें नहीं है ॥

(२२)--मनुष्य, गौ, बैल और भैंस आदि अपना आहार चबाकर खाते हैं और मांसभक्षी पशु अपने आहारको वैसा ही लील (निगल) जाते हैं इस हेतुसे मनुष्य बनस्पति खाने वालोंमें है और मांस खाने वालोंमें नहीं है ॥

(२३)--मनुष्य और बनस्पति खाने वाले पशु घूंटबांध कर पानी पीते हैं परन्तु मांस खाने वाले पशु जीभसे चाटते हैं इसलिये मनुष्य मांस खाने वालोंमें नहीं है

(२४) मनुष्य और बनस्पति खाने वाले पशु सरल स्वभाव होकर बहुधा किसीको नहीं सताते और मांसाहारी पशु क्रूर (निष्ठुर) नित्य ही दूसरोंके खाने का उपाय करते यहां तककि कभी२ अपने बच्चोंको भी खाजाते हैं--इस लिये मनुष्य बनस्पति खाने वालोंमें है मांसभक्षकोंमें नहीं है ॥

(२५) मनुष्यके दांतोंकी बनाबट बनस्पति खानेवालों कैसी है मांसाहारी शेर कुत्ताके दांतों कैसी नहीं है इसलिये मनुष्य बनस्पति खानेवालोंमें है मांसभक्षी नहीं॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२६)-जो मांसाहारी कुत्ते भेड़ियाको बालकालसे ही मांसका बचाव रक्खा जाय तो उनकी निष्ठुरता कम होजायगी और भेड़को (जो अतिसीधापशु है) मांस ही खिलाया जाय तो वह भी दुष्ट स्वभाव होकर दूसरों को सताने लगेगी (हाड़मांस खाये बिना चैन नहीं पड़ेगा)

(२७) मांस खानेमें खर्च अधिक पड़ता है और अन्न-में कम क्योंकि बहुधा मांससे अन्न सस्ता मिलता है॥

(२८) मांस सब जगह और सब समय पर नहीं मिलता परन्तु अन्नादि सब जगह सुगमतासे मिल सकता है॥

(२९)--आजका मांस कलके कामका नहीं रहता सड़कर दुर्गन्धित हो जाता है परन्तु आटा दाल फल तरकारी शाकादि बहुत दिनों तक खाने योग्य बने रहते हैं॥

(३०)--दूध घी अन्न महंगे होजाते हैं इसका मुख्य कारण मांस ही खाना तो है--" नष्टे मूले नैव फलं न पुष्पम्० " अर्थात् जड़ नहीं तो डाली कैसे हो जड़रूप बकरी गवादि चौपाये तो लोग खारहे हैं फिर डाली-रूप दूध घी अन्नके न मिलनेसे मनुष्य दुःखी क्यों न होवें--इस दुःखका दोष पाप मांस खाने वालों पर नहीं है तो भला बतलाइये किसपर है ? मनुस्मृति देखो—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुमन्ता विशसिता निहन्ताक्रयविक्रयी।
संस्कर्त्ता चोपहर्त्ताच खादकश्चेतिघातकाः॥

[मनुस्मृति (धर्मशास्त्र) अध्याय ५ श्लोक ५१]

अर्थ--(१) मारनेकी सलाह देने वाला (२) अङ्गोंकी काट छांट करने वाला (३) मारने वाला (४) खरीदने वाला (५) बेचने वाला (६) रांधने पकाने वाला (७) परोसने वाला (८) खाने वाला धर्मशास्त्रमें ये ही ८ घातक हिंसक हत्यारे कसाई बताये गये हैं और कसाइयोंके सिर पर कहीं सींग नहीं होते हैं। (भजन)

हत्यारे आठ कसाई, महाराज मनू बतलाते॥ प्रथम सलाह दे पशू कटावे--हाड़ मांसके मजा बतावे (हरे) धनके नाते जीव मरावे। गूंगे पशू कटाते॥ (महाराज मनु०) ॥१॥ दूजा कसाई वह कहलावे--हाड़ मांस जो काट गिरावे (हरे) क़तल पशूकी खाल छुड़ावे। खट खट छुरी बजाते (महाराज मनु० ॥ २ ॥) तीजा कसाई काटन वाला--और बलिदान चढ़ावन वाला (हरे) पशूके प्राण निकारन वाला। कलमा पढ़ ज़िबह कराते--महाराज मनु० ॥ ३ ॥ चौथा मांस खरीदन वाला--सट्टा कर पशु लाने वाला--(हरे) बधिककों-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पशू दिलाने वाला। छूचड़की दलाली खाते। (महाराज मनु०॥) मांस पांचवें तोलन वाला--मरणहेतु पशु देने वाला॥ (हरे) बूढ़े चौपे बेंचने वाला। कसाईके खूंटा बंधाते। (महाराज मनु० ॥५॥) छठवां मांस पकाने वाला डेगमें लाश जलाने वाला--चौका मरघट करने वाला। घर भीतर लाश जलाते। (महाराज मनु० ॥६॥) सप्तम मांस परोसन वाला--परशादी कह बांटन वाला (हरे) मोल बजारसे लाने वाला, मांससे पेट फुलाते (महाराज मनु० ॥७॥) अष्टम मांस निगलने वाला--चौपे चौआ खाने वाला (हरे) शर्मनू ! मुर्दा भखने वाला--पेटकों कबर बनाते। (महाराज मनु० बतलाते॰८)॥

चौपाई--(विश्रामसागर छापानवलकिशोर पृष्ठ ४२)
आठ जो हिंसाके गृह जानों--सो भारतमें साखि बखानों
जीव बधन इक १ आज्ञा देई--दूजो २ मारै त्रै ३ गहिलेई॥
चौथा ४ सुना सवांरनहारा--पचवां ५ बेंचनहार निहारा
छठां रसोई जीव चढ़ावै--सतवों ७ सो जो परसि जिमावै
अठवां ८ खान हार जो होई--परे नरक महिं आठों सोई॥

दोहा--मोल मंगावे घरहते ताहि द्रव्य दे कोठ।
सुख सम्पति सब नाश हो, मोक्ष लहै नहीं सोठ॥

ओ३म्—शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तम २ उपदेश भरे भजन पुस्तक ॥

ठाकुर बलदेवसिंह सवार कृत भजन--शान्तिसरोवर =) वनिताविनोद =) संगीतशिक्षावली =)॥ क्षत्रियधर्म प्रकाश उत्तमोत्तम (कवित्त) -) फागुनगीता--परमपुनीता निर्मल छन्द कबीर)॥ भजनपचासा दोनोंभाग ≡) भजनइक्कीसी)॥ ज्ञानभजनावली (घीसासिंह कृत) ४ भाग ॥) अबलासुधारभजनबत्तीसी ४ भाग ≡) वेश्यादोषदर्पण--भजनावली =)। प्रेमसरोवर)॥। कुरीतिनिवारण -)॥ वेश्यालीला)॥ भजननगरकीर्त्तन ≡) धर्मबलिदान आल्हा =) संगीतरत्नप्रकाश पांचो भाग सजिल्द ॥।=) सत्यसंगीत होली)॥ सभाप्रसन्न नवलसिंह कृत उर्दू ≡) भजन हक़ीक़तराय)॥ संगीतस्वरोदय =) गंगा की नींद)। सत्योपदेश भजनावली (पं० रामप्रकाश कृत) देखने योग्य -)॥ स्त्रीभजनमाला)॥ अबलाभजन -) आर्यमनरोचक -) संगीतसागर =) भजनप्रकाश -)॥ गुलदस्तेचिमन भजन--ठाकुर नत्थासिंह कृत)॥ आरती)। भजनपरीक्षा)॥ मद्यदर्पणभजनावली -) वेश्यालीला)॥

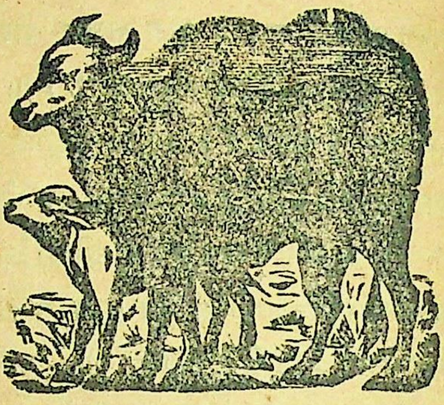
धर्मबलिदान--(पथिकवियोग) =)

पता--बाबूराम शर्मा--इटावा ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* पांचपैरकी गौ ॥ *



भारत होकर गौ पुकारे ।
है कोई पुत्र जो दुःख उवारे ॥
सहै दुःख गोसन्तति मारे ॥
धन्य धन्य जो कष्ट निवारे ।

महादेवका नादिया ॥

नादिया कैसे बनता है, यदि यह गुप्त भेद (रहस्य) और गोकष्ट जानना तथा)। में कोटि२ गौओंका पुण्य लूटना चाहते हो तो यह पुस्तक एकवार अवश्य पढ़िये औरोंको पढ़ाइये मूल्य)। धर्मार्थ बांटने वालोंको १)रु० सैकड़ा और ८)रु० हज़ार ॥

विशेष पुस्तक बड़ासूचीपत्र मगाकर पढ़िये ॥

मिलनेकापता—बाबूराम शर्मा इटावा ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ ओ३म् ॥

2.9/62
9622K
15.8.2..

सत्यसङ्गीत ॥

जिस को

श्रीयुत प० गणेशीलाल जी त्रिपाठी
सभासद् आर्यसमाज लखनऊ ने
ललितपदों में रसिक जनों के
सुशिक्षार्थ बनाया ॥

और जिसे उपकारी समझ
प० बाबूराम शर्मा आर्यपुस्तकालय इटावा ने
पं० सत्यव्रत शर्मा के प्रबन्ध द्वारा तदीय
वेदप्रकाशयन्त्रालय इटावा में
मुद्रित करा प्रकाशित किया

सप्तमबार २००० } संवत् १९६१ { मूल्य)॥ १॥) सैकड़ा

CC-0. Gurukul Kangri Collection Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तम २ उपदेश के भजन पुस्तक।

सत्योपदेश (धेला) आर्य्यसङ्गीत पुष्पावली ॥) उर्दू ॥) भजन पुष्पावली ।) उर्दू ।) सभा प्रसन्न (नवलसिंह-कृत) ≡) उर्दू ≡) प्रेमोदय भजनावली =) आर्ती)। सङ्गीतस्वरोदय -) सङ्गीत सुधासागर)॥ भजनेन्दु -) गंगा की नींद)। सत्योपदेश भजनावली (पं० राम प्रकाश कृत) देखने योग्य -)॥ दयानन्द प्रकाश (उत्तम २ कवित्त))॥ स्त्री भजनमाला १ भाग -) सङ्गीतसुधार्णव =) अबलाभजन चालीसी -) आर्यभजनावली)॥ भजन भास्कर)॥ ठाकुर बलदेव सिंह सवार कृत भजन—भजनामृत सरोवर =)॥ सङ्गीत रत्नाकर =) शान्ति सरोवर =) सुखचैन सरोवर =) वनता विनोद =) चेतावनी चन्द्रोदय -) सुमति सुधाकर -) बारह मासा भारत विलाप)॥ मानसविनोद पं० बद्रीदत्त शर्मा कृत उत्तमोत्तम भजन =)॥ फागुनगीता—परम पुनीता निर्मल छन्द कबीर)॥ नूतन भजनसंग्रह नाटकीय थियेटरी ध्वनि में उत्तम २ भजन =) करसाली भजन (जो भजनमण्डली वाले गाते हैं) भजन चालीसा -) भजनपच्चीसी)॥ ज्ञानभजनावली (धीरासिंहकृत) १ भाग =) २ भाग =)

☞ विशेष पुस्तक बड़े सूचीपत्र में देखो ॥

पता—पं० बाबूराम शर्मा—इटावा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म् ॥

सत्यसङ्गीत ॥

दोहा—विघ्नहरण शुभगण करण, कारण करण अभेव।
सकल सृष्टिपालन करण, नमोनमोतिहि देव ॥

लावनी

उस पारब्रह्म का सुमिरन कर जो सकलसृष्टि का त्राता है।
उसे छोड़ के अयमन मूरख क्यों चित को भटकाता है ॥
निर्विकार नहिं अकार जिस के नहीं देह को धरता है।
मात तात नहिं भ्रात कुटुम्बी नहीं जन्मता मरता है ॥
अलख अगोचर सदा एकरस वश नहिं किसी के रहता है।
नसनाड़ी के नहिं बन्धन में निराधार श्रुति कहता है ॥
न्यायी और दयालु ईश जो सर्व सुखों का दाता है।
उसे छोड़ के अयमन मूरख क्यों चित को भटकाता है ॥१॥
चिदानन्द जगदीश निरञ्जन व्यापक है सब का स्वामी।
स्वयं सिद्ध है शुद्ध बुद्धि अरु सब घट का अन्तर्यामी ॥
वेद उसी का ज्ञान जान जो अविनाशी सुखराशी है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकलभुवन में विचार रहा नहिं एक देश का वासी है।
उसी का ध्यान धरो निशिवासर तुझे उसी से नाता है।
उसे छोड़ कर अय मन मूरख क्यों चित को भटकाता है २
लै परमाणु रचा जगत् कहिं सूक्षम थूल दिखाया है।
सूर्य चन्द्र पृथिवी अकाश अरु तारा आदि बनाया है॥
स्थावर जंगम को बनाय पुन पालनपोषण करता है।
दुष्टों को है दण्डहस्त अरु सुजनों का दुःख हरता है॥
आदि अन्त से सदा रहित जो पूरण ब्रह्म विधाता है।
उसे छोड़ के अय मन मूरख क्यों चित को भटकाता है ३
खान पान भय मैथुनादि यह पशुओं में भी रहता है।
ज्ञान ध्यान है विशेष इस में नरतन को जो लहता है।
सत्संग राख नित गुनियनका क्यों विरथा जन्म गवांता है।
संसारी सुख नाशमान हैं धर्म संग एक जाता है॥
समुझ बूझ मन से विचार कर क्या इस में तू पाता है।
उसे छोड़कर अयमन मूरख क्यों चित को भटकाता है ४
धर्म अहिंसा वेद बतावै इस को क्यों तू तजता है।
स्वर्ग नहीं है पशु हिंसा में क्यों जीवों को बधता है॥
पक्षपात को छोड़ भ्रात अब न्यायदृष्टि से तुम देखो।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करो एकता तन मन से तुम देव नहीं जग को धोखो ॥
जनरञ्जन दुःखभञ्जन का अब ध्यान गणेशी भाता है।
उसे छोड़ के अय मन मूरख क्यों चित को भटकाता है ५

भजन ॥ १ ॥

मनसेमननकरतनहिं प्यारे क्यों चितको इतउत भटकावै ॥
कामक्रोध मदमोह लोभ में क्यों अपने जिय को भरमावै ।
त्याग सकल यह असत पदारथ तब तू कोटि २ सुखपावै १
सब का स्वामी अन्तर्यामी पूरण ब्रह्म अलख कहलावै ।
ताके ध्यान विना नहिं मुक्ती मृगतृष्णा में क्यों तू धावै २
आतमज्ञानध्याननिशिवासर उठि प्रभात हरिमें चितलावै
दया समान राख जीवन पर अन्तःकरणशुद्धि हुय जावै ३
परसन्ताप ताप समजानो परहित को मन वचसे भावै ।
शुद्ध आतमा सदा राख तू तब तू परमगती को पावै ४
दीनदयालु कृपालु गणेशी उस ही को तूं शीश नवावै ॥
जाको मुनी यती श्रुति स्मृति वीन बजाय के नारद गावै ५

भजन ॥ २ ॥

ध्यान धरो उस पारब्रह्म का जन्म सुफल तेरो हुय आई ।
मिथ्या सुख जो दुःख समान है करतु जीव अति हर्षाई ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष समान यह तुम को हू है युक्ति न एको धन आई १
वर्जित कर्म करत निशिवासर कहत कोई नहिं लखिपाई।
सहस्र नेत्र से लखत ईश जो ताको डर तू भाई २
आर्यवंश अवतंस कहावत नेक लाज तोहि नहिं आई।
शुभ को अशुभ अशुभ शुभ मानत ऐसी कर जनि लड़काई ३
जप तप संयम नियम धर्म को कर इन को तू चित लाई।
अन्त समय सुख मूल यही है पुण्य महा अतिफलदाई ४
हे जगदीश। सुमति दे हम को कहत गणेशी शिर नाई।
भारत आरत हरण कृपानिधि शरण २ जय जगराई ५

ठुमरी ॥३॥

हम तो आर्य्य सों प्रीति लगाई रे। प्रीति लगाय सुख बहु तेहि पाई रे॥ आराधन जगदीश दया निधि। निराकार जिहि वेदन गाई रे १ सत उपदेश करत निशिवासर। जासे होत है देश भलाई रे २ आनन्द कन्द दयानन्द स्वामी। घोर नींद से दियो है जगाई रे ३ उठो गणेशी नयन उघारो। देखो देखो चेतो देश नहीं नशाई रे ४

ठुमरी ॥४॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चलो री समाज सत्य जहां छायो री। वेद विहित सब रीति चलायो री॥ सुजन समूह आर्य्य जह बैठे। सत उपदेश में ध्यान लगायोरी १ करत विचार देश उन्नति पर। द्रोह कपट छल छिद्र हटायो री २ विद्यालय अनाथ प्रदि पालन तन मन धन से करत सहायो री३ कहत गणेशी सुनो प्रिय भ्राता। जगदीश्वर को क्यों विसरायो री ४

भजन ॥ ५ ॥

विरथो जन्म गवांवत प्यारे क्यों नहिं हरि में ध्यान लगावे॥ करि बहु यतन कियो धनसञ्चय अन्त समय तेरे काम न आवै॥ रथ गज तुरंग पालकी आदिक पृष्ठ चढ़ाय न वह पहुंचावै॥ १॥ प्राण से अधिक पियारि नारि जो देहरी नांघ बैठ रह जावे॥ इष्ट मित्र अरु लोग कुटुम्बी सब श्मसशान तक सङ्ग तेरे जावें॥ २॥ नाना पाक स्वाद अति रुचि के कर भोजन जो तनहि फुलावे॥ वह भस्म भयो लकड़ी सङ्ग अन्त समय कुछ नहिं दिखलावे। विचार मन कहत गणेशी क्यों चित को जग में भरमावे॥ धर्म कर्म यह सङ्ग चलेंगे इन ही में तू

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित लगावे ॥ ५ ॥

बसन्त ॥ ६ ॥

आये बसन्त हिय उमगो री सबहि आर्य्य मिल खेलत होरी ॥ वेद रङ्ग से रंगे सब सज्जन देखि अनार्य्य चले मुख मोरी ॥१॥ सत उपदेश करत निशवासर कपट फन्द सब दूर कियोरी ॥२॥ ऐसो साज समाज आज लखि जयतिर चहुं ओर भयो री ॥३॥ भयो प्रकाश सत्य वेदन को कहत गणेशी तिमिर गयो री ॥ ४ ॥

होली ध्वनि बसन्त ॥ ७ ॥

खेलत फाग भले विधि सज्जन वैदिक धर्म्म की धूम मचाई॥ शील क्षमा समता शुचि संयम धीरज की पिचकारी सुहाई ॥१॥ प्रीति प्रतीति दया रंग राते क्षण छवि अतिशय अधिकाई ॥ २ ॥ स्वांग सनातन धर्म विचारत मारग सत्य सप्रेम बताई ॥ ३ ॥ उमड़ि २ चहुंदिश घिर आये धर्म ध्वजा जग में फहराई ॥ ४ ॥ ज्ञान ध्यान रंग भरि २ मारत ईश्वर भाव भक्ति दिखराई ॥५॥ वेद गान सुखदान गणेशी धन्य २ जिन राह लखाई ॥ ६ ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होली ॥ ८ ॥

वैदिक धर्म प्रचार आजलखि पल क्षण कहुं मोहि कल न परत है ॥ सुजन समाज चलोरी सजनी वेदध्वनि सुनि जिय हुलसत है ॥१॥ केसर अगर तगर सब औषधि सबहि आर्य्य मिल हवन करत हैं ॥ २ ॥ गावैं कोई उपदेश सुनावैं पारब्रह्म का यश वर्णत हैं ॥ ३ ॥ करिये कृपा हे: दयानिधि स्वामी कपटी कपट दल बहु झगरत हैं ॥ ४ ॥ वेद विमुख नर की गत सजनी रवि लखि जैसे नखत छिपत हैं ॥ ५ ॥ सत्य प्रचार को धार गणेशी दिन पर दिन अतिप्रबल बहत है ॥ ६ ॥

होली ध्वनि काफी ॥ ९ ॥

आर्यों ने ऐसी होली मचाई ॥ चहुं दिश से सज्जन सब आये बैठे समाज बनाई।गावत वेदतान अतिनीको ध्यावत यश जगराई ॥ अगम गति जाकी है भाई ॥ १ ॥ खेलत फाग सुलभ शुचि संयम सत पिचकारी बनाई । प्रेम रंग रंग भरि २ मारत ज्ञान गुलाल सुहाई ॥ रंगे सब सज्जन आई(२)जप तप दान गान वेदन को हिय उत्साह बढ़ाई । मिलत परस्पर प्रेम से सज्जन द्रोह कपट बिसराई ॥ कह

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त हैं जगत भलाई ॥३॥ विधवा अनाथ विपति गौवों की ताधर बुद्धि चलाई। करत प्रबन्ध अहर निशि बासर तन मन धन से सदाई॥ दुःख निज पर अधिकाई॥ ४॥ सत्य प्रचार सुधार जगत को ऐसी फाग सुखदाई। खेलहु खेलहु परहितकारक देहु अविद्या नशाई॥ गणेशी बलि बलि गाई॥ ५॥

होली काफी ॥ १० ॥

होली खेलहु समुझ के रे भाई। वृथा क्यों धूर उड़ाई॥ पर सन्ताप ताप अरु तामस होलिका लगाई। याहि जलाय भस्म कर दीजै शुद्ध चित्त ह्वै जाई॥ करो कछु देश भलाई॥ १॥ काम क्रोध मद लोभ मोह जे करत सदाकुटलाई। कारो मुख कर इनहिं निकालो ऐसो स्वांग सुखदाई॥ शोभा क्षण २ अधिकाई॥ २॥ धीर सम। समता आराधन अगम ईश श्रुति गाई। ताके ध्यान में मतवाले ह्वै तन की सुधि बिसराई॥ मद्य ऐसी फलदाई॥ ३॥ ज्ञान ध्यान सनमान सुजन को रंग सुरङ्ग बनाई। प्रेम प्रतीत प्रीति पिचकारी मारी जिया हुलसाई॥ धूम पड़ुं दिशि में छाई॥४॥ हे जगदीश अ-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नादि अनूपम निराधार जगराई। होय कृपा अब तेरी गणेशी भारत विपति नशाई॥ फाग तब होय सुहाई ५

होली काफी ॥ ११ ॥

जागो २ हो भाई विपति चहुं दिशि घिरि आई॥ सोवत भारत दीन दशा में तन की सुधि बिसराई। भारत भानु ने आनि जगायो उठहु आर्यगणभाई॥ अविद्या जगत में छाई॥ १॥ चौंक पड़े सब इत उत देखत कपट जाल बहुताई॥ विनय करत कर जोर २ पुन शरण २ जगराई। करो अब आनि सहाई॥ २॥ देश हितैशी धीरज दीन्हों वेद भाष्य दिखराई। सब मिल साज समाज की कीजै पढ़हुवेद हरषाई॥ दशा बिगड़ीबनि आई॥ ३॥ पुनि उपदेश सत्य को कीन्हों संध्यादिक बतलाई।

नियम दिये दश जग उपकारी जासे देश भलाई॥ कुमति सब धोय बहाई॥ ४॥ देश विनाशक निज हित साधक बहु तक गाल फुलाई। अष्टादश पुराण लै दौड़े ऋषि ने काट बहाई॥ छिपे सब इत उत जाई॥ ५॥ करि देशाटन देश देश में विजय कीन्ह सब ठाईं। मतवादी जे धर्म विदूषक पोल खोल दिखलाई॥ जगत

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिन लूट के खाई ॥ ६ ॥ कर सुधार संसार भारि को चलि दियो डंका बजाई । शोक अधिक भारत पे गणेशी को हमें सत्य सिखाई ॥ विना ऐसे ऋषिराई ॥ ७ ॥

होली पर्व १२ ॥

मोरी सारी उमरि योंही बीती जाती । कोई सांई मिलन की बतादे घात ॥ भूल गई मैं अपने नाथ को तासे हिया मेरो थरथरात ॥ १ ॥ मैं बौरी कबहुं नहिं चेती सुमिरन कीन्हों न सांझ प्रात ॥ २ ॥ जिन पर थी मोहि आश मिलन की निजस्वारथविश्वासघात ॥ ३ ॥ कामक्रोधमदलोभ मोह में विषयन सङ्ग रही अटपटात ४ स्वामी दयानन्द सत्य सनेही प्रभू मिलन की बताई बात ॥ ५ ॥ कहत गणेशी सुनो सज्जनजन समय चूकि फिरि मलि हो हाथ ॥ ६ ॥

होली काफी १३ ॥

होली खेलत आर्य भाई ॥ सत्य को रंग धर्म पिचकारी उन्नति अबिर बनाई । खेलत हिलिमिलि वेदप्रचारक धर्मध्वजा फहराई ॥ तिमिर सब जात नशाई ॥ १॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेदमन्त्र से हवन करत हैं सुगन्धि रही जग छाई। करि ललाट लेपन केसर को शोभा वरणि न जाई ॥ जय-ध्वनि बजत बधाई ॥ २ ॥ अतुल प्रीति सब आर्यभ्रातृ को मिलत हिया लपटाई। कोटि कोटि धन्यवाद है तुम को जो यह वृक्ष लगाई ॥ जगत को है फलदाई ॥३॥ खेलत फाग राग वेदध्वनि कहत गणेशी बुझाई। पुलकि गात हर्षात आर्यमिलि ऐसो फाग सुखदाई ॥ रचो यह फाग सदाई ॥ ४ ॥

होली काफी १४

कैसी रीति चलाई। कुमति हव जगत में छाई ॥
वेदविरुद्ध काज अनुसारत नाना कथा बनाई।
जो है सकल सृष्टि का कर्त्ता ताको दीन्ह भुलाई ॥
लाज तिन को नहिं आई ॥ १ ॥
जन्ममरण से रहित ईश जो अद्भुत गति श्रुति गाई।
ताको रामकृष्ण करि मानत गलियन बीच नचाई ॥
विमुख ईश्वर से भाई ॥ २ ॥
निज स्वारथ भारत में छायो फूट को वृक्ष लगाई।
एक मत के सौ मत कर दये जग को दीन भरमाई ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रन्थ मन गढ़ित बनाई ॥ ३ ॥
दया धर्म को लेश न तन में हिंसा करत सदाई।
मुक्ति मार्ग बतावत तामें मांस उदर भरिखाई ॥
धर्म ऐसो अरिजाई ॥ ४ ॥
हे ! जगदीश दीनप्रतिपालक करिये नेक सहाई।
विनय करत करजोर गणेशी तुम बिन कोउ न सखाई ॥
शरण हम किहि की जाई ॥ ५ ॥

भजन

वृथा क्यों जन्म खोता है अरे मतिमन्द नरतन का।
लगा रहु ध्यान में उस के जो स्वामी है सभी जनका ॥१॥
यहीं के सङ्ग साथी हैं यहीं के मित्र हैं तेरे।
न भाई बन्धु सुत दारा रिशवत भी चले धन का ॥ २ ॥
यही संसार की गति है कोई आता कोई जाता।
जो करना हो सो कर ले तू रहे न पछताव फिर मनका॥
ये बसुधा के भये स्वामी हजारों राजा महाराजा।
कहांयादव कहां पाण्डव कहां परिवार रावण का ॥ ४ ॥
ये बन्धन से निकलने का करो कुछ यत्न अय प्यारे।
करो उपकार तन मन से यही कारज मनुष्पन को ॥५॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हटावो चित्त विषयों से अहिंसा धर्म को जानो ।
पढ़ो वेदों की सत्‌विद्या नहीं तो है पशु वन का । ६ ॥
…गवेशी सन्ध्योपासन में रहो तत्पर हमेशा तुम ।
…भजन में उस मति खोओ व गाओ गुण निरञ्जन का ॥७॥

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

आर्य्यसमाज के नियम ॥

१—सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है ॥

२—ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप निराकार सर्वशक्तिमान् न्यायकारी दयालु अजन्मा अनन्त निर्विकार अनादि अनुपम सर्वाधार सर्वेश्वर सर्वव्यापक सर्वान्तर्यामी अजर अमर अभय नित्य पवित्र और सृष्टिकर्ता है उसी की उपासना करनी योग्य है ॥

३—वेद सत्य विद्याओं का पुस्तक है वेद का पढ़ना पढ़ाना सुनना और सुनाना सब आर्यों का परमधर्म है ॥

४—सत्य ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५—सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य असत्य को विचार करके करना चाहिये ॥

६—संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक, और सामाजिक उन्नति करना

७—सब से प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथा योग्य वर्तना चाहिये

८—अविद्याका नाश और विद्याकी वृद्धि करनी चाहिये ॥

९—प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझना चाहिये ॥

१०—सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें ॥



CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

–ओ३म्–

॥ शिवलिङ्गपूजाविधान ॥

पण्डित रामविलास मिश्र मन्त्री आर्यसमाज
शाहाबाद ज़ि हरदोई अनुवादित

9622 2.9/63
9.V.2 N9
Babu Ram ... Arya Pus...
बाबू राम शर्मा
आर्य पुस्तकालय इटावा
Etawah.

जिसे

बाबूराम शर्मा

इन्द्रावती इटावा निवासी ने

सत्यव्रत शर्मा द्विवेदी के प्रबन्ध से तदीय
वेदप्रकाश यन्त्रालय-इटावा में
छपाकर प्रकाशित किया ।

चतुर्थ वार	संवत १९६१	मूल्य)॥
२०००	आषाढ मास	१॥) सैकड़ा

पता–पं० बाबूराम शर्म्मा आर्यपुस्तकालय-इटावा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

शिवलिङ्ग पूजा विधान ॥

कालचक्र ने ऐसा पलटा खाया है और अविद्या ने वह दिन दिखाया है कि लोगों को शत्रु और मित्र का भी ज्ञान न रहा उस से धर्म की आड़ में जो कुछ स्वार्थी जनों ने कहा वह सभी को ईश्वरवाक्य मान बैठे चाहे वह उन को संसार में मुख दिखाने योग्य भी न रक्खें। पवित्र वेद जैसे संसार में सच्चे व सब से प्राचीन धर्म को भूल कर शत्रुओं के बनाये हुए कल्पित और गपड़गंड से भरे हुए गप्प १८ पुराणों को अपना धर्म मान लिया इतना ही नहीं किन्तु उन की प्रतिष्ठा व मान उस से भी अधिक कर दिया। इस से बढ़ कर और अधिक खेद का क्या हाल होगा॥

"शिव" जो ईश्वर का पवित्र नाम है, उस के लिये व्यभिचारियों ने बे र झूठे किस्से कहानी जोड़ दिये हैं कि जिनका वर्णन करते लज्जा आती है, लिखते हुए लेखनी थर्राती है परन्तु आज कल थोड़े से मुफ्तखोर अपनी रोटी जाती देख इस प्रकाश के समय में भी इस अखण्ड खण्ड को स्थिर रखना चाहते हैं केवल यही नहीं किन्तु वेदानुयायियों को कलङ्की व अधर्मी बताते हैं॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतः सर्व साधारण की जानकारी के लिये हम शिव-पुराण के श्लोक अनुवाद सहित पाठकों को भेंट करते हैं इस लिये कि सत्य और असत्य को परख, और ऐसे गपोड़ों को छोड़ें। शिवपुराण ज्ञान संहिता अध्याय ॥ ४२ ॥

पुरा दारुवने जातं यद्वृत्तन्तु द्विजन्मनाम् ।
तदेव श्रूयतां सम्यक् कथयामि यथाश्रुतम् ॥ ५ ॥
दारु नाम वनं श्रेष्ठं तत्रासन्नृषिसत्तमाः ।
शिवभक्ताः सदा नित्यं शिवध्यानपरायणाः ॥ ६ ॥
त्रिकालं शिवपूजाञ्च कुर्वन्ति स्म निरन्तरम् ।
स्तोत्रैर्नानाविधैर्देवं सन्त्रैर्वा ऋषिसत्तमाः ॥ ७ ॥
एवं सेवां प्रकुर्वन्तो ध्यानमार्गपरायणाः ।
ते कदाचिद्वने याताः समिदाहरणाय च ॥ ८ ॥
एतस्मिन्नन्तरे साक्षाच्छङ्करो नीललोहितः ।
विरूपञ्च समास्थाय परीक्षार्थं समागतः ॥ ९ ॥
दिगम्बरोऽतितेजस्वी भूतिभूषणभूषितः ।
चेष्टाञ्चैव कटाक्षञ्च हस्ते लिङ्गञ्च धारयन् ॥ १० ॥
मनांसि मोहयन् स्त्रीणामाजगाम हरः स्वयम् ।
तं दृष्ट्वा ऋषिपत्न्यस्ताः परमत्रासमुपागताः ॥११॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ—प्राचीन काल में दारु वन में द्विजों का जो वृतान्त हुआ उसे हमने जैसा सुना है वर्णन करते हैं ॥५॥ एक दारु नाम सुन्दर बन था तहां ऋषियों का वास था वे शिव के बड़े भक्त थे सदा उसी के ध्यान में रहते ॥६॥ नाना भांति के स्तोत्रों व मन्त्रों से त्रिकाल शिवजी का पूजन किया करते और ध्यान में लगे रहते थे ॥७॥ एक दिन ऋषिजन बन में लकड़ियां लेने को गये ॥ ८ ॥ तब शिवजी परीक्षा के अर्थ नीलवर्ण निलित रक्त के सदृश शरीर किये' बुरा रूप बनाये ॥९॥ नङ्गे तेज धारण किये हुए + लिङ्ग हाथ में लिये ॥१०॥ स्त्रियों के हृदय को लुभाते हुए उस वन में आये जहां ऋषि रहते थे. उन को देख ऋषि पत्नियां भयभीत हुईं ॥ ११ ॥

नोट— प्रिय पाठक गण! देखा कि जिस वर्णन का नाम इन्हों ने ज्ञानसंहिता रक्खा है वह महा अज्ञान संहिता है. क्या इस से भी अधिक कोई बुराई की बात हो सकती है कि परमात्मा जो महान् पवित्र है. और काम क्रोध आदि गुणों से रहित है. वह ऐसा असभ्य स्वांग भर

÷ क्या इससे बढ़ के निर्लज्जता का कोई काम हो सकता है ऐसा काम तो अघोरी किया करते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने उन भक्तों की स्त्रियों के संग (जो उन्हें मानते थे मानते ही नहीं किन्तु उसे पूजतेभी थे) ऐसी अनुचित कार्य वाही करे. जो एक वन्यपुरुष भी नहीं कर सकता । अतः हमारी सम्मति में यह सारा कलङ्क वाममार्गियों का है. जिन्हों ने जिन पातकों का उत्तरदाता बनाने के अर्थ शिवजी के माथे यह दोष लगाया । औरवैसा ही उनका स्वरूप वर्णन किया । हमकदापि विश्वास नहीं करसकते कि व्यास, जिन कोबुद्धि वेदान्तादि पुस्तकोंसे झलकती है ऐसा निर्लज्ज पुस्तक वनायें । जैसे इस समय होलीके भड़वे कबीर का नाम धर बहुत सी व्यर्थ बातेंबना लेते वैसे ही वेद धर्म के शत्रुओंनेमहर्षिव्यासकानाम रखशिव पुराणादि रच लिये हैं । ऐसा कौन सनातनी होगाजिसे अपनेपरमपिताशिवपरयहकलङ्कदेखलज्जा न अवेगी ॥

विह्वला विस्मिताश्चैवसमाजग्मुस्तथा पुनः ।
धाग्निलिङ्गस्तदा चान्याः करं धृत्वा तथापराः ॥१२॥
परस्परन्तु संहर्षाद्गतश्चैव द्विजन्मनाम् ।
एतस्मिन्नेव समये ऋषिवर्य्याः समागमन् ॥ १३ ॥
विरुद्धं वृत्तकं दृष्ट्वादुःखिताः क्रोधमूर्च्छिताः ।
तदादुःखमनु प्राप्ता कोऽयंकोऽयं तथाऽब्रुवन् १४

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदा च नोक्तवान् किञ्चित् तदा ते परमर्षयः ।
उचुस्तं पुरुष ते वै विरुद्धं क्रियते त्वया ॥ १५
त्वदीयञ्चैव लिङ्गञ्च पतितां पृथिवी तले ।
इत्युक्ते तु तदा तैस्तु लिङ्गञ्च पतितं क्षणात् ॥ १६

अर्थ–वे स्त्रियां घबड़ाईं व आश्चर्यित हुईं परन्तु फिर आये पुरुष को देख हर्ष से वह ऋषियों की स्त्रियां हाथमें हाथ मिला आपुस में * आलिङ्गन करने लगीं ॥ १२ ॥

इतने में ऋषि लोग आगये ॥ १३ ॥ और महादेवजीके अनुचित व्यवहार को देख दुःखी हुए, क्रोध से विक्षिप्त हो कहने लगे „ यह कौन है ” ॥१४॥ जब शिवजी कुछ न बोले, तब ऋषियों ने शाप दिया कि तुमने बुरा कर्म किया॥१५॥ तुम्हारा लिङ्ग कटके गिर पड़े इतना कहते ही लिङ्ग तुरन्त पृथ्वी पर गिर पड़ा ॥

नोट-हमें इस पर नोट लगाते लज्जा आती है न्याय-प्रिय पाठकस्वयसमझ लें । पौराणिक भाइयो ! क्या आप ऐसे गपोड़ों को वेदों का ज्ञान बताते हैं आप की व आप के चेलों की बुद्धि प्रशंसनीय है ॥

---

* बिचारे ऋषियों की स्त्रियों पर भीकलङ्क लगादिया क्या ऋषि पत्नियां ऐसी ही होती हैं ? ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तल्लिङ्गमग्निवत् सर्वं ददाह यत् पुरः स्थितम् ।
यत्र यत्र च तद्याति तत्र तत्र दहेत पुनः ॥ १७ ॥
पाताले च गतं तच्च स्वर्गे चापि तथैव च ।
भूमौ सर्वत्र तद्भ्रान्तं कुत्रापि तत् स्थितं न हि ॥ १८ ॥
लोकाश्च व्याकुला जाता ऋषयस्तेऽपि दुःखिताः ।
न शर्म्म लेभिरेक्वापि देवाश्च ऋषयस्तथा ॥ १९ ॥
ते सर्वे च तदा देवा ऋषयो ये च दुःखिताः ।
न ज्ञातश्च शिवो यैस्तु ब्रह्माणं शरणं ययुः ॥ २० ॥
तत्र गत्वा तु तत् सर्वं कथितं ब्रह्मणे तदा ।
ब्रह्मा तद्वचनं श्रुत्वा प्रोवाच ऋषिसत्तमान् ॥२१॥

ब्रह्मोवाच

ज्ञातारश्च भवन्तो वै कुर्वन्ति गर्हितं पुनः ।
अज्ञातारो यदा कुर्युः किं पुनः कथ्यते तदा ॥२२॥
विरुध्यैव शिवं देवाः कुशलं कः समीहते ।
गृहे समागतं दूरादतिथिं यः पराङ्मुखेत् ॥ २३ ॥
तस्यैव सुकृतं नीत्वा स्वीयन्तु दुष्कृतं पुनः ।
संस्थाप्य चातिथिर्याति किं पुनः शिव एव च २४
यावल्लिङ्गं स्थिरं नैव जगतां त्रितये शुभम् ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जायते न तदा क्वापि सत्यमेतद्ब्रवीम्यहम् ॥ २५ ॥
भवद्भिश्च यथा कार्य्यं यथा स्वास्थ्यं भवेदिह ।
इत्युक्तास्ते प्रणम्योचुः किं कार्यं तत् समादिश॥२६॥
इयुक्तश्च तदा ब्रह्मा तान् प्रोवाच तदाऽव्ययम् ।
आराध्य गिरिजां देवीं प्रार्थयध्वं शुभां तदा ॥२७॥
योनिरूपं भवेच्चेद्वैतदा तत् स्थिरतां भजेत् ।
तदा प्रसन्नां तां दृष्ट्वा तदेवं कुरुते पुनः ॥२८॥

अर्थ—उस लिङ्ग ने उन सब पदार्थों को जो उसके सन्मुख थे * अग्नि की नाईं भस्म कर दिया । जहां२ वह लिङ्ग गया वहां २ वैसे ही जलाता चला गया ।१७। पाताल, स्वर्ग, पृथिवी आदि सब स्थान जलाता'+ उछलता, कूदता किसी स्थान पर स्थित न हुआ ।१८। तब सब जन विकल होगये और वे ऋषिभी दुःखी हुए, कहींपर ऋषियों व देवताओं को सुख न मिला ।१९। तब वे देवता व ऋषि जो दुखी हो रहे थे' और जिन्हों ने शिवजी को नहीं + पहचाना

* शिवलिङ्ग क्या कोई बला या दियासलाई का डब्बा था
† इसने तो ... ... को भी मात किया ।
+ पौराणिक भाइयो ! तुम तो देवताओं को अन्तर्य्यामी बताते हो और तुम्हारा पुराण ना समझ ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था, सब ब्रह्मा के पास गये । २०। और सब हाल ब्रह्मा से कहा । ब्रह्मा ने उन के वचन सुन के कहा कि । २१ । तुम ने जान बूझ के ** दुष्कर्म किया, अब जो अज्ञान से कुकार्य्य करै, उस को क्या कहा जावे । २२ । हे देवताओ ! शिवजी को क्रोधित करके कौन सुखी रह सकता है । २३ । जो दूर से आये हुए को अतिथि सत्कार नहीं करता, उसके जितने सुकर्म हैं, उन को तो वह लेजाता है और अपने दुष्कर्मों को छोड़ जाता है तिसपर शिवजी से अतिथि का अपमान करना थोड़ी बात नहीं ।२४ देखो जबलों यह लिङ्ग स्थिर न होगा तबलों जगत में कहीं पर सुख न होगा । यह मैं सत्य कहता हूं ।२५। अब तुम को [illegible]मा करना चाहिये । जिस से यह लिङ्ग स्थिर हो । यह [ब्र]ह्माने उन से कहा तब वे ऋषि ब्रह्मा को नमः कर बोले [कि] अब हमें क्या करना चाहिये, आप बताइये ।२६। तब [ब्र]ह्मा बोले कि तुम पार्वती का भजन करके उसकी स्तुति [क]रो ॥२७॥ जब पार्वती योनि के सदृश होजाय तब तुम इस [लि]ङ्ग को उस में डाल देना ॥ २८ ॥

**वाह २ अपनी स्त्रियों का धर्म बचाना दुष्कर्म हुआ [क्य]ा वे उनको भ्रष्ट होने देते ?।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट–उक्त श्लोकों में जैसी कुछ अश्लील व असभ्यता विरुद्ध बातें लिखी हुई हैं, वे सब पर प्रकाशित हैं, हम अधिक नोट चढ़ाना नहीं चाहते, और धर्मसभाके सहायकों का ध्यान आकर्षित करते हैं कि लज्जित होवो ॥

एवं कृते च स्वास्थ्यं वै भविष्यति न संशयः ।
इत्युक्तास्ते तदा देवाः प्रणिपत्य पितामहम् ॥३७॥
शिवस्य शरणं गत्वा प्रार्थितः शङ्करस्तदा ।
पूजितः परया भक्त्या प्रसन्नः शङ्करस्तदा ॥ ३८ ॥
पार्वतीञ्च विना नान्या लिङ्गं धारयितुं क्षमा ।
तया धृतञ्च शान्तिञ्च गमिष्यति न संशयः ॥३९॥
गृहीत्वा चैव ब्रह्माणं गिरिजा प्रार्थिता तदा ।
प्रसन्नां गिरिजां कृत्वा वृषभध्वजमेव च ॥ ४० ॥
पूर्वोक्तञ्च विधिं कृत्वा स्थापितं लिङ्गमुत्तमम् ।
+ पहिले तो लिखा जानते बूझते, और अब कहा अज्ञान से, । झूंठे को स्मरण शक्ति नहीं होती ।
मन्त्रोक्तेन विधानेन देवैश्च ऋषिभिस्तदा ॥४१॥

अर्थ–प्रथम उसे प्रसन्न करो ऐसा करने से अवश्य यह लिङ्ग स्थिर हो जायगा, और जगत् में स्वस्थता होजायगी जब ब्रह्मा ने ऐसा कहा, तो वे ऋषि जन उस को प्रणा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करके ॥३७॥ शिव जी के पास गये। बड़ी भक्ति से प्रार्थना की और पूजन किया जब शिव जी प्रसन्न हुए ॥३८॥ तो बोले, कि पार्वती के अतिरिक्त इस लिङ्ग के धारने की शक्ति अन्य किसी में नहीं है जब वह इसे धारण करे तो यह शान्त हो जायगा, इसमें सन्देह नहीं ॥३९॥ तब उन ऋषियों ने ब्रह्मा को सङ्ग ले पार्वतीके निकट जाके प्रार्थना की और शिव को भी प्रसन्न करके ॥४०॥ विधि पूर्वक देवता व ऋषियों ने मन्त्र पढ़के उस उत्तम लिङ्ग को पार्वती में स्थापित किया ॥४१॥ तबसे ही लिङ्गपूजा चली ॥

नोट—यह श्लोक ऐसे अश्लील हैं कि इसमें नोट लगाते लज्जा आती है, पर इतना अवश्य लिखे देते हैं कि संसार में ऐसा कोई मत नहीं है कि जिसने ऐसी व्यर्थ बातों को उचित रक्खा हो। हबशी जो सब से मूर्ख गिने जाते हैं, वह भी कदापि निज माता पिता के लिये ऐसी कहावत नहीं मानते, जैसी कि शिवपुराण वालाने अपनी माता पार्वती व पिता शिवके अर्थ गढ़ी हैं। प्यारे हिन्दुओं! तनक न्याय दृष्टि से देखो, कि ऐसी सभ्यताविरुद्ध अश्लील बातोंको मानके क्या आप अन्यमतावलम्बियों को अपना मुख दिखा सकते हैं? कदापि नहीं प्यारो! अब तो जाग

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और इन निरर्थक बातों को त्यागो। इसी कारणसहस्रों हिन्दू ईसाई व मुसलमान होगये व हो जायगे जो आप कामी व भोजनभट्टों की बातें मानेंगे। प्रियवरो ! आप केवल वैदिक धर्म को मानों और इन को त्यागो। लोग तुम्हे बहुतबहकायगे, फुसलायगे, तुम्हारी हंसी उड़ायंगे पर याद रक्खो कि सत्य सत्य होहै और झूठझूठ ही है इसका करना केवल रोटीके अर्थहै न किधर्म के निमित्त हम ऐसे २ धूर्तपन की और भी धूलि उड़ावेंगे॥

शिवके ठीकर अर्थ लीजिये शिवु कल्याणे इस धातु से शिव शब्द सिद्ध होता है।

"बहुलमेतन्निदर्शनम्" इससे शिवु धातुमाना जाता है। जो कल्याणस्वरूप और कल्याण करनेवाला है उसी को शिव कहते हैं। और यह गुण एक परमात्मा ही के हैं अतः शिव नाम उस निर्विकारज्योतिःस्वरूप का है।

फल—परमानन्द व मुक्ति चाहने वाले ऐसे कामी और ऐसे कुरूप की उपासना व ध्यान करना तो एक ओर उसे देखना भी नहीं चाहते। यह तो होली के होलियारोंके योग्य है। धन्य हैं वे जो सच्चिदानन्दस्वरूप परमात्मा के ध्यान में निमग्न रह सदा कल्याण के भागी होते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिङ्ग पुराण से पूर्व बुद्धदेव हो चुके थे जिस को प्रायः लोग बौद्धावतार कहते हैं (शिव पुराण पूर्वार्धखंड अध्याय ५ श्लोक ३ से ९ तक)

परन्तु इतिहास वेत्ताओं ने जयस्तम्भ अथवा स्तूपों और बौद्ध मन्दिरों और आर्यावर्त लङ्का ब्रह्मा चीन और तिब्बत की पुस्तकों और अजायब घर की मूर्तियों से सिद्ध किया है कि बुद्ध विक्रमीय संवत् से ६१४ वर्ष पूर्व हुए थे और ८० वर्ष की आयु में उन का देहान्त हो गया था जिस को १९५१ विक्रम तक २५६५ वर्ष होतेहैं और व्यास जी को ४९९५ वर्ष हुए हैं अर्थात् बुद्ध २४२९ व्यास जी से पीछे हुए हैं अतएव व्यास जी पुराणों के कर्ता नहीं हो सकते हैं ॥

२–रामानुज विक्रम की १२ वीं शताब्दी में हुए थे इस में सब इतिहास वेत्ताओं की सम्मति है, और रामानुज ने वैष्णवमत चला कर शङ्ख, चक्र, पद्म से लोगोंको चक्राङ्कित बनाया, परन्तु इस मत का खण्डन लिङ्गपुराण में है ।

शङ्खचक्रे तापयित्वा यस्य देहः प्रदह्यते ।
सजीवन् कुणपस्त्याज्यः सर्वधर्मबहिष्कृतः ।१।

अर्थ–जिस के शरीर पर तपाकर शङ्ख, चक्र की छापें

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगाई गई हैं वह जीते जी मुर्दा और सर्व धर्मों से पतित के समान त्यागने योग्य हैं।

इस से स्पष्ट है कि रामानुज के मत के पीछे उसका खण्डन लिङ्गपुराण में हुआ "प्राप्तौ सत्यान्निषेध,, अर्थात् जो वस्तु है उसका ही निषेध होता है और लिङ्गपुराण का नाम १८ पुराणों में है, रामानुज विक्रम की १२ वीं शताब्दी में हुए। अर्थात् आज तक उन को हुए ७५१ वर्ष होते हैं और व्यास जी का जैसा ऊपर कहा है ४१९४ वर्ष हुए हैं अतएव व्यास से रामानुज ४२४६ वर्ष पीछे भये इस लिये व्यास लिङ्गपुराण के कर्त्ता नहीं हो सकते हैं। (औरलिङ्गपुराण शिवपुराण से भिन्न नहीं) इति पुराणशिक्षा (पुराण किस ने बनाये) अवश्य पढ़ो)।

उत्तम २ उपदेश भरे भजनपुस्तक ॥

मानसविनोद–पं०बदरीदत्त शर्मा कृत गाने योग्य भजन ≡) सत्यसंगीत)॥ सत्योपदेश)१२॥ (धेला) आर्य-संगीत पुष्पावली ॥) उर्दू ॥) भजन पुष्पावली।) उर्दू।) सभा प्रसन्न (नवलसिंह कृत) ≡) उर्दू ≡) प्रेमोदय भजनावली मास्टर रामकिशोर जी कृत ≡) आरती)।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥) सैकड़ा संगीत स्वरोदय -) संगीत सुधासागर)॥भजनेन्दु -) गङ्गा की नींद)। सत्योपदेश भजनावली (पं० रामप्रकाश कृत) देखने योग्य -)॥ दयानन्द प्रकाश (उत्तम २ कवित्त)॥ स्त्रीभजन माला -) संगीत सुधार्णव =) अबला भजन चालीसी -) भजन भास्कर डं० प्रयाग दत्त शर्मा कृत)॥ ठाकुर बलदेव सिंह सवार कृत भजन-भजनामृत सरोवर =)॥ संगीत रत्नाकर =) शान्ति सरोवर =) सुख चैन सरोवर =) वनिता विनोद =)चेतावनी चन्द्रोदय -) सुमति सुधाकर -) बारहमासा भारतविलाप)॥ फागुनगीता-परमपुनीता निर्मल छन्द कबीर)॥नूतनभजनसंग्रह नाटकीय थियेटरी ध्वनि में भजन=) करताली भजन (जो भजनमण्डली वाले गाते हैं भजन पचासा-) भजन चालीसा -) भजन इक्कीसी)॥ ज्ञानभजनावली (घीसासिंह कृत) १ भाग ≈) २ भाग =) अबलाभजनबत्तीसी १ भाग -) दूसरा भाग)॥। तीसरा भाग -) चतुर्थ -) हक़ीक़तराय के भजन)॥ वेश्यादोष दर्पण)॥ स्त्रीशिक्षा के भजन)॥ भजन प्रचार -) भजन बत्तीसी (पं० बासुदेव कृत) १ भाग -) दूसरा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग -)॥ प्रेम सरोवर चारों भाग =)। मद्य मांस दर्पण (बगाकट कृत ख्याल)॥ भजन खञ्जरी -) भजन बिनाम -) बारहखड़ी पं० मुरारीलाल शर्मा कृत डंडों पर गाने योग्य)॥ वासुदेव ग़ज़ल संग्रह)॥ वैदिकधर्म)।

पं० गौरीदत्त शर्मा कृत पुस्तक ॥

सच्चे मोतियों की माला देवनागरी पढ़ने की दूसरी पुस्तक =) अशर्फियों की थैली देवनागरी ३ भाग≡)नागरी का दफ़्तर [इस में अदालती कार्यवाही है] ।-) बालरक्षा ।) सराफ़ी नाटक -)॥ नागरी उर्दू का स्वांग सत्योदय नाटक =) देवनागरी के भजन)॥ उर्दू बुढ़िया =दोनों बंड़िया)॥ नागरी के उपदेश -)॥ नागरी के नौ रत्न =) नागरी का ताश [खेलते २ पढ़ना सीखो]=) पूना का रंगीन नागरी ताश ।)

पं० गणेशप्रसाद शर्मा रचित पुस्तक ॥

जीव दया है)॥ धूम्रपान दोष -) मद्य दोष)॥ नमूना भागवत)॥ होम यज्ञ =)॥ मत निर्णय)॥ इत्यादि बड़ा सूचीपत्र मंगाकर देखो—मिलने का पता—

बाबूरामशर्मा आर्यपुस्तकालय इटावा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ ओ३म् ॥

2.1/62

मूर्त्तिपूजाविचार

96228
15.5.2

जिसको

बाबूराम शर्मा इँदरावखी इटावा
स्थने प्रकाशित किया।

Printed by B. D. S. at the Brahm
Press—Etawah.

षष्ठवार २००० | संवत १९६८ | मूल्य)। १) सैकड़ा

१००० लेने पर ११)रु०

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ ओ३म् ॥

मूर्त्तिपूजाविचार ॥

अपाणिपादोजवनोग्रहीतापश्यत्यचक्षुः
सशृणोत्यकर्णःसवेत्तिवेद्यंनचतस्यास्तिवेत्ता
तमाहुरग्र्यंपुरुषंमहान्तम् ॥

विन पद चले सुने विन काना, कर विन कर्म करै विधिनाना।
आननरहित सकल रसभोगी, विन वाणी वक्ता बड़ योगी।
तन विन परस नयन विन देखा, ग्रहै घ्राण विन वास अशेषा।
असस्बभांतिअलौकिककरणी, महिमा जायजासुनहिंवरणी।

प्रियमित्रवर्गो ! यदि आप पाषाणादिमूर्त्तिपूजा करनेके बड़े ही प्रेमी हैं तो सबसे पहिले निम्नस्थ प्रश्नोंका उत्तराविचार कर कार्य्य कीजिये जिससे यथार्थ लाभ हो॥

(१)—ईश्वरके लक्षण, गुण, कर्म और स्वभाव क्या हैं?

(२)—यदि परमात्मा साकार है तो किसके आधार ठहरा हुआ है, साकारको आधार अवश्य चाहिये क्योंकि साकार पदार्थ विना आधारके ठहर नहीं सकता॥

(३)—उस साकार ईश्वरका रूप (रंग ढंग) कैसा है क्योंकि साकारवस्तु विना किसी रूप (रंग ढंगके) नहीं होता॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४)-साकार वस्तु व्यापक हो सकता है या नहीं ॥

(५)-साकार वस्तुका माप (नाप) होता है या नहीं यदि होता है तो परमात्माकी लम्बाई--चौड़ाई गोलाई ऊंचाई आदि कितनी है ? कृपया ठीक २ बतलाइये।

(६)--साकार वस्तु सत् होता है या असत् ॥

(७)--यदि ईश्वर मूर्त्तिमान् है तो उसकी मूर्त्ति जल-चर, थलचर, नभचर, मकर, मच्छ, मनुष्य, पशु, बराह, परन्द (पक्षी) पहाड़ या वृक्षके समान है या और किसी प्रकारकी है उसकी मूर्त्ति एक ही दशामें रहती है या कुछ परिवर्तन (अदला बदला) भी करती है ॥

(८)--वेदोंमें कोई ऐसा मन्त्र बतलाइये--कि जिसमें ईश्वरकी पाषाणादि मूर्त्ति बनानेकी आज्ञा हो ॥

(९)--जिस प्रकार वर्त्तमान समयमें पाषाण मूर्त्तिको भोगविलास कराते हैं वह कौनसे वेद मन्त्रोंकी आज्ञा है ?

(१०)-धर्मसभा जिन २ पुस्तकोंको प्रामाणिक मानती है उनमें पाषाणादि मूर्त्ति पूजा का खण्डन है या नहीं ॥

(११)-क्या परमात्माका कोई ऐसा नाम वेदोंमें मिला-है कि जिससे ईश्वरका साकार होना प्रकट हो ?

(१२) यदि वह साकार है तो साकारकी भांति प्रत्यक्ष रूपमें क्यों नहीं दिखलाई देता है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१३)-परमात्मा साकार और निराकार दोनों प्रकार का हो सक्ता है या नहीं या इन दोनों बातोंमें विरुद्धता है

(१४)-यदि मूर्त्तिपूजा सत्य है तो उसका विधान चार वर्ण और चार आश्रमोंमेंसे किसके लिये है ?

(१५)-यदि परमात्माकी कल्पित मूर्त्ति हो सकती है तो केवल उसकी पूजासे संसारकी उन्नति हो सकती है या नहीं और आज तक पाषाणादि मूर्त्तिपूजासे इस देशको क्या २ लाभ हुए मूर्त्तियोंने क्या २ उपकार किये ॥

(१६) वर्त्तमानमें जो २ मूर्त्तियां प्रचलित हो रही हैं उन २ का ईश्वरके साथ क्या २ सम्बन्ध (नाता) है ॥

(१७)-पूजा, पूजारी, प्रतिमा, शिवलिङ्ग, शालिग्राम जगन्नाथ, काशीनाथ, टीकेश्वर, नीलकण्ठ, बैकुण्ठेश्वर, नक्षकेश्वर, नीलेश्वर, लोधेश्वर, बदरीनाथ, केदारनाथ, और वटेश्वर इत्यादि २ शब्दोंका क्या अर्थ है ?

(१८)-वर्त्तमान समयमें जिन २ मूर्त्तियोंकी पूजा होती है उन २ में कुछ शक्ति भी है या कोरीपोल ही पोल है ॥

(१९)-पाषाणादि मूर्त्तियोंमें जो वेद मन्त्रोंसे पण्डित लोग प्राणप्रतिष्ठा कराते हैं तो क्या सचमुच उनमेंप्राण आजाते हैं? यदि आजाते हैं तो उन मूर्त्तियोंकी नाड़ी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परीक्षा वैद्योंसे अवश्य ही करानी चाहिये यदि प्राण नहीं आते तो वह क्रिया सत् है या असत् या सरासर आंखोंमें धूल झोंकना या खेल खेलना है और क्या उन्हीं मन्त्रोंसे मृतक शरीरमें प्राण आ सकते हैं?

(२०)-गृहस्थिके लिये जो शास्त्रोंमें नित्यकर्म (पञ्चयज्ञ) का विधान किया है उनमें जड़ मूर्त्तियोंका भी पूजन लिखा है या नहीं? देवता किसको कहते हैं औरवेद-में देवपूजन का क्या विधान है स्पष्ट २ बतलाइये?

(२१)-यदि कोई कहे कि मूर्त्ति तो यथार्थमें पाषाण ही है परन्तु वही पाषाण भावनासे परमेश्वर बन जाता है तो फिर क्या कोई उसी भावनासे बालू [रेत] को शक्कर और गोबरको हलुआ बना सुखी हो सकता है॥

(२२) यह कहना कि हमारी बनाई हुई मूर्त्तियां और मन्दिर ईश्वरका स्मरण कराती हैं तो यह भी ठीक नहीं क्योंकि वे तो अपने बनाने वाले सुनार, पत्थरकट (संगतराश) राज आदि कारीगरोंकी कारीगरी सूचक हैं और सूर्य, चन्द्रमा, वृक्ष आदि ईश्वरीय रचना ईश्वरको स्मरण कराती हैं। मन्दिर देख ईश्वर मानना एक देशी ईश्वर जानना है सर्वान्तर्यामी ईश्वरको

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हृदय रूपी मन्दिरमें पूजिये-हृदयसे बाहर मूर्त्ति को ईश्वर मानना उसे सर्वान्तर्यामी न मानना ही है-

(२३) जिस रीतिसे पाषाणादि मूर्त्तियोंके द्वारा ईश्वरका पूजन किया जाता है वह वास्तवमें ईश्वरकी उपासना कही जा सकती है या नहीं ? जो फूल बिल्वपत्र धूपदीप जल चांवल इत्यादि चढ़ाये जाते हैं वे सब वस्तुयें ईश्वरको पहिले प्राप्त थीं या नहीं और भोग लगानेसे प्रथम क्या ईश्वर भूंखा प्यासा था व नहीं ॥

(२४) परमात्माको जो देहधारी माना है और उस पर जो चोरी जारी इत्यादिक अनेक कलङ्क लगाये हैं तो उन कर्मोंका फल क्या तुमको प्राप्त होगा या नहीं ?

(२५) जो तुम्हारा परमात्मा देहधारी है तो उसका शरीर ईश्वर है या दोनों ? ॥

(२६) यदि तुम निराकारकी मूर्त्ति बना सकते हो तो आकाश, शब्द, सुख दुःख, आत्मा, मन, वायु, भूंख, प्यास, इत्यादिकी मूर्त्तियां बनाकर दिखलाइये ॥

(२७) जब कि मूर्त्तियोंके उपासक देवी जीको मांस, मदिरा, कृष्णमहाराजको माखन मिश्री । महादेवको भांग धतूरा, जगन्नाथको दालभात और गणेश जी को-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पान सुपारी भोग लगाते हैं तो क्या वाराह अवतार-की मूर्त्तिको किसीभी भोगकी आवश्यकता है या नहीं ?

(२८) परमेश्वर निराकार है वह ध्यानमें नहीं आ सकता है इस लिये अवश्य मूर्त्ति होनी चाहिये--भला जो कुछ भी नहीं करें तो मूर्त्तिके सम्मुख जा हाथ जोड़ परमेश्वरका स्मरण करते और नाम लेते हैं इससे क्या हानि है?

यह सन्देह ध्यानके वास्तविक तत्त्वको न जानने वालोंको ही हो सकता है वे स्मरणको ही ध्यान समझ रहे हैं परन्तु वास्तवमें स्मरण और ध्यानमें बड़ा अन्तर है महर्षि पतञ्जलि स्वयं लिखते हैं कि—

अनुभूत विषयासं प्रमोवः स्मृतिः ।

अर्थात् जिस वस्तुका किसी नियतसे ज्ञान प्राप्त किया जाता है उसका जो फिर ख्याल व चिन्तन किया जाता है उसे स्मृति व स्मरण कहते हैं इस प्रमाणानुसार मूर्त्तिपूजक जो किसी देवताकी प्रतिमा-को आगे धरके ध्यान धरते हैं वह वास्तवमें स्मरण है ध्यान नहीं है। क्योंकि विना प्रत्याहार और धारणाके ध्यानका होना सर्वथा असम्भव है ध्यान निराकारका ही हो सकता है साकारका नहीं··साकार

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्तु तो सामने प्रत्यक्ष ही दिखलाई देता है ध्यानकी आवश्यकता नहीं क्योंकि—

"ध्यानंनिर्विषयंमनः"

अर्थात्‌रूपादि विषयोंको ग्रहण करने वाली इन्द्रियोंको जीतकर जब मन निर्विषय होता है तभी वह ध्यानमें लय हो सकता है अन्यथा ध्यान कदापि नहीं हो सकता। जब परमेश्वर निराकार सर्वव्यापक है तब उसकी मूर्त्ति ही नहीं बन सकती और जो मूर्त्तिके दर्शनमात्रसे परमेश्वरका स्मरण होवे तो परमेश्वरके बनाये पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, और वनस्पति आदि अनेक पदार्थ जिनमें ईश्वरने अद्भुत रचना की है, क्या ऐसी रचना युक्त पृथिवी पहाड़ आदि परमेश्वर रचित महा मूर्त्तियां (कि जिन पहाड़ आदिसे मनुष्यकृत मूर्त्तियां बनती हैं) देखकर परमेश्वरका स्मरण नहीं हो सकता जो अपनी बनाई मूर्त्ति देख ईश्वरका स्मरण होता है यह भी ठीक नहीं फिरतो जहां २ मूर्त्ति व मन्दिर न पाओगे वहां २ ईश्वरको अनुपस्थित (अलग) जान दुष्कर्म करनेसे न डरोगे। अतः सर्वान्तर्यामी, सर्वसाक्षी परमात्माको माननेमें ही कल्याण और भलाई है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२९—जब परमात्मा सर्वव्यापक है तो मूर्त्तिमें भी है फिर मूर्त्ति पूजनेसे क्या हानि है ?

हां वह सर्व व्यापक है इसीलिये हृदयमें ही भजिये अपनेसे अलग (दूरस्थ) मूर्त्ति आदिमें ईश्वर मानना सर्वव्यापकता छुड़ाना तथा ईश्वरविमुख बनना है ॥

३०—अन्धन्तमःप्रविशन्तियेऽसम्भूतिमुपासते,
ततोभूयइवतेतमोयउसम्भूत्याꣳरताः यजु०

जो असम्भूति अर्थात् अनुत्पन्न अनादि प्रकृति कारणकी ब्रह्मके स्थानमें उपासना करते हैं। वे अन्धकार अर्थात् अज्ञान और दुःखसागरमें डूबते हैं और सम्भूति जो कारणसे उत्पन्न हुए कार्यरूप पृथिवी आदि भूत पाषाण और वृक्षादि अवयव और मनुष्यादिके शरीरकी उपासना ब्रह्मके स्थानमें करते हैं वे उस अन्धकारसे भी अधिक अन्धकार अर्थात् महामूर्ख चिरकाल घोर दुःखरूप नरकमें गिरके महाक्लेश भोगते हैं।

३१—मृच्छिलाधातुदार्वादि मूर्त्तावीश्वरबुद्धयः।
क्लिश्यन्तितपसामूढाः परांशान्तिंनयान्तिते ॥

मृत्तिका, शिला, धातु, काष्ठादिसे रचित मूर्त्तियोंमें-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो पुरुष ईश्वर बुद्धि करते हैं वे मूर्ख व्यर्थ क्लेशको पाते हैं इस चेष्टा यानी इस कर्मसे शान्तिको प्राप्त कभी नहीं होवेंगे ॥ महाभारत० ॥

३२–यस्यात्मबुद्धिःकुणपे त्रिधातुके स्वधीःकलत्रादिषुभौमइज्यधीः यस्तीर्थबुद्धिः सलिलेषुकर्हिचिज्जनेष्वभिज्ञेषु सएवगोखरः॥

भागवत स्कन्ध १० ॥ तथा (विश्रामसागर)

जे निज देहमांझ अभिमानी–आत्मबुद्धि लखें अज्ञानी।
हरिकलत्र अपना कर मानें–प्रतिमामात्र देवकर जानें॥
सलिलमात्रतीरथजिनजाना–सन्तनमें कछु भाव न आना।
ते गोखर सम जानो प्राणी–परत नरकमें वाचक ज्ञानी॥

भजन ॥

कैसे अमूरतकी मूर्त्ति बनावें। सर्व देशीको एक देशी बतावें॥ आवाहन करें तो कहांसे बुलावें। विसर्जन करें तो कहांको पठावें॥ आसन सिंहासन पै तकिये लगावें निराधारको किसके आश्रय बिठावें॥ अप्राणकी प्राण रचना करावें। जड़ वस्तुको कैसे चेतन बनावें पादार्घ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आचमन किसको करावें। सदा शुद्ध निर्मलको किसमें न्हिलावें॥ धूप और पुष्प गन्ध किसको सुघावें। निर्लेपको लेप कैसे लगावें॥ ज्योतीको दीपककी ज्योती दिखावें। सूरजको जुगनूका चांदन बतावें नैवेद्यके पीछे जो जल चढ़ावें। क्षुधाको हटा कर तृषाको बुझावें॥ पान और सुपारी इलायची मिलावें। यह क्या उनके ओठोंकी लाली बढ़ावें॥ धन धान्य जिसका है सर्वस्व सारा। देकर टका दान बदला मंगावें॥ परिदक्षिणामें जिसका नहीं अन्त पावें। फिरें गिर्द उसके केवल चक्र खावें॥ जाग्रत स्वप्न और सुषुप्तीसे न्यारा। किसको सुलावें औ किसको जगावें॥ अजन्माको जो अब जन्मा बतावें। अमीचन्द क्यों उनके धोखेमें आवें॥

उत्तमोत्तम उपदेश भरे भजन पुस्तक।

संगीतरत्नप्रकाश पांचों भाग ॥।) संगीतरत्नप्रकाश १ भाग ।) संगीतरत्नप्रकाश २ भाग =) संगीतरत्नप्रकाश ३ भाग -)॥ संगीतरत्नप्रकाश ४ भाग =)॥ संगीतरत्नप्रकाश ५ भाग ≡) सत्यसंगीत)॥ संगीतस्वरोदय -) गंगाकीनींद)। सत्योपदेशभजनावली (पं० रामप्रकाश-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृत) देखने योग्य -)॥ स्त्री भजनमाला)॥ अबला भजन -) आर्यमनरोचक -) ठाकुर बलदेवसिंह सवारकृत भजन--बनिता विनोद =) संगीत शिक्षावली (ठा० बलदेवसिंह कृत) =)॥ क्षत्रियधर्मप्रकाश उत्तमोत्तम कवित्त ठा० बलदेवसिंहकृत -) फागुनगीता परमपुनीता निर्मल छन्द कबीर)॥ भजन पचासा २ भाग =) भजनमाला)। भजनपचासा १ भाग -) भजन चालीसा -) भजन इक्कीसी)॥ ज्ञानभजनावली (घीसासिंहकृत) १ भाग =) दूसरा भाग =) तीसराभाग =) चौथा भाग =) अबलासुधार भजन बत्तीसी तीनों भाग ≡) भजनप्रकाश -)॥ संगीतसागर =) शान्तिसरोवर =) सांगीतोपदेश दोनों भाग)॥ वेश्यादोषदर्पणभजनावली =)॥ भजनबत्तीसी (पं० वासुदेव कृत)-२ भाग -)॥। प्रेमसरोवर भजन)॥। कुरीतिनिवारण -)॥ मद्यदर्पण [ब्लाकटकृत] -) और २।) सैकड़ा संगीतसुधार्णव =) भजननगरकीर्त्तन १ तथा २ भाग ≡) दादरा बत्तीसी)॥। ग़ज़लसंग्रह)॥ भजनबिलबिलाहट)। भजन गुलदस्ताचिमन दोनोंभाग)॥ स्त्रीगीतसागर)॥ गोपुकार चालीसी)॥

बड़ी सजीवनबूटी-(वीर्यवर्णन)

इसकी प्रशंसा पाठकगण ! स्वयं पढ़कर ही जान

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकेंगे—हम केवल इतना ही कहेंगे कि यदि आपको अपनी सन्तान व इष्टमित्रोंसे कुछ भी स्नेह है तो उन को यह बूटी अवश्य पान कराइये सुनाइये पढ़ाइये मूल्य केवल न्योछावर मात्र =) ही है इसे सर्वसाधारणने इतना उपयोगी समझा कि २०००० कापी हाथों हाथ विकगई अधिक प्रचारार्थ ।) से घटाकर =) करदिया

सञ्जीवनबूटी, बनी है अनूठी, सभीने लूटी, मनभाय

धर्मबलिदान-(पथिकवियोग)

इसमें धर्मदुर्दशा देख पं० लेखराम शर्माका घरबार छोड़ना एक यवन द्वारा धोखेसे लेखरामका माराजाना आदि २ वीर छन्दमें वर्णन किया गया है मूल्य =) आतिशबाजी आल्हा)। वेश्यालीला १ भाग—इसमें वेश्याओंकी प्रायः सबही लीलायें लिखी हैं इसकी भी ८००० कापी बिक गईं मूल्य)॥ और १।) सैकड़ा=

कुरीतिनिवारण ॥

(स्वामी-मङ्गलदेवजीने) इसमें मनोहर दोहा चौपाइयोंमें दुःखदायी कुरीतियोंका खण्डन किया है= यदि करीतियों और-पापोंसे अपना धन-बल धर्म कर्म

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बचाना है और देशका सुधार करना है तथा ऋषि मुनियोंका नाम निशान स्थिर रखना और अपनी सन्तानका भला चाहना है तो १०० सौ काम छोड़ इसे अवश्य पढ़िये पढ़ाइये–सुनिये सुनाइये -)॥ और ४) सैकड़ा

गाज़ीमियांकी पूजा [हिन्दुओंको क्या सूझा ?] सू०)॥

सत्यभास्कर–वेदशास्त्र पुराण स्मृति उपनिषदादिके प्रमाणों और प्रबल युक्तियों सहित दोहा चौपाई छन्दोंमें जड़ मूल उखाड़ मूर्त्तिपूजा खण्डन =)

☞ धर्मार्थ बांटने योग्य सस्ते पुस्तक ॥

☞ निम्नस्थ पुस्तक मेले प्रचारादि उत्सवों पर बांटने को बड़े ही सस्ते तैयार हैं जो सैकड़ेके भाव दिये जाते हैं। २५ पुस्तक भी सैकड़ेके ही भाव हैं; २५ से कम पूर्णदाम पर मिलेंगे यथाशक्ति पुस्तकें बांटिये ॥

☞ हज़ार पुस्तक इकट्ठे लेनेपर और भी सस्ते मिलेंगे।

बड़ी सजीवन बूटी =) सैकड़ा १०) पञ्चयज्ञविधि सन्ध्या)। सैकड़ा १) धर्मप्रचार शुद्धि विषय पं० लेखराम कृत)॥ सैकड़ा १॥) मांसभक्षण निषेध)। सैकड़ा ॥।) पुराणशिक्षा)। सैकड़ा ॥।) मृतकश्राद्ध विषयक प्रश्न)। सै-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कड़ा ।।।) आरती–ईश्वरस्तुति नित्योत्सवोंपर गानेयोग्य)। सैकड़ा ।।) पहाड़ा गणितारम्भ)। सैकड़ा ।।।) तथा उर्दू ।।।) सैकड़ा नागरीवर्णमाला)। सैकड़ा ।।।) ससुराललीला)। और ।।) सैकड़ा भजनमाला)। और ।।।) सैकड़ा आर्यसमाज के नियम संस्कृत ।।।) सैकड़ा स्त्रीभजनमाला २) रु० सैकड़ा

स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश ।

(श्री १०८ स्वामी दयानन्द सरस्वतीजीके मुख्य सिद्धान्त) यदि संसारको स्वर्गधाम बनाना है तो इन सर्व तन्त्र शान्तिप्रद सिद्धान्तोंको शीघ्र फैलाओ मूल्य)॥ सैकड़ा १॥)

पांचपैरकी गौ महादेवका नादिया ।

नादिया वाले गाय बैलके दूसरी टांग काटकर जोड़ देते हैं इस पशुहत्याके भागी भिक्षादाता ही होते हैं पूर्णवृत्तान्त)। में पढ़ो १) रु० सैकड़ा और ८) रु० हजार ।

विशेष पुस्तक बड़ा सूचीपत्र मंगाकर पढ़िये ।

सूचीपत्रादि मिलनेका पताः–

बाबूराम शर्म्मा–इटावा ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सजीवनबूटी ।

यह बूटी मूर्छितोंकी मूर्छा दूरकर श्री-लक्ष्मणयती, शूरवीर, रणधीर, बनाती है, एकमात्र इसीके सेवनसे ऋषि, मुनि, योगी, संन्यासी, महाबीर, योधा, बलधारी, जगत्गुरु, परिव्राट, सम्राट, दिग्विजयी जगत् प्रसिद्ध अमर नाम कर गये हैं ।

केवल इसीके बल बालब्रह्मचारी भीष्मपितामह महामृत्युञ्जय कर शरशय्यापर सुखासीन हो धर्मोपदेश करते रहे ।

यह बूटी सत्यार्थप्रकाशके प्रकाशमें तृतीय खण्डपर जगमगा रही है-क्या चाहिये ?

यह अमरबूटी =) निछावरमात्र करनेसे मिलेगी ॥

मिलनेका पता—बाबूराम शर्मा इटावा ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ ओ३म् ॥

टरेक्ट नम्बर २२

कलियुगी आचार्य

प्रथम भाग

जिस को

स्वामी दर्शनानंदसरस्वती जी ने

दयानन्द टरेक्ट सोसाइटी के हितार्थ

महाविद्यालय मैशीन प्रेस

हरिद्वार

छपवाया

2.9/63

—=+:*:+=—

प्रथम वार ४००० प्रति] [मूल्य)।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

महाविद्यालय

में गुरुकुल, अनाथालय, उपदेशक श्रेणी, साधू आश्रम, शिल्पविद्यालय, गौशाला आदि उपस्थित हैं॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९५२२
१५.८.२००२
गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी

ओ३म्

कलियुगी आचार्य।

संसार की गति इस प्रकार परिवर्तन हो चुकी है कि आज वैदिक धर्म की आड में प्रकृति की उपासना फैलाई जाती है यद्यपि ऋषि दयानन्द के तपोबल के सूर्य्य ने अविद्या की रात्रि को विलोप कर दिया है और आशा बँध गई थी कि इस समय वैदिक धर्म का भानू उदय हो कर जन समुदाय के दुःखों को विनाश कर देगा परन्तु ऋषि के तप से उत्पन्न हुए बादलों ने ही वैदिक भानू को छिपा लिया जिस से फिर दीपक की रोशनी से ही काम लेना पडा और ऋषि दयानन्द की पठन पाठन विधि पर ऋषि का नाम ले कर धन एकत्रित करने वालों ने ही लात मारदी और ऋषि की पठन पाठन विधि को वह लोग जिन्हों ने कोई वेद का अंगोपाङ्ग नहीं पढा वहभी यश के लोभ से असाध्य पठन पाठन विधि बना कर गुरुकुल के आ-चार्य और पठन विधि के जन्म दाता होगए ऋषि दयानन्द की पठन पाठन विधि तो निष्फल प्रतीत होने लगी तदनुसार पढ़ने से तो बुद्धू उत्पन्न होने की शङ्का उत्पन्न होने लगी कारण यह कि उस से पठन पाठन विधि छली कपटी ब्रह्मचारी नहीं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्पन्न होंगे सतो गुणी शान्ति प्रकृति शीलवान तपस्वी ब्रह्मचारी उत्पन्न करना यद्यपि ऋषि मुनि तथा स्वामी दयानन्द को इष्ट था परन्तु इस समय के वेद वेदाङ्ग की शिक्षा तथा स्वाध्यायादि वैदिक कर्मों से शून्य प्राकृत विषयों के अभिलाषी आर्यों को अभीष्ट नहीं उनकी इच्छा जापान, अमरीका तथा यूरुप के सदृश रजो गुणी ब्रह्मचारी उत्पन्न करना है यद्यपि काम, क्रोध, लोभ, मोहादि रजो गुण का फल हैं कोई रजोगुणी पुरुष चाहे कितना ही यत्न करे इनके बन्धन से मुक्त नहीं हो सकता यद्यपि रजोगुणि भडकीला चमकीला प्रतीत होता है परन्तु आत्मिक बल से सदा शून्य रहता हैं कारण यह है कि आत्मिक बल का हेतु जो ईश्वर विश्वास है वह रजो गुणि ऊसर भूमि में प्रथम तो अंकुर ही नहीं उत्पन्न करता यदि कारण विशेष से सत्सङ्ग पाकर कुछ अंकुर निकले भी तथापि फल लाना असम्भव है इस का कारण यह है कि रजो गुणि की वृत्ति सदा वहिर मुख होती है जिस से वह अधिकांश विषयि तथा लोकैषणा से परिपूर्ण होता है जहां लोकैषणा हो वहां ईश्वर प्रेम किस प्रकार हो सकता है जहां ईश्वर प्रेम नहीं वहां ईश्वर प्राप्ति के साधन जो मन्द बुद्धि मनुष्यों के लिये अत्यन्त कठिन है—

जहां ईश्वर प्राप्त के साधन नहीं वहां ईश्वर का ज्ञान निश्चयात्मिक नहीं हो सकता जहां ईश्वर ज्ञान नहीं हो उस मन में ईश्वर विश्वास कैसा परन्तु मूर्ख लोग चाहे अपना नाम

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्य रक्खें या हिन्दू उनकी बुद्धि तीक्ष्ण नहीं होती इस से वह प्रत्यक्ष वादि होने से शारीरिक वल सौंदर्य तथा ऊपर के वस्त्रों की चमक दमक को देख सकते हैं किन्तु आत्मिक बल को देखने और विचारने वाले संसार में वहुत ही न्यून हैं क्या इस से आत्मिक वल वालों की कोई हानी है कदापि नहीं संसारी जन आत्मिक वल वालों के वाह्य आडम्बर के योग्य सामग्री न देख कर उसे निर्वल विचार कर दबाने का विचार करते हैं किन्तु सारी शक्ति व्यय करने परभी कृत कार्य न होने से अन्त में पछताते हैं जिन लोगों ने विश्वामित्र जो एक वहुत वडा राजा था जिस की सेना भी अत्यन्त वलशालि थी) और (वशिष्ट का जो एक आत्मिक वल बाला योगि था) झगडा पड़ा है वह भली प्रकार से जानते हैं कि इस का परिणाम क्या हुआ क्या विश्वामित्र ने अपनी सेना तथा दूतों शस्त्रों के वल से वशिष्ट को पराजित कर लिया उत्तर मिलता है कदापि नहीं किन्तु विश्वामित्र को हार झकमार कर सारी सेना का नाश कराके अन्त में यही कहना—

धृक्वलं क्षात्रवलं व्राह्मण वले न तुल्यम्

अर्थात् व्राह्मणों के आत्मिक वल समक्ष क्षत्रियों के वाहु-वल को धिक्कार है क्या कोई कहसकता है कि आत्मिक वल के विना संसार का सुधार हो सकता है या रजो गुणि लोग देश की उन्नति कर सकेंगे यह आर्य समाज तथा भारत वर्ष का परम दुर्भाग्य है कि वह गुरुकुलों में ऋषि दयानन्द की पठ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठन विधि को छोड कर कलयुगी आचार्यों की विधि के अनुकूल पठन पाठन कराना चाहते हैं ऋषि दयानन्द बाल ब्रह्मचारी वेदों का विद्वान् सत्य प्रिय योगी था परन्तु कलयुगी आचार्य एक सामान्य वकील वेद शास्त्रों के नियमों से अनभिज्ञ आत्मिक बल से शून्य व्यक्ति है उसकी हठन पाठन विधि को ऋषि दयानन्द की पठन पाठन के स्थान पर नियत करना आर्य्यसमाज तथाब्रह्मचारियों के भावीजीवन के लिये अत्यन्त हानि कारक ही नहीं किन्तु मृत्यु का हेतु होगा महात्मा मनू ने सत्य कहा है ॥

अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूज्यानाञ्च व्यतिक्रमः

(अर्थ) जिस देश वाजनसमुदाय में पूजा के अयोग्य पुरुष पूजा को प्राप्त होते हैं जहां पूजा के योग्य तिरस्कार किये जाते हैं उस समुदाय में कलह अर्थात लडाई झगडे तथा भय और मृत्यु भी होती है क्या वस्तविक आर्य्य समाज का मृत्यु समय आगया है जो ऋषि दयानन्द की पठन पाठन विधि को त्याग कर — एक अयोग्य तथा असाध्य विधि जिस से ब्रह्मचारियों के जीवन को व्यर्थ नाश करने के अतिरिक्त अन्य कोई लाभ नहीं इस समयक्या कोई उत्पन्न हुआ है जो पचीस वर्षमें चारों वेदपढले पुराने समय में जब कि माता पिता दोनों विद्वान होते थे और ब्रह्मचारियों के संस्कार उत्तम होते थे उस समय भी लाखों में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से एक विद्यार्थि २५ वर्ष की आयु में चारों वेद पढ़ सकता था परन्तु इस समय जब कि माता पिता वैदिक सिद्धान्तों से अनभिज्ञ है उनसे ब्रह्मचारियों के हृदय में वैदिक संस्कार नहीं पड़ते हैं आचार्य्य भी उस प्रकार के नहीं मिलते ब्रह्मचारी भी सतोगुणि नहीं क्या एसी दशा में चारों वेदों का पढ़ा देना संभव है कदापि नहीं जिस दशा में २५ वर्ष में वेद ही नहीं पढ़ाये जासकते तो उसके साथ अंग्रेजी सायंस आदि पढादेने की प्रतिज्ञा कोई धर्मिक बुद्धिमान कर सकता है कदापि नहीं भारत भूमी ही क्या सारे संसार में लोग थोडे पुरुषार्थ से अधिक फल के अभिलाषी दीख पडते है यही कारण सारे मतों के फैलने का है जिस मत का आचार्य सब से सुगम रास्ता मुक्ति के लिये उपस्थित करदे उसी में अधिक मनुष्य प्रतीत होंगे यदि बुद्ध वैदिक कर्म उपासना और ईश्वर की आज्ञाओं का खण्डन न करता तो उस मत में इतने मनुष्य दृष्टि गोचर न होते यदि ईसा केवल विश्वास लाने से मुक्ति न बतलाता तो उस का इतना मत न बढता यद्यपि समझदार मनुष्य विचार सकते हैं कि मिथ्या प्रलो भन देना किसी धर्मात्मा का काम नहीं परन्तु जो लोग प्रत्यक्ष प्रिय और बाह्य अडम्बर से युक्त है उन का धर्म से सम्बन्ध ही क्या है पुराने समय में आचार्य्य का पद उस मनुष्य को दिया जाता था जो ब्रह्मचारी वेदों का जानने वाला सत्य भाषण करने वाला हो तथा परन्तु आज कलयुग में आचार्य पद की

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी दुर्दशा हो रही है कि जो पुरुष वेदों शास्त्रों का नाम न जानता हो लोभी तथा महा झूठा मृतकों के वस्त्रादि ग्रहण करने वाला महा ब्राह्मण तथा आचार्य कहाजाता है कथा पौराणिक लोग ही वेदों शास्त्रों से अनभिज्ञ झूठे पुरुषों को आचार्य मानते हैं नहीं नहीं किन्तु वाल ब्रह्मचारी वेद व्रत धारी ऋषि दयानन्द के अनुयायि कहाने वाले आर्य समाजी भी उसी चक्र में जाफँसे हैं—

वहांभी कलयुगी आचार्य ऋषि दयानन्द की पठन पाठन विधि को नाश करने के लिये उपस्थित हैं यह तो सब आर्य पुरुष जानते हैं कि पञ्जावी आर्यों ने एक आदर्श गुरुकुल खोला है जिस की प्रत्येक वात प्राचीन ऋषियों तथा ऋषि दयानन्द के सिद्धान्त के विरुद्ध है यदि विचार कर देखा जावे तो जिस प्रकार पंजावी नाई को राजा कहते हैं ऐसे ही इस आदर्श गुरुकुल की दशा है सज्जन पुरुष प्रमाण मांगेंगे इस लिये थोडे से प्रमाण उपस्थित किये जाते हैं।

गुरुकुल उस विद्यालय का नाम था जहां द्विज वनाए जाते थे पहिला जन्म तो माता पिता के सम्बन्ध से होता था दूसरा विद्या माता तथा गुरु पिता के सम्वन्ध से परन्तु यह गुरुकुल द्विज नहीं वना सकता कारण यह है कि इस में विद्या वेचीजाती है निर्धन पुरुषों की सन्तान इस में पढ ही नहीं सकती महात्मा मनु तथा अन्य ऋषियों ने भी लिखा है जो गुरु वेतन लेकर पढ़ाए और जो ब्रह्मचारी फीस देकर पढ़े वह दोनों यज्ञ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में बैठने के अधिकारी नहीं कारण स्पष्ट है कि जो विद्या दाम देकर खरीदीजावे वह माता नहीं हो सकती कारण यह है कि क्रय की हुई दासी होती है माता नहीं तथा जो बेचता है। वह व्यापारी होता है पिता नहीं अब आप विचार सकते हैं-कि जिस की विद्या माता और गुरु पिता न हो वह द्विज किस प्रकार कहला सकता है और जहां द्विज उत्पन्न न किये जावें उस का नाम गुरुकुल ऐसा है जैसे नाई का नाम राजा उसे विद्या की दुकान तो कह सकते हैं गुरुकुल किसी प्रकार कहना उचित नहीं जिस का नाम गुरुकुल रखना ही शास्त्रीय परिभाषा के विरुद्ध है तो आदर्श गुरुकुल प्रयोग तो अर्थ न जानने वाले मूर्खों के विना गौर कर सकता है।

प्राचीन गुरुकुलों में आचार्य वेदों शास्त्रों वेदाङ्गोंका जानने वाला सत्यवक्ता निर्लोभी हुआ करता था जिसकी सतो गुणि प्रकृति तथा सत्यभाषणादि गुणोंसे ब्रह्मचारियों में आत्मिकबल उत्पन्न हो जावे-परन्तु आदर्श गुरुकुल के आचार्य्य भी वैसे ही हैं कि जिन को वेदाङ्गों का ज्ञान तो कहां आर्य्य समाज के पहिले नियम तक का निर्भ्रान्त ज्ञान नहीं अंग्रेजी टीकाओं से उपनिषदों के सिद्धान्त गडवड हुयेहैं उन्हीं से आप उपनिषद पढाने वैठते हैं आप कैसे सत्य वादी हैं उसका प्रमाण उन्हीं के लेख से देते हैं (देखो दुखी दिल की पुरदर्द दास्तान पृष्ट ११

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपकी प्रकृति के विरुद्ध किस कदर अपने आत्मा की आवाज को दवाया –सज्जन पुरुषो जो पुरुष अपनी प्रकृति के विरुद्ध कर सकता है जो पुरुष अपने आत्मा की आवाज को दवा सकता है क्या वह आदर्श गुरुकुल का आचार्य्य होने योग्य है क्या उसके मिथ्या चरणों का ब्रह्मचारियों पर कोई असर नहीं पड़ेगा इस में आप की योग्यता की भीपोल खुल जाती है आत्मा की आवाज़ को दवाने का करता कौन है उस का उत्तर हो ही नहीं सकता यदि कहो मन तो वह करण है करता नहीं यदि कहो आत्मा तो आत्माश्रय दोष है– देखो पृष्ठ १५२ मैं ने अफसोस किया कि मैं बखेड़े में फसा (चुना च) एसा ही असली कारण को छिपा कर (अपनी आदत के बरखिलाफ) और मुफसल हालात असली से गुरेज कर के मैं ने रिपोर्ट करदी कि जगह नहीं मिलती देखो पृष्ठ १५९ और इस खौफ से कि मुबादा असली हाल खुलने पर या जाहिर होने पर आर्य्य भाइयों में जियादा खलबली मचे और लाला रलाराम जी जियादा तर दुखी हों और नई पार्टी की बुनियाद खड़ी हो जावे मैं ने कमाल बुजदिली से असल हालत को छिपा कर रिपोर्ट करदी उस प्रकार के अनेक प्रमाण हैं जिन से आदर्श कुल के आचार्य्य के झूठी चिट्ठी रिपोर्ट करने वाला असत्य वादि होना उस के अपने लेख से सिद्ध है भला जब इस प्रकृति और योग्यता के पुरुष आचार्य्य मुख्याधिष्ठाता महात्मा कहलाने वाले होतो इस गुरुकुल का नाम कलियुग में आदर्श गुरुकुल क्यों न हो जिन के आचार्य्य की यह दशा है ब्रह्मचा-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रियों की दशा का परमात्मा ही मालिक है हमने २ ब्रह्मचारी भोज धर्मवीर जा आदर्श गुरुकुल से निकले जिन के देखने से गुरुकुल की शिक्षा का पता लग गया है आप किसी ब्रह्मचारी को छ मास तक स्वतन्त्र छोड़ कर देखिये तब पता लगेगा की वकील आचार्य्य के गुणों का ब्रह्मचारियों पर कैसा असर पड़ा है यदि छमास की स्वतन्त्रता ने ब्रह्मचारियों को आचार्य्य का अनुयायि न बना दिया तो हम अपने को दोषि समझेंगे आर्य्य पुरुषो जिस समय किसी का विनाश काल आता है तो उस की बुद्धि नष्ट हो जाती है भारत वर्ष का दुर्भाग्य अभी दूर नहीं हुआ यदि अच्छा भाग्य होता तो क्या सम्भव था कि आर्य्य पुरुषो की बुद्धि विप्रीत हो जाती क्या सम्भव था कि आर्य्य लोग अपने परम धर्म वेदों को छोड़ कर अंग्रेजी के चक्र में जा पड़ते क्या संभव था कि जो आर्य्य समाज हट्टे कट्टे लोगों को दान देने से रोकता है वह गरीबों से रुपया एकत्रित करने धनियों को सुख भुगाने में न्याय करता है क्या सम्भव था कि जो आर्य्य समाज दूसरे मतों के आडम्बर को तोड़ना चाहता है वह स्वयम आडम्बर में फंस जाता आर्य्य पुरुषों की बुद्धि में दोष आजाना किसी भावि आपत्ति का प्रमाण दे रहा है

क्या ऋषि दयानन्द के विरुद्ध कार्य करके ऋषि के अभिष्ट को पूरा कर सकता है ऋषि का अभिष्ट क्या वेद विद्या तथा वैदिक धर्म का प्रचार कलयुगी आचार्य दीन अनाथों का

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

-न्तान को वेद विद्या तथा ब्रह्मचर्याश्रम से वञ्चित रखना चाहते है ।

यदि कोई कहे तो उसको बिगाड़ने में और संसार में यह प्रसिद्ध बात है कि चाहे कैसा उत्तम काम करें शत्रु मित्र सब ही के होते हैं बहुत से सज्जन कहेंगे कि धर्म के काम करने वाले का कोई शत्रु कैसे होगा ऐसे पुरुषों को विचार करना चाहिये कि ऋषि दयानन्द क्या था कि जिस के शत्रु आर्य-समाज मुरादाबाद के प्रधान मुन्शी इन्द्रमणि तथा लाला जग-न्नाथ मन्त्री तथा पं० भीमसेनादि हो गए चाहे कोई

उत्तम काम करे शत्रु अवश्य ही होंगे भेद केवल इतना होगा कि जिसके कुकर्मों से शत्रु होते हैं उसे चिन्ता वढजाती रातों को नींद नहीं आती और सुकर्मों से ईर्षा वश शत्रु होते हैं उसे वाहर से चाहे कितना ही दुःख दिया जावे निर्दोष होनेसे न तो उसे चिन्ता उत्पन्न होती है न भय-लज्जा, भय और चिन्ता पाप का फल है आर्य पुरुषों यदि आचार्य लोग ही आत्मा का हनन करें झूठ बोलें अपनी मिथ्या प्रशंसा तथा दूसरों की निन्दा करें तो ब्रह्मचारियों की क्या गति होगी जब से यह कलयुगी आचार्य समाज में प्रविष्ट हुए तब ही से आर्य समाज के अन्दर फूट के मेवा उत्पन्न हुआ जिस आर्य-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाज में सत्य के ग्रहण और झूठ परित्याग पर पूरा बल दिया गया था वह आर्य समाज झूठ का पुत्र बन गया जिस आर्य समाज का कर्त्तव्य प्रकृति की उपासना का परित्याग था वह कलयुगि आचार्य की कृपा से टका पन्थियों की मण्डली हो गया कथा आर्य समाज की यह आशा दुराशा मात्र नहीं कि ऐसे आचार्यों से वैदिक धर्म का प्रचार होगा यदि आर्य--समाज को अपना जीवन प्रिय है तो उसे अपने परम धर्म वेदों के पढ़ने पढ़ाने में लग जाना चाहिए यदि आर्य पुरुष संसार में वैदिक धर्म का प्रचार करना चाहते हैं तो बाल ब्रह्मचारी परोपकारी ऋषि दयानन्द की पठन पाठन विधि के अनुसार धनि तथा निर्धन सब को पढाने के लिये प्रत्येक जिले में एक वेफीस का गुरुकुल प्रत्येक ग्राम में एक पाठशाला खोलने का प्रयत्न करें यदि आर्य समाज फूट से बचकर वैदिक धर्म का प्रचार करना चाहता है तो ऋषि दयानन्द की आज्ञानुसार आर्य विद्या सभा आर्य धर्म सभा और आर्य राज सभा बना कर काम करें-और विदेशी विपरीत ज्ञान वाली रजो गुणि शिक्षा को परित्याग कर स्वदेशि शुद्ध ज्ञान वाली वेद विद्या के पढाने के दयानन्द वैदिक महा विद्यालय नीवरखें और ऐसे आचार्यों से जो अपने आत्मा और यथार्थ वस्तु के विपरीत लिखने के दोष से परिपूर्ण बतलाई हुई असम्भव तथा हानि कारक पठन पाठन विधि का परित्याग करें ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि आर्य्य समाज ने ऋषि दयानन्द की पठन पाठन विधि के अनुसार काम करना आरम्भ न किया और इसी मूर्खता के चक्र में चलता रहा तो समझ लेना चाहिये कि आर्य्य समाज की मौत बहुत नजदीक है जिस समय आर्य्य प्रति निधि सभा तथा कालिज वालों में झगडा हुआ था तब वैदिकधर्म प्रचार के द्वारा आर्य्यप्रतिनिधि सभा ने स्वीकार किया था कि आर्य्य प्रतिनिधि सभा विद्या सभा नहीं इस लिये शिक्षा जो कि विद्या सभा का काम है उसे आर्य्यप्रतिनिधि सभा को नहीं करना चाहिये किन्तु आर्य्यप्रति निधि सभा का उपदेशकों के द्वारा धर्म प्रचार करना है इसी पर वेद प्रचार निधि बताई गई थी परन्तु शोक है आर्य्य समाज

के अग्रगन्ता वे लोग होगए जिन का अपना कोई सिद्धान्त नहीं जिन को इतना भी याद नहीं रहता कि हमने सर्व साधारण के सामने क्या प्रतिज्ञा की जिन को प्रतिष्ठा पाने के अतिरिक्त धर्मा धर्म का विचार ही नहीं यदि आर्य समाज के सभासद बुद्धिमान होते तो इन कलयुगी आचार्य से पूछते कि तुम्हारे प्रधान होते हुए तो यह पास हुआ था कि आर्य समाज विद्या सभा नहीं इस का काम अङ्गरेजी शिक्षा देना नहीं फिर किस प्रकार छावा हाई स्कूल खोल कर आर्य्यसमाज को अङ्गरेजी शिक्षा में फंसा दिया कालिज को रुपया न मिले इस लिये अङ्गरेजी शिक्षा के विरुद्ध पुरुषार्थ करना और अपनी प्रतिष्ठा के लिये उसी अङ्गरेजी शिक्षा में आर्य समाजों के धन

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को व्यय करना क्या इस बात को सिद्ध नहीं करता कि समझ में कोई वस्तु न तो बुरी है और न कोई अच्छी केवल अच्छी बुरी की पहिचान आपने यह रख छोड़े हैं।

कि वही अङ्गरेजी शिक्षा यदि आप की आज्ञा से हो तो परम पवित्र और आर्यों का परम धर्म यदि दूसरों के अधिकार में हो तो महा पाप है यदि ऋषियों के सिद्धान्त के विरुद्ध गुरुकुल नाम रखकर दयानन्द एंग्लो वैदिक कालिज के मुकाबले के लिये फीस वाला कालिज खोले तो वह आदर्श गुरुकुल है सारे संसार का कर्तव्य है कि दीनों से दान लेकर धनियों की सन्तान को अङ्गरेजी पढाने के वास्ते आप को दें क्या आप किसी प्रमाण से सिद्ध कर सकते है कि धनियों की सन्तान को अङ्गरेजी पढाने के लिये दान लेना या देना धर्म है जिस प्रकार बल्लभ कुलियों के जाल में फसे हुए लोग अविद्या उन को भेंट देना धर्म समझते हैं ऐसे ही आप के विचित्र भेष को देख अविद्या से ग्रसित मूर्ख आर्य समाजी दान देते हैं क्या समझदार आर्य जो इस बात को जानता है कि वेदों का पढना पढाना और सुनना सुनाना आर्यों का परम धर्म है जो यह जानता है कि दान धनियों का निर्धनों को देना कहलाता है क्यों कि दान दया का फल है।

दया दीनों पर की जाती है कलयुगी आचार्य दान की प्रथा को पलट कर अर्थात् दीनों के दान से धनियों की सन्तान को स्वर्ग भोगाना चाहते है और वेदों की शिक्षा के

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम से रुपया एकत्रित करके अङ्गरेजी शिक्षा में लगाते हैं
क्या यह धोखा देना नहीं क्या यह विश्वास घात नहीं क
यह आर्य समाज की मौत का हेतु नहीं कि उन के दान
ऋषि दयानन्द के सिद्धान्त के अनुसार अनाथों और दी
के शिक्षा देने वाले फीस के गुरुकुलों का नाश किया अ
महा विद्यालय तोड़ने की चौकडी लोभ देकर बनाई ज
क्या यह दान वैसा ही फल देनेवाला न होगा जैसा कि ले
गाय की कुर्बानी के वास्ते देते हैं उस दान से गायमा
जाती है इस से वेद विद्या की शिक्षा का नाश कियाजाता
क्या वेद विद्या की शिक्षा नाश करने के लिये दान देना अ
पुरुषों का धर्म है या वेदों के पढने पढाने के वास्ते दे

धनियों का निर्धनों को देना धर्म है या निर्धनों का धनि
की सन्तान को स्वर्ग सुख भुगाने के लिये देना धर्म है
आर्य इस अविद्या में न फँस जाते और सबदान वेदों की शि
और वैदिक धर्म के प्रचार में व्यय करते तो आज सारे दे
वैदिक धर्म फैलगया होता हम नहीं कहते कि लोग धन
ने के वास्ते अङ्गरेजी न पढ़ें परन्तु वेदों की शिक्षा के ना
दान लेकर अङ्गरेजी शिक्षा में व्यय करना विश्वासघात
महा पाप है।

देखो भाग दूसरा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar